

श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी-चतुर्थ पु०

भट्टारक रत्नकीर्ति एवं व्यक्तित्व एवं कृति

एक ऐसी भाषा
लिखा है। वे
होंने प्रबन्ध
। और
या।
स्त्र



[संवत् १६३१ से १७०० तक होने वाले दस कवियों का परिचय,
मूल्यांकन तथा उनकी कृतियों का मूल पाठ]

दि



लेखक एवं सम्पादक :
डॉ० कस्तूरचन्द कासलीवाल

प्रकाशक :

श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी, जयपुर

श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी—एक परिचय

प्राकृत एवं संस्कृत के पश्चात् राजस्थानी एवं हिन्दी भाषा ही एक ऐसी भाषा है जिसमें जैन आचार्यों, भट्टारकों, सन्तों एवं विद्वानों ने सबसे अधिक लिखा है। वे मत् ५०० वर्षों से उसके भण्डार को समृद्ध बनाने में लगे हुए हैं। उन्होंने प्रबन्ध काव्य लिखे, खण्ड काव्य लिखे, चरित लिखे, रास, फागु एवं वेलियां लिखीं। और न जाने कितने नामों से काव्य निरन्तर हिन्दी साहित्य के भण्डार को समृद्ध बनाया : राजस्थान, मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, एवं देहली के सैकड़ों जैन शास्त्र भण्डारों में जैन कवियों की रचनाओं का विशाल संग्रह मिलता है। जिसमें से किन्हीं का नामोल्लेख राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों की ग्रन्थ सूचियों के पाँच भागों में हुआ है। इधर श्री महावीर क्षेत्र से ग्रंथ सूचियों के अतिरिक्त, राजस्थान के जैन सन्त व्यक्तित्व एवं कृतित्व, महाकवि दीनतराम कासलीवाल तथा टोडरमल स्मारक जवन से महापंडित टोडरमल पर मत् कुछ वर्षों में पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं लेकिन हिन्दी के विशाल साहित्य को देखते हुए ये प्रकाशन बहुत थोड़े लग रहे थे। इसलिये किसी ऐसी संस्था की कमी खटक रही थी जो जैन कवियों द्वारा निबद्ध समस्त हिन्दी कृतियों को उनके मूल्यांकन के साथ प्रकाशित कर सके। जिससे हिन्दी साहित्य के इतिहास में जैन कवियों को उचित स्थान प्राप्त हो तथा हाईस्कूल एवं कालेज के पाठ्यक्रम में इन कवियों की रचनाओं को भी कहीं स्थान प्राप्त हो सके।

स्वतन्त्रता संस्था की योजना—

इसलिये सम्पूर्ण हिन्दी जैन कवियों की कृतियों को 20 भागों में प्रकाशित करने के उद्देश्य से सन् 1977 में श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी नाम से एक स्वतन्त्र संस्था की स्थापना की गयी। साथ में यह भी निश्चय किया गया कि हिन्दी कवियों के 20 भागों की योजना पूर्ण होने पर संस्कृत, प्राकृत एवं अपभ्रंश के आचार्यों पर भी इसी प्रकार की सिरीज प्रकाशित की जावे। जिससे समस्त जैन आचार्यों एवं कवियों की साहित्यिक सेवाओं से जन सामान्य परिचित हो सके तथा देश के विश्व-विद्यालयों में जैन विद्या पर जो शोध कार्य प्रारम्भ हुआ है उसमें और भी गति आ सके।

श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी की हिन्दी योजना के अन्तर्गत निम्न २० भाग प्रकाशित करने की योजना बनायी गयी।

- | | |
|--|------------|
| १. महाकवि ब्रह्म रायमल एवं भट्टारक त्रिभुवनकीर्ति | (प्रकाशित) |
| २. कविवर ब्रूचराज एवं उनके समकालीन कवि | " |
| ३. महाकवि ब्रह्म जिनदास व्यक्तित्व एवं कृतिरत्न | " |
| ४. भट्टारक रत्नकीर्ति एवं कुमुदचन्द्र | " |
| ५. आचार्य सोमकीर्ति एवं ब्रह्म यशोधर | प्रेस में |
| ६. महाकवि वीरचन्द्र एवं महिचन्द्र | |
| ७. विद्याभूषण, ज्ञानसागर एवं जिनदास पाण्डे | |
| ८. कविवर रूपचन्द्र, जगजीवन एवं ब्रह्म कनूरचन्द्र | |
| ९. महाकवि भूधरदास एवं बुलाकीदास | |
| १०. जोधराज गोदीका एवं हेमराज | |
| ११. महाकवि चानतराय | |
| १२. पं० भगवतीदास एवं भास्व कवि | |
| १३. कविवर खुशालचन्द्र काला एवं अजयराज पाटनी | |
| १४. कविवर किशनसिंह, मथमल बिलाला एवं पाण्डे लालचन्व | |
| १५. कविवर बुधजन एवं उनके समकालीन कवि | |
| १६. कविवर नेमिचन्द्र एवं हर्षकीर्ति | |
| १७. शैलगा भगवतीदास एवं उनके समकालीन कवि | |
| १८. कविवर दौलतराय एवं छत्तदास | |
| १९. मनराम, मन्नासाह, लोहट कवि | |
| २०. २०वीं शताब्दि के जैन कवि | |

योजना तैयार होने के पश्चात् उसके क्रियान्वय का कार्य प्रारम्भ कर दिया गया। एक ओर प्रथम भाग 'महाकवि ब्रह्मरायमल एवं भट्टारक त्रिभुवनकीर्ति' के लेखन एवं सम्पादन का कार्य प्रारम्भ किया गया तो दूसरी ओर अकादमी की योजना एवं नियम प्रकाशित करवा कर समाज के साहित्य प्रेमी महानुभावों के पास संस्था सदस्य बनने के लिये भेजे गये। कितने ही महानुभावों से साहित्य प्रकाशन की योजना के सम्बन्ध में विचार विमर्श किया गया। मुझे यह लिखते हुए प्रसन्नता है कि समाज के सभी महानुभावों ने अकादमी की स्थापना एवं उसके माध्यम से साहित्य प्रकाशन योजना का स्वागत किया है और अपना अधिक सहयोग देने का आश्वासन दिया। सर्व प्रथम अकादमी की प्रकाशन योजना को जिन महानुभावों का

समर्पण प्राप्त हुआ उनमें सर्वे श्री स्व० साहु शान्तिप्रसाद जी जैन, श्री गुलाबचन्द जी गंगवाल रेनवाल, श्री अजितप्रसाद जी जैन ठकेदार देहली, श्रीमती सुदर्शन देवी जी छावड़ा जयपुर, प्रोफेसर अमृतलालजी जैन दर्जनाध्याय एवं डा० दरबारीलाल जी कोठिया बाराणसी, श्रीमती कोकिला सेठी जयपुर, श्रीमान् हनुमान बक्सजी गंगवाल कुली, पं० अनूपचन्द जी न्यायतीर्थ जयपुर के नाम उल्लेखनीय है। योजना की क्रियान्विति, प्रथम भाग के लेखन एवं प्रकाशन एवं अकादमी के प्रारम्भिक सदस्य बनने के अभियान में कोई १॥ वर्ष निकल गया और हमारा सबसे पहिला भाग जून १९७८ में ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी के शुभ दिन प्रकाशित होकर सामने आया। उस समय तक अकादमी के करीब १०० सदस्यों की स्वीकृति प्राप्त हो चुकी थी।

“महाकवि ब्रह्म रायमल्ल एवं भट्टारक त्रिभुवनकीर्ति” के प्रकाशित होते ही अकादमी की योजना में और भी अधिक महानुभावों का सहयोग प्राप्त होने लगा। जुलाई १९७९ में इसका दूसरा भाग “कविवर बूचराज एवं उनके समकालीन कवि” प्रकाशित हुआ जिसका विमोचन एक भव्य समारोह में हिन्दी के वरिष्ठ विद्वान् डा० सत्येन्द्र जी द्वारा किया गया गया : प्रस्तुत भाग में ब्रह्म बूचराज, ठक्कुरसी, छीहल, गारवदास एवं चतरुमल का जीवन परिचय, मूल्यांकन एवं उनकी ४४ रचनाओं के पूरे मूल पाठ दिये गये हैं।

अकादमी का तीसरा भाग महाकवि ब्रह्म जिनदास व्यक्तित्व एवं कृतित्व का विमोचन मई ८० में पांचवां (राजस्थान) में आयोजित पंच कल्याण प्रतिष्ठा समारोह में पूज्य क्षु० सिद्धसागर जी महाराज लाडनू वालों ने किया था। इस भाग के लेखक डा० प्रेमचन्द रावकाँ है जो युवा विद्वान हैं तथा साहित्य सेवा में जिनकी विशेष रुचि है। तीसरे भाग का समाज में जोरदार स्वागत हुआ और सभी विद्वानों ने उसकी एवं अकादमी के साहित्य प्रकाशन योजना की सराहना की।

अकादमी का चतुर्थ भाग “भट्टारक रत्नकीर्ति एवं कुमुदचन्द्र” पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। इस भाग में संवत् १६३१ से १७०० तक होने वाले भट्टारक रत्नकीर्ति एवं कुमुदचन्द्र के अतिरिक्त ६६ अन्य हिन्दी कवियों का भी परिचय एवं मूल्यांकन प्रस्तुत किया गया है। यह युग हिन्दी का स्वर्णयुग रहा और उसमें कितने ही ख्याति प्राप्त विद्वान हुये। महाकवि बनारसीदास, रूपचन्द, ब्रह्म गुलाल, ब्रह्म रायमल्ल, भट्टारक, अभयचन्द, समयसुन्दर जैसे कवि इसी युग के कवि थे।

पंचम भाग

अकादमी का पंचम भाग प्राचार्य सोमकीर्ति एवं ब्रह्म यशोधर “प्रेम में प्रकाशनार्थ दिया जा चुका है। तथा जिसके नवम्बर ८१ तक प्रकाशन की संभावना

है। सोमकीर्ति एवं यशोधर दोनों ही १६ वीं शताब्दि के उद्भट् विद्वान तथा राजस्थानी के कट्टर समर्थक थे।

सम्पादन में सहयोग

अकादमी के प्रत्येक भाग के सम्पादन में लेखक एवं प्रधान सम्पादक के अतिरिक्त तीन-तीन विद्वानों का सहयोग लिया जाता है। प्रस्तुत भाग के सम्पादक तीर्थंकर के यशोजी सम्पादक डा० नेगीचन्द्र जैन, युवा विद्वान डा० भागचन्द्र भावेन्दु दमोद एवं उदीयमान विदुषी श्रीमती सुशीला बाकलीवाल हैं। इस भाग के सम्पादन में तीनों विद्वानों का जो सहयोग मिला है, उसके लिए हम उनके पूर्ण आभारी हैं। अब तक अकादमी को जिन विद्वानों का सम्पादन में सहयोग प्राप्त हो चुका है उनमें डा० सत्येन्द्र जी, डा० दरबारीलालजी कोठिया वाराणसी, पं० अनूप चन्द जी न्यायतीर्थ जयपुर, डा० ज्योतिप्रसाद जी लखनऊ, डा० हीरालाल जी महेश्वरी जयपुर, पं० जितानन्द जी रा.जी जयपुर, डा० नरेन्द्र भानावत जयपुर, पं० शंकरलाल जी न्यायतीर्थ जयपुर के नाम उल्लेखनीय हैं।

नवीन सदस्यों का स्वागत

अब तक अकादमी के ३०० सदस्य बन चुके हैं। जिनमें ७० संचालन समिति में तथा २३० विशिष्ट सदस्य हैं। तीसरे भाग के प्रकाशन के पश्चात् सम्माननीय श्री रमेशचन्द्र जी सा० जैन पी०एस० मोटर कम्पनी देहली एवं आदर्शणीय श्री बीरेन्द्र हेगड़े धर्मस्थल ने अकादमी संरक्षक बनने की कृपा की है। श्री रमेशचन्द्रजी उदीयमान युवा उद्योगपति हैं। ये उदारमनस हैं तथा समाज सेवा में खूब मनोयोग से कार्य करते हैं। समाज को उनसे विशेष आशाएं हैं। उन्होंने अकादमी का संरक्षक बन प्राचीन साहित्य के प्रकाशन में जो योग दिया है उसके लिये हम उनके पूर्ण आभारी हैं। अकादमी के चौथे संरक्षक धर्मस्थल के प्रमुख धर्माधिकारी श्री बीरेन्द्र हेगड़े हैं। जो बीसवीं शताब्दि के अविनव चामुंडराय हैं, तथा समाज एवं साहित्य की सेवा करने में जिनकी विशेष रुचि रहती है। जो दक्षिण एवं उत्तर भारत की जैन समाज के लिये सेतु का कार्य करते हैं। उनके संरक्षक बनने से अकादमी गौरवान्वित हुई है।

इसी तरह गया (बिहार) के प्रमुख समाज सेवी श्री रामचन्द्रजी जैन ने सहायक बन कर साहित्य प्रकाशन में जो सहयोग दिया है उसके लिये हम उनके विशेष आभारी हैं। इनके अतिरिक्त संगीतरत्न श्री ताराचन्द्रजी प्रेमी फिरोजपुर भिरवा, श्री हीरालालजी रानीवाले जयपुर, राजस्थानी भाषा समिति के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री नाथूलाल जी जैन एडवोकेट श्री नन्दकिशोर जी जैन जयपुर, पं० गुलाब

चन्द जी दर्शनाचार्य जदलपुर ने संचालन समिति का सदस्य बन कर अकादमी के कार्य संचालन में जो सहयोग दिया है उसके लिये हम इन सभी महानुभावों के आभारी हैं। इसी तरह करीब ५० से भी अधिक महानुभावों ने अकादमी की विशिष्ट सदस्यता स्वीकार की है। उन सब महानुभावों के भी हम पूर्ण आभारी हैं। आशा है भविष्य में सदस्य बनाने की दिशा में और भी तेजी आयेगी जिससे पुस्तक प्रकाशन रहे कार्य में और भी गति अधिक आ सके।

सहयोग

अकादमी के सदस्य बनाने में वैसे तो सभी महानुभावों का सहयोग मिलता रहता है लेकिन यहां हम श्री ताराचन्द जी प्रेमी के विशेष रूप से आभारी हैं जिन्होंने अकादमी के साहित्यिक गतिविधियों में रुचि लेते हुए नवीन सदस्य बनाने के अभियान में पूरा सहयोग दिया है। इनके अतिरिक्त पं० मिलापचन्द जी शास्त्री जयपुर, डा० शरवारीलाल जी कोटिया वाराणसी, पं० सत्यन्धर कुमार जी सेठी उज्जैन, डा० भागचन्द जी भागेन्दु पनोह आदि का विशेष सहयोग प्राप्त होता रहता है जिनके हम विशेष रूप से आभारी हैं।

सन्तों का शुभाशीर्वाद

अकादमी को सभी जैन सन्तों का शुभाशीर्वाद प्राप्त है। परम पूज्य आचार्य विशासागर जी महाराज, एलाचार्य श्री विद्यानन्दजी महाराज, आचार्य कल्प श्री श्रुतसागर जी महाराज, १०८ गुनि श्री वर्धमान सागर जी महाराज, पूज्य झुल्लक श्री सिद्धसागर जी महाराज लाडनू वाले, भट्टगुरु जी श्री चारुकीर्ति जी महाराज भूडविदी एवं श्रवणबेलगोला आदि सभी सन्तों का शुभाशीर्वाद प्राप्त है।

अन्त में समाज के सभी साहित्य प्रेमियों से अनुरोध है कि वे श्री महावीर ग्रंथ अकादमी के स्वयं सदस्य बन कर तथा अधिक से अधिक मासों में दूसरों को सदस्य बनाकर हिन्दी जैन साहित्य के प्रकाशन में अपना योगदान देने का कष्ट करें।

डा० कस्तूरचन्द कासलीवाल
निर्देणक एवं प्रधान संपादक

कार्याध्यक्ष की कलम से

श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी के चतुर्थ भाग—भट्टारक रत्नकीर्ति एवं कुमुदचन्द्र भी सम्मानीय सदस्यों एवं पाठकों के हाथों में देते हुए मुझे असीव प्रसन्नता है। प्रस्तुत भाग में प्रमुख दो राजस्थानी कवियों का परिचय एवं उनकी कृतियों के पाठ दिये गये हैं लेकिन उनके साथ साथ से भी अधिक तत्कालीन कवियों का भी संक्षिप्त परिचय दिया गया है। हमने पता चलता है कि संवत् १६२१ से १७०० तक जैन कवियों ने हिन्दी में कितने विशाल साहित्य की सर्जना की थी। प्रस्तुत भाग के प्रकाशन से इतने अधिक कवियों का एक साथ परिचय हिन्दी साहित्य के इतिहास के लिये एक महत्वपूर्ण उपलब्धि मानी जावेगी। इस प्रकार जिस उद्देश्य को लेकर अकादमी की स्थापना की गई थी उसकी ओर वह आगे बढ़ रही है। सन् १९८१ के अन्त तक इसके अतिरिक्त दो भाग और प्रकाशित हो जावेंगे ऐसा मुझे पूर्ण विश्वास है। २० भाग प्रकाशित होने के पश्चात् सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य के अधिकांश अज्ञात, अल्प ज्ञात एवं महत्वपूर्ण जैन कवि प्रकाश में ही नहीं आवेंगे किन्तु सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य का कमबख्त इतिहास भी तैयार हो सकेगा जो अपने आप में एक महान् उपलब्धि होगी।

प्रस्तुत भाग के लेखक डा० कस्तूर चन्द कासलीवाल हैं जो अकादमी के निदेशक एवं प्रधान सम्पादक भी हैं। डा० कासलीवाल समाज के सम्मानीय विद्वान् हैं जिनका समस्त जीवन साहित्य सेवा में समर्पित है। यह उनकी ४१वीं कृति है।

अकादमी की सदस्य संस्था में निरन्तर वृद्धि हो रही है। तीसरे भाग के प्रकाशन पश्चात् श्रीमान् रमेशचन्द्र जी सा० जैन देहली ने अकादमी के संरक्षक बनने की महती कृपा की है उनका हम हृदय से स्वागत करते हैं। श्री रमेशचन्द्र जी समाज एवं साहित्य विकास में जो अभिवृत्ति ले रहे हैं अकादमी उन जैसा उदार संरक्षक पाकर स्वयं गौरवान्वित है। धर्मस्थल के आदरणीय श्री डी० धीरेन्द्र हेगड़े ने भी अकादमी का संरक्षक बन कर हमें जो सहयोग दिया है उसके लिये हम उनका अभिनन्दन करते हैं। उसी तरह गया निवासी श्री रामचन्द्रजी जैन ने उपाध्यक्ष बन कर अकादमी को जो सहयोग दिया है हम उनका भी हार्दिक स्वागत करते हैं। संचालन समिति के नये सदस्यों में सर्वश्री ताराचन्द्र जी सा० फिरोजपुर मिरका, महेन्द्रकुमार जी पाटनी जयपुर, हीरालाल जी शानीवाला जयपुर, नाथूलाल

जी जैन ऐडवोकेट जयपुर एवं श्री नन्दकिशोर जी सा० जैन जयपुर के नाम उल्लेखनीय है। हम सभी का हार्दिक स्वागत करते हैं। इसी तरह करीब ४० महानुभाव अकादमी के विशिष्ट सदस्य बने हैं। सभी माननीय सदस्यों का मैं हार्दिक स्वागत करता हूँ। इस तरह ८०० सदस्य बनाने की हमारी योजना में हमें ३५ प्रतिशत सफलता मिली है। मैं आशा करता हूँ कि भविष्य में अकादमी को समाज का और भी अधिक सहयोग मिलेगा।

हम चाहते हैं कि अकादमी के करीब १०० सेट देश-विदेश के विभिन्न विश्वविद्यालयों के हिन्दी विभागाध्यक्षों को निःशुल्क भेंट किये जायें जिससे उन्हें जैन कवियों द्वारा निबद्ध साहित्य पर शोध कार्य कराने के लिये सामग्री मिल सके। इसलिये मैं समाज के उदार एवं साहित्यप्रेमी महानुभावों से प्रार्थना करूँगा कि वे अपनी ओर से पाँच-पाँच सेट भिजवाने की स्वीकृति भिजवाने का कष्ट करें।

प्रस्तुत भाग के माननीय सम्पादकों—डा० नेमीचन्द जी जैन इन्दौर, डा० भागचन्द जी भागेन्दु दमोह एवं श्रीमती सुशीला जी बाकलीवाल जयपुर का भी आभारी हूँ जिन्होंने प्रस्तुत भाग का सम्पादन करके उसके प्रकाशन में अपना श्रम सहयोग दिया है। अन्त में मैं अकादमी के संरक्षकों श्री अशोककुमार जी जैन देहली, पूनमचन्द जी सा० जैन झरिया एवं रमेशचन्द जी सा० जैन देहली, अध्यक्ष माननीय सेठ कन्हैया लाल जी सा० जैन मद्रास, सभी उपध्यक्षों, संचालन समिति के सदस्यों एवं विशिष्ट सदस्यों का आभारी हूँ जिनके सहयोग से अकादमी द्वारा साहित्यिक कार्य सम्भव हो रहा है। डा० कासलीवाल सा० को मैं किन शब्दों में धन्यवाद दूँ, वे तो इसके प्राण हैं और जिनकी सतत साधना से यह कष्ट साध्य कार्य सरल हो सका है।

म लोवर राउडन स्ट्रीट
कलकत्ता २०

रत्नलाल गंगवाल

संपादकीय

अब यह लगभग निर्विवाद हो गया है कि हिन्दी-साहित्य के विकास का अध्ययन/अनुसंधान जैन साहित्य के अध्ययन के बिना संभव नहीं है। इस शताब्दी के तीसरे दशक में जब आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास लिख रहे थे तब, और आज जब भी कोई साहित्येतिहास के लेखन का प्रयत्न करता है तब उसके लिये यह असंभव ही होता है कि वह जैन साहित्य की अनदेखी करे और इस क्षेत्र में अपने कदम आगे रखे। राजस्थान कहने की भरभूभि है; किन्तु यहाँ रस की जो अजस्र/मधुर धारा प्रवाहित हुई है, वह अन्यत्र देखने को नहीं मिलती। जैन साहित्य की दृष्टि से राजस्थान के शास्त्र-मण्डार बहुत समृद्ध माने जाते हैं। इन मण्डारों में से बहुत सारे ग्रन्थों को तो सामने लाया जा सका है, किन्तु बहुत सारे हमारी असावधानी/प्रमाद के कारण नष्ट हो गये हैं। यह नष्ट हुआ या विलुप्त साहित्य हमारे सांस्कृतिक और आंचलिक रिक्त की दृष्टि से कितना महत्त्वपूर्ण था, यह कह पाना तो संभव नहीं है; किन्तु जो भी पर्व-दर-पर्व उधड़ता गया है, उससे ऐसा लगता है कि उसके बने रहने से हमें हिन्दी साहित्य के विकास की कई महत्त्व की कड़ियाँ मिल सकती थीं। इस दृष्टि से डॉ० करतूरचन्द्र कासलीवाल का प्रदेय उल्लेखनीय और अविस्मरणीय है। जैसे कोई नये टापू या द्वीप की खोज करता है और वहाँ के त्वारे खनिज-धन की जानकारी देता है ठीक वैसे ही डॉ० कासलीवाल जैसे मनीषी ने जैन शास्त्रागारों में जा-जा कर वहाँ की दुर्लभ/अस्तव्यस्त/बहुमूल्य पाण्डुलिपियों को सूचीबद्ध किया है और दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी से प्रकाशित कराया है। ये सूचियाँ न केवल जैन साहित्य के लिए अपितु संपूर्ण भारतीय साहित्य के लिए बहुमूल्य धरोहर है। पूरा काम इतनी भारी-भरकम है कि इसे किसी एक या दो आदमियों ने संपन्न किया है इस पर एकाएक भरोसा करना संभव नहीं होता तथापि यह हुआ है और बड़ी सफलता के साथ हुआ है। अतः हम सहज ही कह सकते हैं कि डॉ० कासलीवाल की भूमिका जैन साहित्य और हिन्दी साहित्य के मध्य सीधे संबन्ध बनाने की ठीक वैसे ही है जैसी कभी वास्कोडिगामा की रही थी, जिसने 15 वीं सदी के अन्त में भारत और यूरोप को समुद्री मार्ग से जोड़ा था।

हिन्दी साहित्य की भाँति ही हिन्दी भाषा की संरचना तथा उसके विकास का अध्ययन भी प्राकृत/अपभ्रंश की अनुपस्थिति में करना संभव नहीं है। ये दोनों भाषा-

स्तर जैन साहित्य से संबंधित हैं। इनके अध्ययन का मतलब होता है हिन्दी की भाषिक पृष्ठभूमि को समझने का वस्तुनिष्ठ प्रयास। अभी इस दृष्टि से हिन्दी भाषा का व्युत्पत्तिक अध्ययन शेष है, जिसके अभाव में उसके बहुत सारे शब्दों की देशज आदि कह कर अव्यवस्थायित छोड़ दिया जाता है; किन्तु जब प्राकृत/अपभ्रंश/राजस्थानी के विविध व्यावर्तनों का, उनमें उपलब्ध जैन साहित्य का, मौली/भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन किया जाएगा और कुछ प्रशिक्षित व्यक्ति इस दायित्व को संपन्न करेंगे तब हम यह जान पायेंगे कि एक निवृत्तमूलक विस्तार-परम्परा ने प्रवृत्तिपरक इलाके को क्या कितना योग दिया है? किस तरह हिन्दी-साहित्य के विधा-वैविध्य का विकास हुआ और किस तरह हिन्दी-भाषा अभिवृद्ध हुई। इसना ही नहीं बल्कि मानना पड़ेगा कि द्राविड़ भाषाओं के विकास में भी जैन रचनाकारों ने-विशेषतः साधुओं और भट्टारकों ने-विस्मयजनक योगदान किया था। एक तो हम इन सारे तथ्यों की सूक्ष्म छानबीन कर नहीं पाये, हैं, दूसरे कई बार हम अनुसंधान के क्षेत्र में भरपूर वस्तुनिष्ठा से काम करने/निष्कर्ष लेने में थक जाते हैं। हमारे इस सलूक से साहित्य के विकास को भलिभाँति समझने में कठिनाई होती है।

जहाँ तक इतिहास का संबंध है उसके सामने कोई घटना इस या उस जाति अथवा इस या उस संप्रदाय की नहीं होती। उसका सीधा सरोकार घटना के व्यक्तित्व और उसके प्रभाव से होता है, इसलिए जो लोग साहित्य के वस्तुमुख समीक्षक होते हैं वे किसी एक कालखण्ड को सिर्फ एक अकेला अलहदा कालखण्ड मान कर नहीं चल पाते वरन् तथ्यों का 'इन डेप्थ' विश्लेषण करते हैं और उसके सापेक्ष संबंधों/अन्तः संबंधों को खोजने का अनवरत यत्न करते हैं। कोई बीता 'कल' किसी उपस्थित 'आज' की ही परिणति होता है, और कोई प्रतीक्षित 'आज' किसी आगामी 'कल' में से ही जनमता है। आनेवाले कल की खोज-प्रक्रिया बड़ी कठिन होती है। एक तो जब तक हम वर्तमान को सापेक्ष नहीं देखते तब तक आगामी कल की सही अगवाणी नहीं कर पाते, दूसरे हम अपने अतीत यानी विगत कल की ठीक से व्याख्या भी नहीं कर पाते। प्रायः हमने माना है कि ये तीनों परस्पर विच्छिन्न चलते हैं, किन्तु दिखाई देते हैं कि ये जैसा कर रहे हैं, कर वैसा सकते नहीं हैं। कल/आज/कल एक त्रिकोण है बल्कि कहें, समन्निभुज है जिसकी आघार-भुजा आज है। जो कौम अपने 'आज' को नहीं समझ पाती, वह भ तो अपने विगत 'कल' में से कुछ ले पाती है और न ही प्रतीक्षित 'कल' को कोई स्पष्ट आकार दे पाती है।

धर्म/दर्शन/संस्कृति ही ऐसे आधार हैं, जो आगामी कल को एक संरक्षित आकृति प्रदान करने में समर्थ होते हैं। साहित्य अक्षर के माध्यम से आगामी कल

* राजस्थान के शास्त्र-भण्डारों की ग्रन्थ-सूची, चतुर्थ भाग, डा० वामुदेव शारण अग्रवाल, पृष्ठ 4.

को आज में रूपान्तरित करता है। मान कर चलें कि जो कृति आज आपको एक वेष्टन में अस्त-व्यस्त मिल रही है, उसका भी कभी कोई आज या ओर यह भी कभी किसी शिल्पी के भावना-गर्भ में कोई प्रतीक्षित कल रही थी। कितना रोमांचक है यह सब ! ऐसी हजारों हजार कृतियों को दुआ है डा० कासलीवाल ने ओर जाना है उनके "आज" को अपनी संवेदनशील अंगुलियों के जरिये। फिर भी कहना होगा कि अभी काम सधूना है और उसकी पूर्णता के लिए कितने ऐसे समीक्षक/पाठालोचक की आवश्यकता है, जो संवेदनशील होने के साथ ही एक निर्मम भाषाविज्ञानी भी हो - ऐसा, जो तथ्य को तथ्य मानने के अलावा और कुछ मानने की ही सहज तैयारी न हो। सामेक्ष दृष्टि से अभी साहित्य/भाषा के विविध स्तरीय अन्तः संबंधों के विस्लेषण/समीक्षण की जरूरत से भी हम मुंह नहीं मोड़ सकते।

श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी, जयपुर ने इस दिशा में मात्र रचनात्मक कदम ही नहीं उठाये हैं अतः 3 बहुमूल्य ग्रन्थों के प्रकाशन द्वारा कुछ ऐसे ठोस आधार प्रस्तुत कर दिये हैं, जो भारतीय वाङ्मय को अधिक गहराई में/से समझने की दिशा में बहुत उपयोगी भूमिका निभावेंगे। जब तक चारों ओर से हमारे पास हम तरह की सामग्री एकत्र/आकलित नहीं हो जाती, तब तक कोई निश्चित श्रवण हम इतिहास को नहीं दे सकते। इतिहास भी एक 'जेनरेटिव्ह' अस्तित्व है। इस संदर्भ में डा० कासलीवाल/महावीर ग्रन्थ अकादमी की भूमिका ऐतिहासिक है, और इसलिए अविस्मरणीय हैं।

हिन्दी/साहित्य का दुर्भाग्य रहा है कि उसका कोई एकीकृत/संश्लिष्ट अध्ययन अभी तक नहीं हो पाया है। उसके इस अध्ययन को - यदि कहीं शुरू हुआ भी है तो अंग्रेजी या राजनीति ने छिन्नभिन्न/बाधित किया है और उसे एक धारावाहिक प्रक्रिया नहीं बनने दिया है। हिन्दी-कोश-रचना का इतिहास इसका एक जीवन्त उदाहरण है। भारत की लोकभाषाओं का, वस्तुतः, अध्ययन/अनुसंधान जैसा होना चाहिए था' वैसा हो नहीं पाया है और कई दुर्लभ स्रोत अब नष्ट हो गए हैं। आंचलिक बोलियों के सुर (टोनेशन) का अध्ययन तो अब इसलिए असंभव हो गया है कि इनमें से बहुतों के प्रयोक्ता ही अब नहीं रहे हैं। लगता है यही हल अब हमारी पाण्डुलिपियों का होने वाला है।

हमारे शास्त्र-मण्डारों में सदियों से सुरक्षित साहित्य भी अब जीर्णोद्धार के लिए उद्ग्रीव/उत्कण्ठित है। डा० कासलीवाल ने तो अभी लिफाफे पर लिखे जाने वाले पत्तों की सूचियाँ दी हैं, असली पथ लिखाने का काम तो उनके अकादमी ने शुरू किया है। सूचियाँ मात्र 'इन्फॉर्मेशन' हैं, ग्रन्थ-संपादन उनके बाद का सोपान है। अकादमी की मुश्किलें बहुत स्पष्ट हैं। एक तो लोगों की मनोकृति ग्रन्थों

परसे अपना कब्जा छोड़ने की नहीं है, दूसरे उनके साथ अब एक खतरनाक व्यावसायिकता भी जुड़ गयी है। इन/ऐसी कठिनाइयों से जूझते हुए अकादमी ने जो कुछ किया है और जो कुछ वह अपने सीमित साधनों में करने के लिए संकल्पित है, उससे भारतीय संस्कृति और साहित्य का मस्तक गौरव से उँचा उठेगा इतना ही नहीं बल्कि राजस्थानी/हिन्दी साहित्य समृद्ध भी होगा।

विज्ञान की कृपा से आज ऐसे साधन उपलब्ध हैं कि हम दुष्प्राप्य पाण्डुलिपियों को अध्ययन के लिए सुरक्षित/व्यवस्थित प्राप्त कर सकते हैं, किन्तु मेरी समझ में अभी ऐसा कोई सुसमृद्ध अनुसंधान-केन्द्र जैनों का नहीं है जहाँ सारे ग्रन्थ एक साथ उपलब्ध हों या उनके उपलब्ध कर दिये जाने की कोई कारगर व्यवस्था हो ताकि कोई शोधार्थी बिना किसी बाधा/प्रसुविधा के कोई तुलनात्मक अध्ययन कर सके। श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, हमें विश्वास है, जल्दी ही उस अभाव को पूरा करेगी और हमारे दस स्वप्न को यथार्थ में बदल सकेगी।

प्रस्तुत ग्रन्थ अकादमी का चतुर्थ प्रकाशन है। प्रथम में महाकवि ब्रह्म रायमल्ल एवं भट्टारक विभूषणकीर्ति, द्वितीय में कविवर वृचराज एवं उनके समकालीन कवि और तृतीय में महाकवि ब्रह्म जिनदास, के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर विचार किया गया है। ये तीनों ग्रन्थ क्रमशः 1978, 79, और 1980 में प्रकाशित हुए हैं। इन ग्रन्थों में जो बहुमूल्य सामग्री संकलित/संपादित है, उससे साहित्य का भावी अध्येता/अनुसंधित्सु अनुगृहीत हुआ है। प्रस्तुत ग्रन्थ में भट्टारक रत्नकीर्ति एवं भट्टारक कुमुदचन्द्र के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर व्यापक/गहन अभिमुखता हुआ है। कहा गया है कि 1574-1643 ई० का समय भारतीय इतिहास में शान्ति समृद्धि का था। इस समय भट्टारकों ने साहित्य/समाज-रचना के क्षेत्र में एक विशिष्ट भूमिका का निर्वाह किया। भ. रत्नकीर्ति गुजरात के थे, किन्तु उन्होंने हिन्दी की उल्लेखनीय सेवा की। उनके प्रमुख शिष्य कुमुदचन्द्र हुए जिन्होंने जैन साहित्य/धर्म को तो समृद्ध किया ही, किन्तु हिन्दी साहित्य को भी विभूषित किया। ग्रन्थान्त में उनकी कृतियाँ संकलित हैं, जिनसे उन दिनों के हिन्दी-रूप पर तो प्रकाश पड़ता ही है दोनों गुरु-शिष्य की साहित्य सेवाओं का भी अनीभांति द्योतन हो जाता है। कुल मिलाकर महावीर ग्रन्थ अकादमी जो ऐतिहासिक कार्य कर रही है नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी; हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग; और हिन्दुस्तानी अकादमी, इलाहाबाद जैसी साधन-संपन्न संस्थाओं के समान, उससे उसकी सुगंध दिगदिगन्त तक फैलेगी और उसे समाज का/सरकार का/जन-जन का सहयोग सहज ही मिलेगा।

—डा० नेमीचन्द्र जैन

इन्दौर,
21 सितम्बर 1981

संपादक "तीर्थकर"
कृते सम्पादक मंडल

लेखक की ओर से

राजस्थानी एवं हिन्दी साहित्य इतना विशाल है कि सैकड़ों वर्षों की साधना के पश्चात् भी उसके पूरे भण्डार का पता लगाना कठिन है। उसकी जितनी अधिक खोज की जाती है, साहित्य सागर में से उतने ही नये नये रत्नों की प्राप्ति होती रहती है। जैन कवियों की कृतियों के सम्बन्ध में मेरी यह धारणा और भी सही निकलती है। राजस्थान, मध्यप्रदेश, देहली, एवं गुजरात के शास्त्र भण्डारों में अब भी ऐसी सैकड़ों रचनाओं की उपलब्धि होने की सम्भावना है जिनके सम्बन्ध में हमें नाम मात्र का भी ज्ञान नहीं है। यही वह दिग्दर्शक है जिससे जब हम पूरी तरह से ऐसी कृतियों की खोज कर चुके होंगे।

चतुर्थ भाग में संवत् १६३१ से १७०० तक की अवधि में होने वाले जैन कवियों की राजस्थानी कृतियों को लिया गया है। ये ७० वर्ष हिन्दी जगत के लिये स्वर्ण युग के समान थे जब उसे महाकवि सूरदास, तुलसीदास, बनारसीदास, रत्नकीर्ति, कुमुदचन्द्र, ब्रह्म रायमल्ल जैसे कवि मिले। जिनका समस्त जीवन हिन्दी विकास के लिये समर्पित रहा। उन्होंने जीवन पर्यन्त लिखने लिखाने एवं उसका प्रचार करने को सबसे अधिक महत्त्व दिया तथा नवीन काव्यों के सृजन के युग का निर्माण किया।

रत्नकीर्ति एवं कुमुदचन्द्र इसी युग के कवि थे। वे दोनों ही भट्टारक पद पर सुशोभित थे। समाज के आध्यात्मिक उपदेष्टा थे। स्थान स्थान पर विहार करके जन जन को सुपथ पर लगाना ही उनके जीवन का ध्येय था। स्वयं का एक बड़ा संघ था जो शिष्य प्रशिष्यों से युक्त था। लेकिन इतना सब होते हुये भी उनके हृदय में साहित्य सेवा की प्यास थी और उर्मी प्यास को बुझाने में वे लगे रहते थे। जब देश में भक्ति रस की धारा बह रही हो। देश की जनता उसमें झूम रही हो तो वे कैसे अपने आपको अछूता रख सकते थे इसलिये उन्होंने भी समाज में एक नये युग का सूत्रपात किया। राधा कृष्ण की भक्ति गीतों के रामान नेमि राजुल के गीतों का निर्माण किया और उनमें इतनी अधिक सरलता, विरह प्रवणता एवं कदण भावना भर दी कि समाज उन गीतों को गाकर एक नयी शक्ति का अनुभव करने लगा। जैन सन्त होते हुए भी उन्होंने अपने गीतों में जो दर्द भरा है, राजुल की विरह वेदना एवं मनोदशा का वर्णन किया है। वह सब उनकी काव्य प्रतिभा का परिचायक है। जब राजुल भक्त ही मन नेमि से प्रार्थना करती है तथा एक घड़ी के

लिये ही सही, आने की कामना करती है तो उस समय उसकी तड़फन सहज ही में सम्भक्त में आ सकती हैं। रत्नकीर्ति एवं कुमुदचन्द्र ने नेमि राजुल से सम्बन्धित कृतियाँ लिख कर उस युग में एक नयी गरम्भरा को जन्म दिया। उन्होंने नेमिनाथ का बारहमासा शिला, नेमिनाथ का गिरा, नेमिनाथ का हार, नेमिनाथ का हार और राजुल की विरह वेदना को व्यक्त करने वाले पद लिखे।

लेकिन भट्टारक कुमुदचन्द्र ने नेमि राजुल के अतिरिक्त और भी रचनायें निबद्ध कर हिन्दी साहित्य के भण्डार को समृद्ध बनाया। उन्होंने 'भरत बाहुबली छन्द' लिख कर पाठकों के लिये एक नये युग का सूत्रपात किया। भरत-बाहुबलि छन्द वीर रस प्रधान काव्य है और उसमें भरत एवं बाहुबली दोनों की वीरता का सजीव वर्णन हुआ है। इसी तरह कुमुदचन्द्र का शृषभ विवाहलो है। जिसमें आदिनाथ के विवाह का बहुत सुन्दर वर्णन दिया गया है। उस युग में ऐसी कृतियों की महती आवश्यकता थी। वास्तव में इन दोनों कवियों की साहित्य सेवा के प्रति समस्त हिन्दी जगत गदा आभारी रहेगा।

इन दोनों सन्त कवियों के समान ही उनके शिष्य प्रशिष्य थे। जैसे गुरु वैसे ही शिष्य। इन्होंने भी अपने गुरु की साहित्य रचि को देखा, जाना और उसे अपने जीवन में उतारा। ऐसे शिष्य कवियों में भट्टारक अभयचन्द्र, शुभचन्द्र, गरेश, ब्रह्म जयमहेश, श्रीपाल, सुमतिसागर एवं संयमसागर के नाम विशेषतः उल्लेखनीय हैं। इन कवियों ने अपने गुरु के समान अन्य निषयक पद एवं लघु काव्यों के निर्माण में गहरी रुची ली। साथ में अपने गुरु के सम्बन्ध में जो गीत लिखे वे भी सब हिन्दी साहित्य के इतिहास में निराले हैं। वे ऐसे गीत हैं जिनमें इतिहास एवं साहित्य दोनों का पुट है। इन गीतों में रत्नकीर्ति, कुमुदचन्द्र, अभयचन्द्र, एवं शुभचन्द्र के बारे में महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक सामग्री मिलती है। ये शिष्य प्रशिष्य भट्टारकों के साथ रहते थे और जैसा देखते जैसा अपने गीतों में निबद्ध करके जनता को सुनाया करते थे। प्रस्तुत भाग में ऐसे कुछ गीतों को दिया गया है।

भट्टारक रत्नकीर्ति, कुमुदचन्द्र, अभयचन्द्र एवं शुभचन्द्र के सम्बन्ध में लिखे गये गीतों से पता चलता है कि उस समय इन भट्टारकों का समाज पर कितना व्यापक प्रभाव था। साथ ही समाज रचना में उनका कितना योग रहता था। वे आध्यात्मिक गुरु थे। धार्मिक क्रियाओं के जनक थे। वे जहाँ भी जाते धार्मिक उत्सव आयोजित होने लगते और एक नये जीवन की धारा बहने लगती। मंगलगीत गाये जाते, तोरण और वन्दनवार लगाये जाते। उनके प्रवेश पर भव्य स्वागत किया जाता। और ये जैन सन्त अपनी अमृत बाणी से सभी श्रोताओं को सरोबार कर देते। सब ऐसे सन्तों पर किस समाज को गर्व नहीं होगा।

हिन्दी जैन कवियों की साहित्यिक सेवा का हिन्दी जगत के सामने प्रस्तुत करने के लिये जितना अधिक व्यापक अभियान चढ़ा जावेगा हिन्दी के विद्वानों, शोधार्थियों एवं विश्व विद्यालयों में उतना ही अधिक उनका अध्ययन हो सकेगा। इन कवियों की साहित्यिक सेवाओं के व्यापक प्रचार की दृष्टि से साहित्यिक गोष्ठियाँ होना आवश्यक है जिसमें उनके कृतित्व पर धुल कर चर्चा हो सके साथ ही में विभिन्न कवियों से उनका तुलनात्मक अध्ययन किया जा सके।

अद्वारक रत्नकीर्ति, कुमुदचन्द्र आदि कवियों की रचनाएँ राजस्थान के विभिन्न भण्डारों में संग्रहीत हैं। जिनमें शृषभदेव, डूंगरपुर, उदयपुर, जयपुर, अजमेर, आदि के शास्त्र भण्डार उल्लेखनीय हैं। छोटी रचनाएँ होने से उन्हें मुटकों अधिक स्थान मिला है। जो उनकी लोकप्रियता का शोचक है। तत्कालीन समाज में इनका व्यापक प्रचार था, ऐसा लगता है। इसलिये अभी बागड एवं गुजरात के शास्त्र भण्डारों में संग्रहीत मुटकों की विशेष खोज की आवश्यकता है जिससे उनकी और भी कृतियों की उपलब्धि हो सके।

आभार

पुस्तक के सम्पादन में डॉ० नेमीचन्द्र जैन इन्दौर, डॉ० भागचन्द्र भागेन्दु दमोह एवं श्रीमती सुशीला बाकलीवाल जयपुर ने जो सहयोग दिया है उसके लिये मैं उनका पूर्ण आभारी हूँ। इसी तरह मैं पं० अनूपचन्द्र जी न्यायवीर्य का भी आभारी हूँ जिनके सहयोग के अभाव में पुस्तक का लेखन नहीं हो सकता था।

पुस्तक के कुछ पृष्ठों को जब मैंने परम पूज्य आचार्य विद्यासागर जी महाराज को जबलपुर में दिखलाया तो उन्होंने अपनी हादिक प्रसन्नता प्रकट करते हुए भविष्य में इस ओर बढ़ने का आशिर्वाद दिया। इसलिये मैं उनका पूर्ण आभारी हूँ। मैं परम पूज्य आचार्य विद्यानन्द जी महाराज का भी आभारी हूँ जिन्होंने अपना शुभाशीर्वाद देने की सहती कृपा की है। अन्त में मैं श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी के सभी माननीय सदस्यों एवं पदाधिकारियों का आभारी हूँ जिन्होंने अकादमी की स्थापना में अपना आर्थिक सहयोग देकर समस्त हिन्दी जैन साहित्य को प्रकाशित करने में अपना महत्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया है।

जयपुर ८-६-८१

डा० कस्तूरचन्द कासलीवाल

विषयानुक्रमिका

क्र० सं०

पृष्ठ संख्या

१. श्री मद्राचीय ग्रन्थ अकादमी—एक परिचय ।	
२. कार्याध्यक्ष की कलम से	
३. सम्पादकीय	
४. लेखक की कलम से ।	
५. पूर्व पीठिका	१-४
६. संवत् १९३१ से १७०० तक होने वाले कवियों का परिचय	५-४१
(बनारसीदास ५-६, ब्रह्मगुलाल ६-११, मनराम ११-१३, पाण्डे रूपचन्द्र १३, हर्षकीर्ति १३-१४, कल्याणकीर्ति १४-१६, ठाकुर कवि १७, देवेन्द्र १७, जेनेन्द्र १७-१८, वर्धमान कवि १८, आचार्य जयकीर्ति १८-१९, पं० भगवतीदास १९-२०, ब्रह्म कपूरचन्द २०-२२, मुनि राजचन्द्र २२, पाण्डे जितदास २२-२३, पाण्डे राजमल्ल २३, छीतर ठोलिया २३, भट्टारक वीरचन्द्र २४, खेतसी २४, ब्रह्म अजित २४-२५, आचार्य नरेन्द्र कीर्ति २५, ब्रह्म रायमल्ल २५, जगजीवन २५-२७, कुंभरपाल २७-२८, सालिवाहन २८, सुन्दरदास २८-३०, परिहासचन्द ३०-३१, परिमल्ल ३१-३२, वादिचन्द्र ३२-३४, कनककीर्ति ३४-३५, विष्णु कवि ३५, हीर कलश ३५-३६, समयसुन्दर ३६, जिनराज सूरि ३६, दामो ३७, कुशललाभ ३७, मानसिंह मान ३७-३८, उदयराज ३८-३९, श्रीसार ३९, शशिमहर्भगन्द ३९, सहजकीर्ति ३९-४०, हीरानन्द सुकीम ४०-४१,	
७. भट्टारक रत्नकीर्ति	४२-५५
८. भट्टारक कुमुदचन्द्र	५५-७४
९. शिष्य प्रशिक्ष्य	७४-१२०
भट्टारक अभयचन्द्र ७४-८०, भट्टारक शुभचन्द्र ८०-८४ भट्टारक रत्नचन्द्र ८४-८८, श्रीपाल ८८-९५, ब्रह्म जयसागर ९५-९६ कविशर गणेश ९६-१०२, सुमनसागर १०२-१०५, दामोदर १०५-१०६, कल्याणसागर १०६, आशुदसागर १०६,	

- विद्यासागर १०६-१०७, ब्रह्म धर्मरुचि १०७-१०८,
 आचार्य चन्द्रकीर्ति ११०-११४, संयम सागर ११४-११५,
 धर्मचन्द्र ११५, राघव ११५-११६, मेघसागर ११६-११७,
 धर्मसागर ११७-११८, गोपालदास ११८, पाण्डे हमराज ११८-१२०,
 १०. भट्टारक रत्नकीर्ति की कृतियों के मूल पाठ १२१-१४८
 नेमिनाथ कांग १२१-१२६, बारहमासा १२६-१३३,
 पद एवं गीत १३४-१४८,
 ११. भट्टारक कुमुदचन्द्र की कृतियों के मूल पाठ १४९-२२३
 भरत-बाहुबली छन्द १४९-१६१, कृष्ण विवाहली १६२-१७३,
 नेमिनाथ का द्वादशमासा १७४-१७५, नेमीश्वर हमची १७५-१८१
 गीत एवं पद १८१-१८१, द्विन्दोलना गीत १८१-१८३,
 अण्वरति गीत १८३-१८४, वणजारा गीत १८५-१८६,
 शील गीत १८७-१८८, आरती गीत १८८-२००,
 चिन्तामणि पार्श्वनाथ गीत २००-२०१, श्रीपाली गीत २०१-२०३,
 गीत २०३-२०४, गुरुगीत २०४-२०५, दशवक्त्रणि धर्म व्रत गीत २०६
 व्यसन सातगुरु गीत २०६-२०७ अठाई गीत २०७-२०८,
 भरतेश्वर गीत २०८-२०९, पार्श्वनाथ गीत २०९-२१०,
 अंघोलडी गीत २१०-२११, जीबीस तीर्थकर देह प्रमाण चौपई २११-२१४
 श्री गीतमस्वामी चौपई २१४-२१५, संकटहर पार्श्वनाथ विनती २१५-२१७
 लोडण पार्श्वनाथनी विनती २१७-२१८,
 जिनवर विनती एवं पद २१८-२२३,
 १२. चन्दागीत (अभयचन्द्र) २२४-२२५, पद । शुभचन्द्र) २२५-२२६,
 शुभचन्द्र हमची (श्रीपाल) २२६-२२८, प्रभाति (श्रीपाल) २२८-२२९,
 प्रभाति (गणेश) २२९, प्रभाति (सयमसागर गीत २२९-२३०,
 नेमिश्वर गीत (धर्मसागर) २३१, गीत (धर्म सागर) २३२,
 कुमुदचन्द्रनी हमची (गणेश) २३३-२३४,
 १३. अर्वाशिष्ट—ब्रह्म जयराज २३४, शान्ति दास २३५,
 १४. अनुक्रमशिकायें—२३७ से

पूर्व पीठिका

सं० १६२१ से १७०० तक का काल देश के इतिहास में शांति एवं समृद्धि का काल माना जाता है। इन वर्षों में तीन मुगल सम्राटों का शासन रहा। सं० १६२१ से १६६२ तक अकबर बादशाह ने, सं० १६६२ से १६८५ तक जहांगीर ने, तथा वर्ष सं० १६८५ से १७०० तक शाहजहाँ ने देश पर शासन किया। राजनीतिक संगठन, शान्ति तथा सुव्यवस्था की दृष्टि से अकबर का शासन देश के इतिहास में सर्वथा प्रशंसनीय माना जाता है। इसी तरह जहांगीर एवं शाहजहाँ के शासन काल में भी देश में शान्ति एवं पारस्परिक सद्भाव का वातावरण बना रहा। अकबर का राज-दरबार कवियों, विद्वानों, संगीतज्ञों एवं कला प्रेमियों से अलंकृत था। उस युग में कला की सर्वांगीण उन्नति होने के साथ साथ हिन्दी कविता भी अपने उत्कृष्ट विकास को प्राप्त हुई। महाकवि सूरदास एवं तुलसीदास दोनों ही अकबर के शासन काल में हुए। इनके अतिरिक्त स्वर्ण सङ्कर के दरबार में भी कितने ही हिन्दी के प्रसिद्ध कवि थे जिनमें नरहरी, तानसेन एवं रहीम के नाम उल्लेखनीय हैं। हिन्दी के प्रसिद्ध जैन कवि बनारसीदास अकबर एवं जहांगीर के शासन काल में हुए। जिन्होंने अपनी अश्रकथानक नामक जीवन कथा में दोनों ही बादशाहों के शासन की प्रशंसा की है। वे अकबर के शासन से इतने प्रभावित थे कि जब उन्हें बादशाह की मृत्यु के समाचार मिले तो वे स्वयं मूर्छित हो गये और सम्राट के प्रति अपनी गहरी संवेदना प्रकट की।

इन ७० वर्षों में देश में भट्टारक युग भी अपने चरमोत्कर्ष पर था। राजस्थान में एक ओर भट्टारक चन्द्रकीर्ति तथा भट्टारक देवेन्द्रकीर्ति के आभेर, अजमेर, नागौर, आदि नगरों में केन्द्र थे तो बागड़ प्रदेश भट्टारक सकलकीर्ति की परम्परा में होने वाले भट्टारक सुमतिकीर्ति, गुणकीर्ति तथा भट्टारक लक्ष्मीचन्द की परम्परा में होने वाले भट्टारक रत्नकीर्ति, कुमुदचन्द्र अपने समय के प्रमुख जैन सन्त माने जाते थे। इन भट्टारकों के कारण सारे देश में एवं विशेषतः उत्तर भारत में जैनधर्म की प्रभावना एवं उसके संरक्षण को विशेष बल मिला। उस समय के वे सबसे बड़े सन्त थे जिनका समाज पर तो पूर्ण प्रभाव था ही किन्तु तत्कालीन शासन पर भी उनका अच्छा प्रभाव था। शासन की ओर से उनके विहार के अवसर पर उचित प्रयत्न ही नहीं किया जाता था किन्तु उनका सम्मान भी किया जाता था। शासन

में उनके इस प्रभाव ने भट्टारक संस्था के प्रति जन साधारण में बड़ा एवं आदर के भाव जागृत करने में महारा योग दिया। इन भट्टारकों के प्रत्येक नगर या गांव में केन्द्र होते थे जिनमें या तो उनके प्रतिनिधि रहते थे या जब कभी वे विहार करते तो वहां कुछ दिन ठहर कर समाज को धार्मिक एवं सामाजिक क्षेत्र में दिशा निर्देशन देते थे। वे धार्मिक विधि विधान कराते एवं पंच कल्याणक प्रतिष्ठा के प्रतिष्ठाचक्र बन कर उसकी पूरी विधि सम्पन्न कराते। धार्मिक क्षेत्र में उनका प्रखण्ड प्रभाव था। समाज के सभी वर्गों में उनके प्रति सहज भक्ति थी। राजस्थान, गुजरात, दिल्ली, हरियाणा, मध्यप्रदेश के अधिकांश क्षेत्र में भट्टारक संस्था का पूर्ण प्रभाव था। वास्तव में समाज पर उनका पूर्ण वर्चस्व था। जब वे किसी ग्राम या नगर प्रवेश करते तो सारा समाज उनके स्वागत में पलक पावड़े बिछा देता था और गद्गद होकर उनकी भक्ति एवं अर्चना में लग जाता था।

१७वीं शताब्दी अर्थात् सं० १६३१ से १७०० तक का ७० वर्षों का काल हमारे देश में भक्ति काल के रूप में माना जाता है। उस समय देश के सभी भागों में भक्ति रस की धारा बहने लगी थी। इस काल में होने वाले महाकवि सूरदास एवं तुलसीदास ने भी सारे देश को भक्ति रूपी गंगा में डुबोया रखा और अपना सारा साहित्य भक्ति साहित्य के रूप में प्रसारित किया। एक ओर सूरदास ने अपनी कृतियों में भगवान कृष्ण के गुणों का व्याख्यान किया तो दूसरी ओर तुलसीदास ने राम काव्य लिखकर देश में भगवान राम के प्रति भक्ति भावना को उभारने में योग दिया। ये दोनों ही महाकवि समन्वयवादी कवि थे। इसलिये तत्कालीन समाज ने इनको खूब प्रश्रय दिया और राम एवं कृष्ण की भक्ति में अपने आपको डुबोया रखा।

जैनधर्म निवृत्ति प्रधान धर्म है। उसे त्याग धर्म माना जाता है। इसलिये जैनधर्म में जितनी त्याग की प्रधानता है उतनी ग्रहण की नहीं है। उसमें आत्मा को परमात्मा बनाने का लक्ष्य ही प्रत्येक मानव का प्रमुख कर्तव्य माना जाता है। तीर्थंकर मानव रूप में जन्म लेकर परम पद प्राप्त करते हैं उनके साथ हजारों लाखों सन्त उन्हीं के मार्ग का अनुसरण कर निर्वाण प्राप्त करके जीवन के अन्तिम लक्ष्य को प्राप्त करते हैं। इसलिये जैनधर्म में भक्ति को उतना अधिक उच्च स्थान प्राप्त नहीं हो सका। यद्यपि अर्हद् भक्ति से अपार पुण्य की प्राप्ति होती है और फिर स्वर्ग की उत्तम गति मिलती है। संसारिक वैभव प्राप्त होता है लेकिन निर्वाण प्राप्ति के लिये तो भक्ति के स्थान निवृत्ति मार्ग को ही अपनाना पड़ेगा और तभी जाकर संसारिक बन्धनों से मुक्ति मिलेगी।

17वीं शताब्दि में जब सारा उत्तर भारत राम व कृष्ण की भक्ति में समर्पित

था, तब ऐसे समय में जैन समाज भी कैसे अछूता रहता। उस समय समाज में दो धाराएँ बहने लगी। एक अध्यात्म की ओर दूसरी भक्ति की। एक धारा के अनुयायी महाकवि जनार्दनदास जिन्होंने समयसार नाटक के माध्यम से अध्यात्म की लहर को जीवन दान दिया। स्थान-स्थान पर अध्यात्म सैनियाँ स्थापित होने लगी जिनमें बैठ कर आत्म-वर्चा करने में समाज का युवा वर्ग अत्यधिक रस लेने लगा। सांगानेर, आगरा, मुलतान जैसे नगर इन अध्यात्म सैनियों के प्रमुख केन्द्र थे। इन सैनियों में भेद-विजाग, आत्म रहस्य, निमित्त उपादान आदि विषयों पर चर्चाएँ होती थी। वास्तव में ये सैनियाँ सामाजिक संगठन की भी एक प्रकार से केन्द्र बिन्दु बन गई थी। दूसरी ओर मेवाड़, बागड़ एवं राजस्थान के अन्य नगरों में अर्हद् भक्ति की गंगा भी बहने लगी। तत्कालीन जैन कवि नेभिनाय को लेकर उसी तरह के भक्ति एवं शृंगार परक पदों की रचना करने लगे जिस तरह सुरदास एवं मीरा के पद रचे गये। इस तरह के साहित्य के निर्माण करने में भट्टारक रत्नकीर्ति एवं भट्टारक कुमुदचन्द्र का विशेष योगदान रहा। इन्होंने अर्हद् भक्ति की गंगा बहायी तथा आगे होने वाले कवियों के लिये दिशा निर्देश का कार्य किया।

हिन्दी जैन साहित्य के लिये संवत् १६३१ से १७०० तक का समय अत्यधिक प्रगतिशील रहा। इस ७० वर्षों में राजस्थानी एवं हिन्दी भाषा के जितने जैन कवि हुए हैं उतने इसके पहिले कभी नहीं हुए। डूँठाहड़, बागड़, आगरा, आदि क्षेत्र उनके प्रमुख केन्द्र थे। ऐसे राजस्थानी एवं हिन्दी जैन कवियों की संख्या साठ से भी अधिक हैं जिनके नाम निम्न प्रकार हैं:—

- | | |
|------------------------|-----------------------|
| १. महाकवि जनार्दनदास | २. ब्रह्म गुजाल |
| ३. मनराम | ४. पाण्डे रूपचन्द्र |
| ५. हर्षकीर्ति | ६. वात्स्यायनीकीर्ति |
| ७. ठाकुर कवि | ८. देवेन्द्र |
| ९. जैनन्द | १०. वर्धमान कवि |
| ११. आचार्य जयकीर्ति | १२. पं० भगवतीदास |
| १३. ब्र० कपूरचन्द्र | १४. मुनि राजचन्द्र |
| १५. पाण्डे जिनदास | १६. पाण्डे राजमन्न |
| १७. श्रीतर टोत्रिया | १८. भट्टारक घोरचन्द्र |
| १९. खेतसी | २०. ब्रह्म अजित |
| २१. आ० नरेन्द्र कीर्ति | २२. ब्र० रावमल्ल |
| २३. जगजीवन | २४. कुंभरपाल |
| २५. साजिवाहन | २६. सुन्दरदास |
| २७. परिहानन्द | २८. परिमल्ल |

- | | |
|-------------------------|------------------------|
| २२. बादिवन्द | ३०. कनककीर्ति |
| २१. विष्णुकवि | ३१. हीरकलश |
| २३. समयसुन्दर | ३४. जिनराज मुरी |
| २५. दामो | ३६. कुशललाभ |
| २७. मानसिंह भान | ३८. उदयरज |
| २९. श्रीसार | ४०. गणेश महानन्द |
| ४१. राजकीर्ति | ४१. हीरानन्द मुरी |
| ४३. हेमविजय | ४४. पदमराज |
| ४५. जयरज | ४६. भट्टारक रत्नकीर्ति |
| ४७. भट्टारक कुमुदचन्द्र | ४८. सांतिदास |
| ४९. भ० अभयचन्द्र | ५०. भ० शुभचन्द्र |
| ५१. भ० रत्नचन्द्र | ५२. श्रीपाल |
| ५३. भ० जय मागर | ५४. गणेश |
| ५५. सुगलिसागर | ५६. दामोदर |
| ५७. कल्याण सागर | ५८. आनंद मागर |
| ५९. बिद्यासागर | ६०. ब्रह्म धर्मरत्न |
| ६१. आचार्य चन्द्रकीर्ति | ६२. संयममागर |
| ६३. धर्मचन्द्र | ६४. राधव |
| ६५. मेघसागर | ६६. धर्मसागर |
| ६७. गोपावदास | ६८. पाण्डे हेमराज |

इस प्रकार ७० वर्ष में ६८ हिन्दी जैन कवियों का होता किसी भी जाति समाज एवं देश के लिये गौरव की वस्तु है। भारतवर्ष में जैन कवियों ने देश में हिन्दी कृतियों का धुआंधार प्रचार किया और हिन्दी भाषा में अधिक से अधिक लिखने का प्रयास किया। इन कवियों में महाकवि बनारसीदास, रूपचन्द्र, पाण्डे जिनदास, पाण्डे राजमल्ल, भट्टारक रत्नकीर्ति, एवं कुमुदचन्द्र तथा श्वेताम्बर कवि समयसुन्दर एवं हीरकलश तथा कुशललाभ के अतिरिक्त शेष कवि समाज के लिये एवं हिन्दी जगत के लिये अज्ञात में हैं। एक बात और महत्वपूर्ण है कि भट्टारक रत्नकीर्ति एवं कुमुदचन्द्र जैसे सन्त गुजरात वासी होने पर भी उन्होंने हिन्दी को अपनी रचनाओं माध्यम बनाया। यही नहीं इस भट्टारक परम्परा के अधिकांश विद्वान् निष्ठ प्रणियों ने भी इसी भाषा को अपनाया और उसमें पद, गीत जैसे सरल एवं लघु रचनाओं को प्राथमिकता दी। भट्टारक रत्नकीर्ति एवं कुमुदचन्द्र की परम्परा में होने वाले कवियों के अतिरिक्त शेष कवियों का संक्षिप्त परिचय निम्न प्रकार है :-

१-महाकवि बनारसीदास

बनारसीदास का जन्म संवत् १६४३ माघ शुक्ला ग्यारस रविवार की हुआ था। इनके पिता का नाम खरगसेन था। प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् वे कभी कपड़े का, कभी जमाहरात का और कभी दूसरी चीजों का व्यापार करने लगे। लेकिन व्यापार में इन्हें कभी सफलता नहीं मिली। इसीलिये डा० मोतीचन्द ने इन्हें असफल व्यापारी के नाम से सम्बोधित किया है। दरिद्रता ने इनका कभी पीछा नहीं छोड़ा और अन्त तक वे उससे जूझते रहे।

साहित्य की ओर इनका प्रारम्भ से ही झुकाव था। सर्व प्रथम वे शृंगार रस की कविता करने लगे और इसी चक्कर में वे इस्कबाजी में भी फँस गये। अचानक ही इनके जीवन में मोड़ आया और उन्होंने शृंगार रस पर लिखी हुई 'नवरस पद्यावली' की पूरी पाण्डुलिपि गोमती में बहा दी। इसके पश्चात् वे अध्यात्मी बन गये और जीवन भर अध्यात्मी ही बने रहे। वे अपने समय में ही प्रसिद्ध कवि हो गये थे और समाज में इनकी रचनाओं की मांग बढ़ने लगी थी।

रचनाएं

बनारसीदास की निम्न रचनाएं मानी जाती हैं:—

- | | |
|-----------------|-------------------|
| १-नाममाला | २-नाटक समयसार |
| ३-बनारसी विलास | ४-अर्द्धकथानक |
| ५-मांझा | ६-मोह विवेक युद्ध |
| ७-नवरस पद्यावली | |

इसमें नवरस पद्यावली के अतिरिक्त सभी रचनाएँ प्राप्त होती हैं।

१. नाममाला

बनारसीदास ने चनंजय कवि की संस्कृत नाममाला और अनेकार्थकोश के आधार पर इस ग्रंथ की रचना की थी। यह पद्य बद्ध शब्द कोश १७५ दोहों में लिखा गया है। इसका रचनाकाल संवत् १६७० आश्विन शुक्ल दशमी है। नाम माला कवि की मौलिक रचना मानी जाती है।

२. नाटक समयसार

कवि की समस्त कृतियों में नाटक समयसार अत्यधिक महत्वपूर्ण रचना मानी जाती है। पाण्डे राजमल्ल ने समयसार कलशों पर बालाबोधिनी नामक हिन्दी टीका

लिखी थी। उसी टीका ग्रंथ के आधार पर बनारसीदास ने नाटक समयसार की रचना की थी जिसका रचनाकाल संवत् १६९३ आश्विन शुक्ला त्रयोदशी है। इस ग्रंथ में ३१० दोहा सौरठा, २४५ इकतीसाकवित्त ८६ चौपाई ३७ तईसा सवैया २० छप्पय १८ घनाक्षरी ७ अड्डिअ और ४ कुंडलियां इस प्रकार सब मिलाकर ७२७ पद्य हैं। नाटक समयसार में अज्ञानी की विभिन्न अवस्थाएं, ज्ञानी की अवस्थाएं, ज्ञानी का हृदय, संसार और शरीर का स्वप्न दर्शन, आत्म जागृति, आत्मा की अनेकता मनकी विभिन्न दौड़ एवं सप्त व्यसनों का सच्चा स्वरूप प्रतिपादित करने के साथ जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जेरा और मोक्ष इन सात तत्वों का काव्य रूप में चित्रण किया गया है।

३. बनारसी विलास

इस ग्रंथ में महाकवि बनारसीदास की विभिन्न रचनाओं का संग्रह है। यह संग्रह आगरा निवासी जगजीवन द्वारा बनारसीदास के कुछ समय पश्चात् विक्रम संवत् १७०१ चैत्र शुक्ला द्वितीया को किया गया था। बनारसीदास की अन्तिम कृति “कर्म प्रकृति विधान” र. का. सं. १७०० चैत्र शुक्ला द्वितीया भी इस विलास में मिलती है। विलास में संग्रहीत रचनाओं के नाम निम्न प्रकार हैं:—

१. जिनसहस्रनाम, २. सूक्ति मुक्तावलि, ३. ज्ञान वाक्य, ४. वेद निर्णय पंचासिका, ५. शलाका पुरुषों की नामावली, ६. मार्गणा विचार, ७. कर्म प्रकृति विधान, ८. कल्याण मन्दिर स्तोत्र, ९. साधु वन्दना, १०. मोक्ष पैडी, ११. करम छत्तीसी, १२. ध्यान बत्तीसी, १३. अध्यात्म बत्तीसी, १४. ज्ञान पच्चीसी, १५. शिव पच्चीसी, १६. भवसिन्धु चतुर्दशी, १७. अध्यात्म फाग, १८. सोलह तिथि, १९. तेरह काठिया, २०. अध्यात्म गीत, २१. पंचपद विधान, २२. सुमति देवी का अष्टोत्तर शत नाम, २३. शारदाष्टक, २४. नवदुर्गा विधान, २५. नाम निर्णय विधान, २६. नवरत्न कवित्त, २७. अष्ट प्रकारी जिनपूजा, २८. दश दान विधान, २९. दश बोल ३०. पहेली, ३१. प्रश्नोत्तर दोहा, ३२. प्रश्नोत्तर माला, ३३. अवस्थाष्टक, ३४. षटदशनाष्टक, ३५. चातुर्वर्ण, ३६. अजितनाथ के छंद, ३७. शान्तिनाथ जिनस्तुति, ३८. नवसेना विधान, ३९. नाटक समयसार के कवित्त, ४०. फुटकर कवित्त, ४१. गोरखनाथ के वचन, ४२. वैद्य आदि के भेद, ४३. परमार्थ वचनिका, ४४. उपादान निमित्त की चिट्ठी, ४५. निमित्त उपादान के दोहे, ४६. अध्यात्म पद, ४७. परमार्थ हिंडोलना, ४८. अष्टपदी मल्हार, ४९. चार नवीन पद।

उक्त समस्त रचनाओं में हमें महाकवि बनारसीदास की बहुमुखी प्रतिभा काव्य कुशलता एवं अगाध विद्वता के दर्शन होते हैं। विलास की अधिकांश रचनाएं

किसी न किसी रूप में अध्यात्म विषय से श्रोत प्रोत हैं। कवि आत्मा और परमात्मा के गुणगान में इतने विभोर हो गये थे कि उनका प्रत्येक शब्द अध्यात्म की छाया लेकर निकलता था।

४. अर्द्धकथानक

यह कवि द्वारा लिखा हुआ स्वयं का जीवन चरित्र है। कवि ने इसमें अपने ५५ वर्ष की जीवन घटनाओं को सही रूप में उपस्थित किया है। इसमें संवत् १६९५ तक की सभी घटनाएँ आ गई हैं। अर्द्धकथानक में तत्कालीन शासन अवस्था एवं सामाजिक स्थिति का भी अच्छा परिचय मिलता है। इसमें सब मिला कर ६७३ चौपई तथा दोहे हैं।

५. मोहविवेक युद्ध

यह एक रूपक काव्य है जिसका नायक विवेक एवं प्रति नायक मोह है। दोनों में विवाद होता है और दोनों ओर की सेवाएँ सजकर युद्ध करती हैं। अन्त में विवेक की जीत होती है। वर्णन करने की शैली एवं नायक प्रतिनायक का संवाद सरल किन्तु गम्भीर अर्थ लिये हुए है।

६. भांझा

भांझा कवि की ऐसी कृति है जिसका संग्रह बनारसी विलास में नहीं मिलता है। यह उपदेशात्मक कृति है जिसमें केवल १३ पद्य हैं। कवि ने अपने नाम का प्रथम, चतुर्थ एवं तेरहवें पद्य में उल्लेख किया है। रचना नवीन है इस लिये पाठकों के रसास्वादन के लिये पूरी रचना ही दी जा रही है।

माया मोह के तु मतवाला तू विषया विषहारी
राग दोष पयो बान ठगो चार कषायन भारी
कुरम कुटुम्ब दोषा ही फायो मात तात सुत नारी
कहत दास बनारसी, अलप सुख कारने सो नर भव बाजी हारी ॥१॥
तू नर भो हार अकारज कीतो समझन रहीत्यो पासा।
मानस जनम अमोलिक हीरा, हार गयायो खासा।
दसै छप्पा ते मिलन दहेला, नर भव गत विचवासा ॥२॥

कासा मिले न नरभव गति विष, अण र गत विच जासी।
बाजीगर दे बाँदरवा गण, में मैं कर बिलवासी।

नहीं सुजोनि जनम कुल कोइ, जित बल झांती पासी,
 सो तेरो तेरो भई पर नवतरी, तब अमरक धरासी ॥२॥

कूचा कोटि मवासा कब लग, एक दिन परभव जाना ।
 जो जम धसे पार ले जावे, चलै न जोर धिगाणा ।
 दास बनारसी दुवे भारवे, जम वस अमर रंग न राणा ॥४॥

राणा रंक अमर चिर नाहीं, सब कोई चलन हारा ।
 भरी साह परमोले खाली जो जम चलसी सारा ।
 जो धरि आसो एक दिन भजसो, आयो अपनी बारा ।
 तेनु सोच नहीं पर भवरा, पाय बैठो पसारा ॥५॥

पाय पसारी बैठ न जूठी, तू भी चलण भाइ ।
 मात पिता गत बन्धु तेरी अलत न कोई सहाइ ।
 सुख विच खावण देस बसेगी, दुख विच कोन धुराइ ।
 भली बुरी संगति के लकती, जीतो मोती पाइ ॥६॥

झोली पाय चली कछु करनी, छिनह तूफा जेहा ।
 कंचन छांड के कचविडाजो, तू बियारी केहा ।
 खोटा खरा परख न जानो लखे न लाहा देता ।
 धगे खाली चलीयो ईवे, पिछे आहो जेहा ॥७॥

सुनहो बानी सुतगुखानी, तैं बसत अमोलह पाइ ।
 बीरज 'फोर' भयो बहभागी, कर परमाद न राइ ।
 जब लग पंथ न साधे, सिबदा, तेडी पुरी पर न काइ ।
 चेतन चेत समाचेतन का, सद्गुरु यी समुझाइ ॥८॥

सद्गुरु समुझावे तेरे हित कारन, मूरख समझ कि माही ।
 जिन राहे लोक लुटीदा, पवे तिना ही राही ।
 राग दोष पयो बान ठगी, रा सीधा उवाही ॥
 बहु चिरकाल लुटायो सेवा, गुण मूरख समझ कि माही ॥९॥

कदी न समझो सो कित कारन, मोह चमारा लाया ।
 झूठी झूठी में में करवा, अन्ध ले जनम गंवायो ।
 कामिन कनक दुहु सिर तेरे कोई मन्थ भलेरा पाया ।
 चुरा चुरा कनक ते गलीपा विच, कमला नाव धराया ॥१०॥

कमला होय केहा सान होया, सुरति नरहा काइ ।
चाँदह लाख चुरासी जोन बिच, दर दर करे सगाइ ।
हिक जोके हिक नवे सहेरे, भूरख दी मुरखाइ ।
पाप पुण्य कर पोष कबीला, अन्त न कोई सहाइ ॥१३॥

अन्त न कोई सहाइ तेरे, तू क्या पच पच मरवा ।
नरक निमोद दुःख सिर पर, अहमक मूल न मरवा ।
जन्म जनम विचहोय बिकाना, हथ बिधया देवरदा ।
काँई ममर भरवेली भाँदू मेरी मेरी करदा ॥१४॥

गज सुकुमाल सुणी जिहावाणी, सकल विषय तिन त्यागी ।
नमसकार कर नेमिनाथ को, भए मसान विरागी ।
तन बुरसा आमन बच कामा, सिध्दा पर तब कागी ।
कहत दास बनारसी अन्त गढ़, केवली सुनत बुध के रागी ॥१५॥

२. ब्रह्म गुलाल

ब्रह्म गुलाल १७वीं शताब्दि के हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वान थे । उनके गुरु का नाम भट्टारक जगभूषण था जो उस समय के विद्वान एवं लोकप्रियता प्राप्त भट्टारक थे । ब्रह्म गुलाल को उन्हीं की प्रेरणा से काव्य निर्माण में रुचि जाग्रत हुई और उन्होंने "कृपण जगद्वनहार" जैसी रचना लिखी ।^१

ब्रह्म गुलाल का जन्म रमरी और चन्दवार गांव के समीप टापू नामक गांव में हुआ था । डा. प्रेमसागर जैन ने इस गांव को वर्तमान में आगरा जिले में होना लिखा है ।^२ इस गांव के तीन ओर नदी बहती है । उस समय वहां का राजा कीर्तिसिंह था । उसी के राज्य में ब्रह्म गुलाल के घनिष्ठ मित्र मथुरामल रहते थे जो अपने कुल के सिरमौर एवं दान देने में सुदर्शन के समान थे ।

ब्रह्म गुलाल भेष बदल कर लोगों को प्रसन्न किया करते थे । एक बार जब उन्होंने सिंह का भेष धारण किया तो वे शेर की क्रिया करने लगे और एक राजकुमार को मार दिया । लेकिन जब राजकुमार के पिता को मुनि बन कर सम्बोधने

१. जगभूषण भट्टारक पाइ, करी ध्यान-अन्तरंगति आइ ।

ताकी सेवगु ब्रह्म गुलाल, कीजो कथा कृपण उर साल

२. हिन्दी जैन भक्ति काव्य और कवि

गये तो फिर सदा के लिये ही मुगि बन गये । इनकी अब तक निम्न रचनायें उपलब्ध हो चुकी है ।

१. जेपन क्रिया^१ (सं. १६६५) २. कृपण जमावन हार
३. धर्म स्वरूप ४. गुनवार १६६२
५. जलगालन क्रिया ६. जिवेक चौपई
७. कक्का बत्तीसी (१६९५) ८. गुलाल पच्चीसी
९. चौरासी जाति की जयमाल १०. वर्धमान समोसरन वर्णन
११. फटकर कवित्ता

उक्त सभी रचनायें राजस्थान के विभिन्न शास्त्र भण्डारों में उपलब्ध होती हैं । डा. प्रमसागर जैन ने इनकी केवल ६ रचनाओं के ही नाम गिनाये हैं ।

१. वर्धमान समोसरण वर्णन^२—यह इनकी प्रथम रचना मान्य होती है जिसकी उन्होंने संवत् १६२८ में हस्तिनापुर में समाप्त की थी जैसा कि निम्न पाठ में उल्लेख मिलता है—

सोलहसैं अठबीस में माध दस सुदी पेख ।
गुलाल ब्रह्म भनि नीत इती जयौ नंद को सीख ।
कुस देश हथनापुरी राजा विक्रम साह
गुलाल ब्रह्म जिनधर्म जय उपमा दीजे काह

२. जेपन क्रिया—इसका दूसरा नाम जेपन क्रिया कोश भी मिलता है । इस काव्य में जैनों की जेपन क्रियाओं का वर्णन मिलता है । इसकी रचना स्थान खालि-यर एवं रचना संवत् १६६५ कार्तिक बुदी ३ है । रचना सामान्यतः अच्छी है । इसमें कवि ने अपने गुरु भट्टारक जगभूषण का भी उल्लेख किया है ।^३

१. ग्रन्थ सूची भाग २ पृष्ठ संख्या ७
२. वही पृष्ठ संख्या ९८
३. शास्त्र भण्डार दिगम्बर जैन मन्दिर वर (राजस्थान)
४. ए जेपन विधि करहु क्रिया भवि पाप समूह भूरे हो
सोलहसैं पैसठि संवत्सर कार्तिक तीज अंधियारी हो ।
भट्टारक जग सुषण चेला ब्रह्म गुलाल विचारी हो
ब्रह्म गुलाल बिचारि बनाई गढ़ गोपाचल थान
क्षत्रपती चहु चक्र विराज साहि सलेम मुगलाने ॥

३. कृपण जगायन हार—इस लघु काव्य में क्षयकरी एवं लोभदत्त दो कृपणों की कथा है जिन्हें जिनेन्द्र भक्ति के कारण अपने पूर्व भव में किये हुए दुष्कर्मों से छुटकारा प्राप्त हो गया था । इसकी एक प्रति अलीगंज के शांतिनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर के शास्त्र भण्डार में संग्रहीत है । कवि ने कहा है कि प्रतिमा पूजन पुण्य का निमित्त कारण बनता है उससे आत्मा जानरूप में परिणमित होती है यही नहीं उसके दर्शनमात्र से ही क्रोध मान माया लोभ कषाय नष्ट हो जाती हैं ।^१

४. चौरासी जाति जयमाला—इसमें चौरासी जातियों का वर्णन दिया हुआ है । इसकी पाण्डुलिपि भट्टारकीय शास्त्र भण्डार अजमेर के गुटका संख्या १०१ में संग्रहीत है । जयमाला का प्रारम्भिक भाग निम्न प्रकार है—

जैन धर्म श्रेयन किया दया धर्म संयुक्त
इश्वर के कुल वंस में तीग जात उत्पन्न ।
भया महोच्च गेय को जूनागड गिरनार
जात चौरासी जैनमत जुरे छोहनी चार ॥

५. ककका बत्तीसी—ककारादि बत्तीस पद्यों में छन्दोबद्ध प्रस्तुत रचना संवत् १६१७ में समाप्त हुई थी । यह शास्त्र भण्डार हि जैन मन्दिर पाटोदियान जयपुर के एक गुटके में ३०-३४ पृष्ठ पर संग्रहीत है ।^२

इस प्रकार कवि की अधिकांश रचनायें चारित्र्य धर्म पर जोर देने वाली हैं । कवि का विस्तृत अध्ययन आगामी किसी भाग में किया जावेगा ।

३. मनराम

मनराम अथवा मग्ना माह १७वीं शताब्दी के प्रमुख हिन्दी कवि थे । वे कविवर बनारसीदासजी के समकालीन थे । मनराम विलास के एक पद्य में उन्होंने बनारसीदास का स्मरण भी किया है । उनकी रचनाओं के आधार से यह कहा जा सकता है कि मनराम एक उच्च अध्यात्म-प्रेमी कवि थे । उन्होंने या तो प्रध्यात्म रसकी गंगा बहाई या फिर जन साधारण के लिये उपदेशात्मक, अथवा नीति-

१. प्रतिमा कारण पुण्य निमित्त, बिनु कारण कारज नहिं मित ।
प्रतिमा रूप परिणव थायु, दोषादिक नहीं व्याप पायु ।
क्रोध लोभ माया बिनु मान, प्रतिमा कारण परिणव जान ।
पूजा करत होई यह भाज, दर्शन पाए भये कषाड ॥

२. राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों की ग्रन्थ सूची भाग-४-पृष्ठ ६७९

वाक्य लिखे हैं। कवि की अब तक अक्षरमाला, बड़ा कक्का, धर्म-सहेली, बत्तीसी, मनाराम-विलास एवं अनेक फुटकर पद आदि रचनाएं उपलब्ध हो चुकी है।

कवि हिन्दी के प्रौढ विद्वान थे इसीलिये इन की रचनाएं शुद्ध खड़ी बोली में मिलती हैं। जान पड़ता है कि कवि संस्कृत के भी अन्धे विद्वान थे, क्योंकि इन रचनाओं में संस्कृत शब्दों का भी प्रयोग मिलता है और यह भी बड़े वाचस्पत्य के साथ।

“मनराम विलास” कवि के स्फुट सर्वश्रेष्ठ एवं छन्दों का संग्रहमात्र है जिनकी संख्या ९६ है। इनके संग्रह कर्ता विहारीदास थे। वे लिखते हैं कि विलास के छन्दों को उन्होंने छांट करके तथा शुद्ध करके संग्रह किये हैं। जैसा कि विलास के निम्न छन्द से जाना जा सकता है—

यह मनराम किये अपनी मति अनुसार ।
 बुधजन सुनि कीज्यो छिमा लीज्यो अब सुधारि ॥९३॥
 जुगति गुराणी बूढ़ कर, किये कवित्त बनाय ।
 कछु न भेली गाँडिकी, जानहुं मन बच काय ॥९४॥
 जो इक चित्त पढ़े परुष, सभा मध्य परवीन ।
 बुद्धि बड़े संशय मिटे, सब होवे आधीन ॥९५॥
 मेरे चित्त में ऊपजी, गुन मनराम प्रकास ।
 सोधि धीनए एकठे, किये विहारीदास ॥९६॥

अक्षरमाला

इसमें ४० पद्य हैं जो सभी उपदेशात्मक हैं। भाव, भाषा एवं शैली की दृष्टि से रचना उत्तम कोटि की है। इसकी एक प्रति जयपुर में ठोलियो के मन्दिर के शास्त्र भण्डार के गुटका संख्या १३१ में संग्रहीत है। स्वयं कवि ने प्रारम्भ में अपनी लघुता प्रकट करते हुए अक्षरमाला प्रारम्भ की है—

मन बच कर या जोड़िकरे बंदो सारद माय रे ।
 गुण अक्षिर माला कहूँ सुणी चतुर सुख पाइ रे ॥
 भाई नर भव पायीं मिनसकी रे

अन्त में कवि बिना भगवद् भक्ति के हीरा के समान मनुष्य जन्म को यो ही गवां देने पर दुःख प्रकट करता है तथा यह भी कहता है कि इस कृति में उसने जो

कुछ लिखा है वह स्वयं के लिये है किन्तु दूसरे भी चाहें तो उससे कुछ शिक्षा ले सकते हैं—

हा हा हासी जिन करै रे, करि करि हासी आनी रे ।

हीरो जनम निवारियो, बिना भजन भगवानी रे ॥३७॥

पढ़ै गुण अर सरदहै रे, मन बच काय जो पी हारे ।

नीति गहै अति सुख सहै दुःख न व्यापे ताही रे ॥३८॥

भाई नर भव पायी भिनख कौ ॥

निज कारण उपदेश मेरे, कीयो बुधि अनुसार रे

कवियण कारण जिनधरो लीज्यो सब सुधारी रे ।

कवि का विस्तृत परिचय अकादमी के आगामी किसी भाग में दिया जावेगा ।

४. पाण्डे रूपचन्द्र

पाण्डे रूपचन्द्र १७वीं शताब्दि के प्रसिद्ध आध्यात्मिक विद्वान् थे । कविवर बनारसीदास ने अर्द्धकथानक में रूपचन्द्र नाम के चार व्यक्तियों का उल्लेख किया है । एक रूपचन्द्र के साथ वे अध्यात्म विषय पर चर्चा किया करते थे । दूसरे रूपचन्द्र से इन्होंने गोमटसार जीवकांड पढ़ा था । तीसरे रूपचन्द्र ने संस्कृत में समवसरण पाठ की रचना की थी तथा चौथे रूपचन्द्र ने नाटक समयसार की भाषा टीका लिखी थी । इन चारों में से दूसरे रूपचन्द्र ही पाण्डे रूपचन्द्र हैं । कविवर बनारसीदास ने उन्हें अपना गुरु स्वीकार किया है तथा पाण्डे शब्द से अभिहित किया है । पांडे एक उपाधि है जो पंडित शब्द का ही बिगड़ा हुआ शब्द है । भट्टारकों के शिष्य पशिष्य पांडे उपाधि से समाप्त होते थे ।

रूपचन्द्र की अधिकांश रचनाएँ अध्यात्मपरक हैं । उनकी कृतियों में परमार्थी दोहा शतक, गीत परमार्थी, मंगलगीत, नेमिनाथरास, खटोलना गीत के नाम उल्लेखनीय हैं । कवि का विस्तृत परिचय अकादमी के आगामी किसी भाग में दिया जावेगा ।

हर्षकीर्ति

हर्षकीर्ति १७वीं शताब्दि के चतुर्थ पाद के कवि थे । ये राजस्थानी संत थे तथा भट्टारकों से प्रभावित थे । इन्होंने अपनी अधिकांश रचनाएँ राजस्थानी भाषा

में निबद्ध की है। चतुर्गतिवेलि इनकी अत्यधिक लोकप्रिय रचना है। इस कृति का दूसरा नाम पंचमगीत वेलि भी मिलता है एक अन्य गुटके में इसका नाम छहलेस्था वेलि भी दिया हुआ है। इसकी रचना संवत् १६८३ की है। नेमिराजुलगीत, नेमीश्वर गीत, मोरडा, कर्म हिन्दोजना, बोंस तीर्थंकर जखडी, नेमिनाथ का बारहमासा, पाश्वनाथ छन्द आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। कवि के शास्त्र भंडारों में संग्रहीत गुटकों में कितने ही पद भी मिलते हैं जिनका संग्रह कर प्रकाशन होना आवश्यक है। कवि की एक और रचना भोपनक्रिया रास मिली है जो इन्दरगढ़ (कोटा) के शास्त्र भंडार में संग्रहीत है। रास का रचना काल संवत् १६८४ दिया हुआ है।

हृदयकीर्ति का विवेक परिष्कृत नहीं मिलता। लेकिन इनका चांदनपुर महावीर जी के संबंध में एक पद मिलता है इसलिये सम्भावना है कि इनका सम्बन्ध अमेर गादी के भट्टारकों से था। “चहुंगति वेलि” में इन्होंने अपने आपको मुनि लिखा है। इनकी रचनामें भक्ति परक एवं आध्यात्मिक दोनों ही तरह की है।

६. कल्याणकीर्ति

कल्याणकीर्ति १७वीं शताब्दी के प्रमुख जैन सत्त देवकीर्ति मुनि के शिष्य थे। कल्याणकीर्ति भीलोडा ग्राम के निवासी थे। वहां एक विशाल जैन मन्दिर था। जिसके बावन शिखर थे और इन पर स्वर्ण कलश सुशोभित थे। मन्दिर के प्रांगण में एक विशाल मानस्तम्भ था। इसी मन्दिर में बैठकर कवि ने “चारुदत्त प्रबन्ध” की रचना की थी जो संवत् १६६२ आसोज शुक्ला पंचमी को समाप्त हुई थी। कवि ने रचना का नाम “चारुदत्तरास” भी दिया है। इसकी एक प्रति जयपुर के दि० जैन मन्दिर पाठोदी के शास्त्र भंडार में संग्रहीत है। प्रति संवत् १७३३ की लिखी हुई है।

चारुदत्त राजानि पुन्य भट्टारक सुखकर सुखकर सोभाणि भति विचक्षण
आदिधारण केशरी भट्टारक श्री पद्मर्वादि चरण रज सेवि हारि ॥१०॥

ए सह रे गच्छनायक प्रणमि करि, देवकीरति मुनि निज गुह मय धरी।
धरि जित चरणे नमि “कल्याण कीरति” इमि भणि।
चारुदत्त कुमार प्रबन्ध रचना रचिमि आदर धणि ॥११॥

राय देश मध्य रे भिलोडज वंसि, निज रचनांसि रे हरिपुरि न हसी।

१. म्हारी रे मन मोरडा तू ती गिरनार्या उठि आय रे।
नेमिजी रस्यो युं कहियो राजमती दुख ये सौते ॥ म्हारी

हंस अमर कुमारनि, तिहां धनपति विलसए ।
प्रासाद प्रतिमां जिन नुति करि सुकृत संचए ॥१२॥

सुकृति सचिरे व्रत बहु आचरि, दान महोष्ठव रे जिन पूजा करि ।
करि उत्तम शान संभव चंद्र तिन अपाए ।
बावन सिखर सोहामणां ध्वज कनक कलश विसालए ॥१३॥

मंडप मध्य रे समवसरण सोहि, श्री जिनविब रे मनोहर मन मोहि ।
मोहि जन मन अति उन्नत मानस्थम्भ विसालए ।
तिहां विजयभद्र विख्यात सुन्दर जिन सासन रक्ष पालए ॥१४॥

तिहां चोमासि के रचना करि सोलवाणुगिरे ; १६६२: आसो अनुसरि ।
अनुसरि आसो शुक्ल पंचमी श्री गुरुचरण हृदयधरि ।
कल्याणकीरति कहि सज्जन भणो सुणो आदर करि ॥१५॥

दूहा

आदर ब्रह्म संघजीतणि विनयसाहित मुखकार ।
ते देखि नारदसनो प्रबंध रच्यो मनोहर ॥१॥

कवि की एक और रचना "लघु बाहुबलि बेलि" तथा कुछ स्फुट पद भी मिले हैं। इसमें कवि ने अपने गुरु के रूप में शांतिदास के नाम का उल्लेख किया है। यह रचना भी अच्छी है तथा इसमें ओट्टक छन्द का उपयोग हुआ है। रचना का अन्तिम छन्द निम्न प्रकार है—

भरतेश्वर आधीया नाम्युं निज वर शशि जी ।
स्तवन करी इम जंपए, हूं किकर तु ईस जी ।
ईश तुमनि छोड़ी राज मल्लनि आपीउ ।
इम कहीइ मंदिर, गया सुन्दर ज्ञान भुवने व्यापीउ ।
श्री कल्याणकीरति सोममूरति चरण मेवक इम भणि ।
शांतिदास स्वामी बाहुबलि मरय राखु मझ तह्य तणि ॥१॥

कवि की दूसरी बड़ी रचना श्रेणिक प्रबन्ध है जिसका रचना काल संवत् १७०५ है। जैसा कि रचना का नाम दिया हुआ है यह एक प्रबन्ध काव्य है जिसमें महाराजा श्रेणिक का जीवन चरित्र निबद्ध है। इसकी पाण्डुलिपि शास्त्र मंडार दि० जैन मन्दिर फतेहपुर (शेखावटी) में संग्रहीत है। इसका रचना स्थान बागड देश का

कोट नगर था जहां भगवान् आदिनाथ का दि० जैन मन्दिर था जिसमें बैठकर ही कवि ने इसका निर्माण किया था । प्रबन्ध का प्रारम्भिक अंश निम्न प्रकार है ।

श्री मूल संघ उदयाचलि, अमानन्द रवेराय ।

श्री सकलकीरति गुरु अनुक्रमि, नमश्री रामकीरति शुभकाय ॥४॥

तस पद कमल दीवाकर नमूँ, श्री पदमनंदी सुखकार ।

वादि वारण केशरि अकलंक एह अवतार ॥५॥

नीज गुरु देवकीरति मुनि प्रणमूँ चित्त धर नेह ।

मंडलीक महा श्रेणीकनो प्रबन्ध रचुँ गुण रेह ॥६॥

+ + + + +

नमी देवकीरति गुरु पाथ ॥

जिन देव रे भावि जिन पद्मनाभ जाणज्यो ।

कल्याण कीरति मुरीवर रच्यो रे ॥

ए श्रेणिक गुण मणिहार ॥

बागड विमल देश सोमतो रे । तिहां कोट नयर सुखकार ॥६॥

धनपति विमल बसे धर्या रे । धनवंत चतुर दयाल ॥

तिहीं आदि जिन भवन सोहामणू रे तशिका तोरण विशाल ॥

उत्सव होयि गावि माननी रे वाजे डोल मृदंग कंशाल ॥ जिन. भावि ॥

आदर ब्रह्मसिध जी तरारे । तहां प्रबंध रच्यो गुणमाल

संबत सतर पंचोतरि रे । आसा मुदि नीज रवि ॥

ए सांभलि गायि लिखि भावसु रे । ते तहि मंगलाचार ॥

जिन देवेरे भावि जिन पद्मनाभ जाणज्यो ॥१३॥

इनके अतिरिक्त बाहुबलिगीत, नेमिराजुलसंवाद, आदीश्वर वधावा, तीर्थंकर विनती एवं पार्श्वनाथ रासो है । पार्श्वनाथ रास का रचनाकाल सवत १६१७ है तथा इसकी पाण्डुलिपि जयपुर के पाण्डे लूणकरण जी के शास्त्र भण्डार में संग्रहीत है ।^१

कवि का विस्तृत मूल्यांकन किसी दूसरे भाग में किया जावेगा ।

७. ठाकुर कवि

साहू ठाकुर राजस्थानी कवि थे। अब तक इनकी तीन रचनाएँ उपलब्ध हुई हैं जिनके नाम हैं “शांतिनाथ चरित, महापुराण कलिका, सज्जन प्रकाश दोहा। इनमें शांतिनाथ चरित अष्टांश काव्य है जो पाँच संधियों में पूर्ण होता है। प्रस्तुत काव्य में सोलहवें शीर्षक पर शांतिनाथ का जीवन चरित वर्णित है। इसका रचना काल संवत् १६१२ भाद्रपद शुक्ला पंचमी है। अमेर इसका रचना स्थान है। उस समय अमेर पर राजा भार्गवसिंह एवं देहली पर बादशाह अकबर का शासन था।

कवि के पितामह साहू सील्हा और पिता का नाम खेता था। जाति खण्डेस-वाल एवं गोत्र लुहाडिया था। वे “लुवाउरिणपुर” लवाण के निवासी थे। वह नगर जन घन से सम्पन्न था। वहाँ चन्द्रप्रभस्वामी का मन्दिर था। कवि की धर्मपत्नी गुरुभक्त और गुणग्राहिणी थी। इनके धर्मदास एवं गोविन्ददास दो पुत्र थे इनमें धर्म-दास विद्याविनोदी एवं सब विद्याओं का ज्ञाता था।

ग्रंथकर्ता ने प्रशास्ति में अपनी जो गुरु परम्परा दी है उसके अनुसार वे भट्टारक पद्मनन्द की आम्नाय में होने वाले भट्टारक विशालकीर्ति के शिष्य थे।

कवि की दूसरी रचना महापुराण कलिका है जिसमें २७ संधियाँ हैं तथा जिसमें ६३ शलाका पुरुष चरित वर्णित है। इसका रचना काल संवत् १६५० दिया हुआ है। “सज्जन प्रकाश दोहा” गुभाषित रचना है।

८. देवेन्द्र

यशोधर के जीवन पर सभी भाषाओं में कितने ही काव्य लिखे गये हैं। राजस्थानी एवं हिन्दी में भी विभिन्न कवियों ने इस कथा को अपने काव्यों का आधार बनाया है। इन्हीं काव्यों में देवेन्द्र कृत यशोधर चरित भी है जिसकी पाण्डु-लिपि डूंगरपुर के शास्त्र भण्डार में उपलब्ध है। काव्य बृहद् है। इसका रचना काल सं. १६८३ है। देवेन्द्र विक्रम के पुत्र थे जो स्वयं भी संस्कृत एवं हिन्दी के अच्छे कवि थे। कवि ने महुआ नगर में यशोधर की रचना समाप्त की थी।

संवत् १६ आठ बीस आसो सुदी बीज शुक्रवार तो।
रास रच्यो नवरस भर्यो महुआ नगर मझार ता ॥

९. अनन्द

सुदर्शन के जीवन पर महाकवि नयनन्दि ने अष्टांश में संवत् ११०० में

महाकाव्य लिखा था। उसी को देख कर जैनन्द ने संवत् १६६३ में आगरा नगर में प्रस्तुत काव्य को पूर्ण किया था। जैनन्द ने भट्टारक यशकीर्ति क्षेमकीर्ति तथा त्रिभुवनकीर्ति का उल्लेख किया है। इसी तरह बादशाह अकबर एवं जहाँगीर के शासन का भी वर्णन किया है काव्य यद्यपि अधिक बड़ा नहीं है किन्तु भाषा एवं वर्णन की दृष्टि से काव्य अच्छा है।

काव्य की छन्द संख्या २०६ है। काव्य के प्रमुख छन्द दोहा, चौपई एवं सोरठा है। कवि ने निम्न छन्द लिखकर अपनी लघुता प्रकट की है।

छंद भेद पद हो, तो कछु जानें नाहि।
ताकी कियो न खेद, कथा भई निज भक्ति बस ॥

१०. वर्धमान कवि

कवि की रचना वर्धमान रास है जो भगवान महावीर पर प्राचीनतम रास कृति है जिसका रचना काल संवत् १६६५ है। काव्य की दृष्टि से यह अच्छी रचना है। वर्धमान कवि ब्रह्मचारी थे और भट्टारक वादिभूषण के शिष्य थे। रास की एकमात्र पाण्डुलिपि उदयपुर के अग्रवाल दिगम्बर जैन मन्दिर में संग्रहीत है।

११. आचार्य जयकीर्ति

आचार्य जयकीर्ति हिन्दी के अछूते कवि थे। उन्होंने भट्टारक सकलकीर्ति की परम्परा में होने वाले भ. रामकीर्ति के शिष्य ब्रह्म हरखा के आग्रह से "सीता शील पताका गुण बेलि" की रचना संवत् १६७४ ज्येष्ठ सुदी १३ बुधवार के दिन समाप्त की थी। स्वयं कवि द्वारा लिखी हुई मूल पाण्डुलिपि दि० जैन अग्रवाल मन्दिर उदयपुर में संग्रहीत है।^१ इसका रचना स्थान गुजरात प्रदेश का कोट नगर था। जहाँ के आदिनाथ जैन्पालय में उन्होंने सीताशील पताका गुण बेलि की रचना समाप्त की थी। कवि की अन्य रचनाओं में अकलक्यति रास, अगरदत्तमिश्रानन्द रासो, रविव्रत कथा, वसुदेव प्रबन्ध, शील सुन्दरी प्रबन्ध, बंकचूलरास के नाम उल्लेखनीय हैं जयकीर्ति के कुछ पद भी मिलते हैं।

जयकीर्ति पहिले आचार्य थे लेकिन बाद में काष्ठासंघ की सोमकीर्ति की परम्परा में रत्नभूषण के बाद में भट्टारक बन गये थे। बंकचूलरास की रचना

१. संवत् १६७४ आषाढ सुदी ७ गुरौ श्री कोटनगरे स्वज्ञानावरणी कर्मभवाय आ. श्री जयकीर्तिना लिखितेयं। ग्रंथ सूची पंचम भाग-पृष्ठ संख्या ६४५

इन्होंने भट्टारक रहते हुए ही की थी। इसका रचनाकाल संवत् १६८५ है। इस सम्बन्ध में ग्रंथ की प्रशस्ति पठनीय है—

कथा सुणी बंकचूलनी श्रेणिक घरी उल्लास ।
वीरनि वांसी भावसुं पुहुत राजग्रह वास ॥१॥

संवत् सोय' अक्षयतीर्थ सूर्यर देल मझार ।
कल्पवल्लीपुर सोभती इन्द्रपुरी अवतार ॥२॥

नरसिधपुरा वाणिक जनि दया धर्म सुखकंद ।
चैत्यालि श्री वृषभवि आवि भवीयण वृन्द ॥३॥

काष्ठासंध विद्यागणे श्री सोमकीर्ति मही सोम ।
विजयसेन विजयाकर यशकीर्ति यशस्तोम ॥४॥

उदयमेव महीमोदय विभुवकीर्ति विख्यात ।
रत्नभूषण गच्छपती हवा भुवन रयण जेह जात ॥५॥

तस पट्टि सूरिवर भलु जयकीर्ति जयकार ।
ज भवियत भवि साभली ते पामी भवपार ॥६॥

रूपकुम्भर रलीया भणु बंकचूल बीजु नाम ।
तेह राम रन्नु रुवडु जयकीर्ति सुखधाम ॥७॥

नीम भाव निर्मल दुई गुरुवचने निधार ।
सांभलतां संपद् मलि ये भणि नरतिनार ॥८॥

यादुसागर नव महीचंद्र सूर जिनभास ।
जयकीर्ति कहितां रहु बंकचूलनु रास ॥९॥

इति बंकचूलरास समाप्तः ।

१२. पं० भगवतीदास

पं. भगवतीदास १७वीं शताब्दी के हिन्दी के कवि थे। उनका जन्म अम्बाला जिले के बुढिया नामक ग्राम में हुआ था लेकिन बाद में आगरा एवं देहली इनकी साहित्यिक गतिविधियों का प्रमुख केन्द्र बन गये थे। देहली में मोती बाजार के गार्श्वनाथ मन्दिर के पास ही इनका निवास था। आगरा में रहते हुए इन्होंने "अमल-

पुर जिन वन्दना" निबद्ध की थी। इसमें आगरा के सभी जैन मन्दिरों का परिचय दिया हुआ है। रचना इतिहास की दृष्टि से भी उल्लेखनीय है।

भगवतीदास अग्रवाल जाति के बंसल गोत्रीय श्रावक थे। उनके पिता का नाम किशनदास था जिन्होंने वृद्धावस्था में मुनिव्रतधारण कर लिया था। भगवतीदास भट्टारकीय पंडित थे तथा भ. महेन्द्रसेन के शिष्य थे। महेन्द्र सेन दिल्ली गार्ड के काष्ठसंघ माथुर गच्छीय भट्टारक गुरुचन्द्र के प्रशिष्य एवं सकलचन्द्र के शिष्य थे। कवि ने अपनी अधिकांश रचनाओं में महेन्द्रसेन का स्मरण किया है।

कवि की अब तक २५ से भी अधिक कृतियां प्राप्त हो चुकी हैं। अजमेर के भट्टारकीय शास्त्र भंडार में एक गुटका है जिसमें कवि की अधिकांश रचनाओं का संग्रह मिलता है। इनमें सीतासतु, अगलपुर जिन वन्दना, मुगति रमणी चूनड़ी, लघुसीतासतु, मनकरहारास, जोगीरास, टंडाणारास, मृगाकलेखाचरित, आदित्यव्रत-रास, पखवाडारास, दशलक्षणारास, खिचड़ीरास आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

कवि का विस्तृत परिचय एवं मूल्यांकन अकादमी के किसी अगले भाग में किया जावेगा।

१३. ब्रह्म कपूरचन्द

ब्रह्म कपूरचन्द मुनि गणचन्द्र के शिष्य थे। ये १७वीं शताब्दी के अन्तिम चरण के विद्वान् थे। अब तक इनके पार्श्वनाथरास एवं कुछ हिन्दी पद उपलब्ध हुये हैं। इन्होंने रास के अन्त में जो परिचय दिया है, उसमें अपनी गुरु-परम्परा के अतिरिक्त आनन्दपुर नगर का उल्लेख किया है, जिसके राजा जसवन्तसिंह थे तथा जो राठौड़ जाति के शिरोमणि थे। नगर में ३६ जातियां मुख्यपूर्वक निवास करती थीं। उसी नगर में ऊँचे ऊँचे जैन मन्दिर थे। उनमें एक पार्श्वनाथ का मन्दिर था। सम्भवतः उसी मन्दिर में बैठकर कवि ने अपने इस रास की रचना की थी।

पार्श्वनाथरास की हस्तलिखित प्रति मालपुरा, जिला टोंक (राजस्थान) के चौघरियों के दि० जैन मन्दिर के शास्त्र भंडार में उपलब्ध हुई है। यह रचना एक गुटके में लिखी हुई है, जो उसके पन्ने १४ से ३२ तक पूर्ण होती है। रचना राजस्थानी-भाषा में निबद्ध है, जिसमें १६६ पद्य हैं। "रास" की प्रतिलिपि बाई रत्नाई की शिष्य आशिका पारवती गंगवाल ने संवत् १७२२ मिति जेठ बुदी ५ को समाप्त की थी।

श्रीमूल जी संघ बहु सरस्वती गच्छि।

भयो जी मुनिवर बहु चारित स्वच्छ ॥

तहां श्री तेमचन्द्र गच्छपति भयो ।
तास के पाट जिन सोभे जी भाख ॥
श्री बसकीरति भूनिपति भयो ।
जाणो जी तर्क अति शास्त्र पुराण ॥श्री॥१५९॥

तास को शिष्य मुनि अधिक (प्रवीण) ।
पंच महाव्रतस्यो नित लीन ॥
तेरह विधि चारित धरै ।
व्यंजन कमल विकासन चन्द ॥
ज्ञान गौ हम जिसी अवि.....ले ।
मुनिवर प्रगट मुमि श्री गुणचन्द ॥श्री॥१६०॥

तासु तगु मिषि पडित कपूर जी चन्द ।
कीयो राम किति धरिवि आनन्द ॥
जिनगुण कहु मुहा अल्प जी मति ।
जसि विधि देख्या जी शास्त्र-पुराण ॥
बुधजन देखि को मति हंस ।

तैसी जी विधि में कीयो जी बखाण ॥श्री॥१६१॥
सोलास सत्तावरणवे मासि बंसाखि ।
पंचमी तिथि सुभ उजला पाखि ॥
नाम नक्षत्र आद्रा भलो ।
वार बृहस्पति अधिक प्रधान ॥
रास कीयो वामा सुत तणो ।

स्वामीजी पारसनाथ के शान ॥श्री॥१६२॥
अहो देस को राजाजी जाति राठौड ।
सकल जी छपी थाके सिरिमोड ॥
नाम जसबन्तसिंह तसु तराणो ।
तास आनन्दपुर नगर प्रधान ॥
पोशि छत्तीस लीला करे ।
सोमै जी तहां जीण उत्तंग ।
मंडप बेदी जी अधिक अमंग ॥
जिण तराण बिब सोभै भला ।
जो नर वंदे मन बचकाई ॥

दुख कलेस न संचरे ।

तीस धरा नव निधि थिति पाइ ॥ श्री ॥ १६४ ॥

रास संवत् १६९७, वैशाख सुदी ५ के दिन समाप्त हुआ था ।

रास में पार्श्वनाथ के जीवन का पद्य-कथा के रूप में वर्णन है । कमठ ने पार्श्वनाथ पर क्यों उपसर्ग किया था, इसका कारण बताने के लिये कवि ने कमठ के पूर्व-भव का भी वर्णन कर दिया है । कथा में कोई चमत्कार नहीं है । कवि को उसे अति संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करना था सम्भवतः, इसीलिए उसने किसी घटना का विशेष वर्णन नहीं किया ।

१४. मुनि राजचन्द्र

राजचन्द्र मुनि थे लेकिन ये किसी भट्टारक के शिष्य थे अथवा स्वतन्त्र रूप से विद्वान् करते थे इसकी अभी कोई जानकारी प्राप्त नहीं हो सकी है । ये १७वीं शताब्दी के विद्वान् थे । इनकी अभी तक एक रचना “चम्पावती सील कल्याणक” ही उपलब्ध हुई है जो संवत् १६८४ में समाप्त हुई थी । इस कृति की एक प्रति दि. जंत खण्डलवाल मन्दिर उदयपुर के शास्त्र भण्डार में संग्रहीत है । रचना में १३० पद्य हैं ।^१

१५. पाण्डे जिनदास

पाण्डे जिनदास अ. शान्तिदास के शिष्य थे । डा. प्रेमसागर ने शान्तिदास को जिनदास का पिता भी लिखा है जिसका आधार बड़ौत के सरस्वती भण्डार की जम्बूस्वामी चरित की पांडुलिपि है जिसमें शिष्य के स्थान पर सुत पाठ मिलता है । जिनदास आगरा के रहने वाले थे । बादशाह अकबर के प्रसिद्ध मन्त्री टोडरशाह इनके आश्रयदाता थे तथा टोडरशाह के पुत्र थे दीपाशाह जिनके पढ़ने के लिये इन्होंने प्रस्तुत काव्य का निर्माण किया था । टोडरशाह के परिवार में रिखवदास, मोहनदास, रूपचन्द, लक्ष्मणदास, आदि और भी व्यक्ति थे जो सभी धार्मिक प्रवृत्ति वाले थे तथा कवि पर उनकी विशेष कृपा थी ।

१. सुविचार धरी तप करि, ते संसार समुद्र उत्तरि ।

भरनारी सांमलि जे रास, ते सुख पांमि स्वर्ग निवास ॥ १२९ ॥

संवत् सोल चुरासीयि एह, करो प्रबन्ध आवण बदि तेह ।

तेरस बिम आदित्य सुद्ध चेशावही, मुनि राजचन्द्रकहि हरक्षज सहि ॥ १३० ॥

इति चम्पावती सील कल्याणक समाप्त ॥

पाण्डे जिनदास के जम्बू स्वामी चरित काव्य के अतिरिक्त और भी कृतियाँ उपलब्ध होती हैं जिनमें नाम है चेतनगीत, जखडी, मालीरास, जोगीरास मुनीश्वरों की जयमाल, धर्मरासगीत, राजुलसज्जाय, सरस्वती जयमाल, आदित्यवार कथा, दोहा बावनी, प्रबोध बावनी, बारह भावना आदि के नाम उल्लेखनीय हैं ।

कवि का विस्तृत परिचय अकादमी के किसी अगले भाग में दिया जावेगा ।

१६. पाण्डे राजमल्ल

पाण्डे राजमल्ल उपलब्ध राजस्थानी गद्य के सबसे प्राचीन दिगम्बर जैन लेखक हैं ये विराट नगर (जैराठ) के रहने वाले थे । उनकी शिक्षा दीक्षा कहां हुई इसकी तो अभी खोज होना शेष है लेकिन ये प्राकृत एवं संस्कृत के अच्छे विद्वान थे । इन्होंने आचार्य कुम्भकुम्भ के समयसार की बालाबोध टीका लिखी थी । इसी टीका के आधार पर महाकवि बनारसीदास ने समयसार नाटक की रचना की थी ।^१ इसी बालाबोध टीका का उल्लेख महाकवि बनारसीदास ने अपने अर्थकथानक में किया है ।^२

श्री नाथूराम प्रेमी ने इनकी जम्बूस्वामी चरित, लाटी सहिता, अध्यात्म-कमलमार्तण्ड, छन्दोविधा एवं पंचाध्यायी रचनाएँ होना लिखा है ।^३ (अर्थकथानक पृष्ठ संख्या ८५)

१७. छीतर ठोलिया

छीतर ठोलिया मौजमाबाद के निवासी थे । इनकी जाति खंडेलवाल एवं शोज ठोलिया था । इनकी एकमात्र रचना होली की कथा संवत् १६५० की कृति है जिसको उन्होंने अपने ही ग्राम मौजमाबाद में निबद्ध की थी । उस समय नगर पर अमेर के राजा मानसिंह का शासन था ।^४ होली की कथा सामान्य रचना है ।

१. पाण्डे राजमल्ल जिनधरभा, समयसार नाटक के मरमी ।

तिन गिरंज की टीका कीनी बालाबोध सुगम कर दीनी ।।

२. वि. सं. १६८४ में अध्यात्म चर्चा के प्रेमी अरथमल कोर मिले और उन्होंने समयसार नाटक की राजमल्ल कृत टीका का ओर कहा कि तुम इसे पढ़ो इसमें सत्य क्या है सो तुम्हारी समझ में आ जावेगा ।

३. अर्थ कथानक—पृष्ठ संख्या ४७

४. शाकम्भरी के विकास में जैन धर्म का योगदान—डा. कासलीवाल, पृष्ठ ४७

१८. भट्टारक वीरचन्द्र

वीरचन्द्र १७वीं शताब्दी के प्रतिभा सम्पन्न विद्वान् थे । व्याकरण एवं न्यायशास्त्र के काण्ड वेत्ता थे । संस्कृत, प्राकृत, गुजराती एवं राजस्थानी पर इनका पूर्ण अधिकार था । ये भ० लक्ष्मीचन्द्र के शिष्य थे । अब तक इनकी आठ रचनायें उपलब्ध हो चुकी हैं जिनके नाम निम्न प्रकार हैं—

(१) वीर विलास फाग, (२) संबोध सत्तायु (३) जम्बू स्वामी वेलि, (४) नेमिनाथ रास, (५) जिन आंतरा (६) चित्तनिरोध कथा, (७) सीमंधर स्वामी गीत एवं (८) बाहुबलि वेलि । वीर विलास फाग एक खण्ड काव्य है जिसमें २२वें तीर्थंकर नेमिनाथ की जीवन घटना का वर्णन किया गया है । फाग में १३३ पद्य हैं । जम्बूस्वामी वेलि एक गुजराती मिश्रित राजस्थानी रचना है । जिन आंतरा में २४ तीर्थंकरों के समय आदि वर्णन किया गया है । संबोध सत्तायु एक उपदेशात्मक गीत है जिसमें ५३ पद्य हैं । चित्तनिरोधक कथा १५ पद्यों की एक लघु कृति है इसमें भ० वीरचन्द्र को “लाड नीति शृंगार” लिखा है । नेमिकुमार रास की रचना सं० १६३३ में समाप्त हुई थी यह भी नेमिनाथ की वैवाहिक घटना पर आधारित एक लघु कृति है ।

कवि का विस्तृत परिचय अकादमी के किसी अगले भाग में दिया जावेगा ।

१९. खेतसी

खेतसी का दूसरा नाम खेतसिंह भी मिलता है । अभी तक इनकी तीन कृतियां प्राप्त हो चुकी हैं जिनके नाम हैं नेमिजिनंद व्याहलो, नेमीश्वर का बारह मासा, एवं नेमिश्वर राजुलकी लहुरि । राजस्थान के एवं अन्य शास्त्र भंडारों में अभी कवि की और रचनायें मिलने की सम्भावना है । नेमिजिनंद व्याहलो की एक प्रति दि० जैन मंदिर फतेहपुर (शेखावाटी) के तथा दूसरी जयपुर के पाटोदी के मंदिर के शास्त्र भंडार में संग्रहीत है । खेतसी की रचनायें भाषा एवं शैली की दृष्टि से उल्लेखनीय रचनायें हैं । ये मगधवीं शताब्दी के अंतिम चरण के कवि थे । नेमिजिनंद व्याहलो इनकी संवत् १६९१ की रचना है ।

२०. ब्रह्म अजित

ब्रह्म अजित संस्कृत के अच्छे विद्वान् थे । ये गोलशृंगार जाति के श्रावक थे । इनके पिता का नाम वीरसिंह एवं माता का नाम पीथा था । ब्रह्म अजित

भट्टारक सुरेन्द्रकीर्ति के प्रशिष्य एवं भट्टारक विद्यानदि के शिष्य थे । ये ब्रह्मचारी थे और इसी अवस्था में रहते हुये इन्होंने भृगुकच्छपुर (मडोच) के नेमिनाथ चैत्यालय में हनुमच्चरित की रचना समाप्ति की थी । इस चरित की प्राचीन प्रति आमेर शास्त्र भंडार जयपुर में संग्रहीत है । हनुमच्चरित में १२ सर्ग हैं और यह अपने समय का काफी लोकप्रिय काव्य रहा है ।

ब्रह्म अजित की एक हिन्दी रचना "हंसा गीत" प्राप्त हुई है यह एक उप-देशात्मक एवं शिक्षाप्रद कृति है जिसमें "हंसा" (आत्मा) को सम्बोधित करते हुये ३७ पद्य हैं । गीत की समाप्ति निम्न प्रकार की है—

रास हंसा तिलक एह, जो भाषइ दिह चित्त रे हंसा ।
श्री विद्यानादि उपदेस, बोलि ब्रह्म यांजत रे हंसा ॥३७॥
हंसा तू करि सयम, जम न पाइ संसार रे हंसा ॥

ब्रह्म अजित १७वीं शताब्दी के विद्वान् सन्त थे ।

२१. आचार्य नरेन्द्रकीर्ति

ये १७वीं शताब्दी के सन्त थे । भ०वादिभूषण एवं भ० सकलभूषण दोनों ही सन्तों के ये शिष्य थे और दोनों की ही उन पर विशेष कृपा थी । एक बार वादिभूषण के प्रिय शिष्य ब्रह्म नेमिदास ने जब इनसे "सगरप्रबन्ध लिखने की प्रार्थना की तो इन्होंने उनकी इच्छानुसार "सगर प्रबन्ध" कृति को निबद्ध किया । प्रबन्ध का रचनाकाल सं० १६४६ असीज सुदी दशमी है । यह कवि की एक अच्छी रचना है । आचार्य नरेन्द्रकीर्ति की ही दूसरी रचना "तीर्थंकर चरित्रसना छप्पय" है । इसमें कवि ने अपने नामोल्लेख के अतिरिक्त अन्य कोई परिचय नहीं दिया है । दोनों ही कृतियां उदयपुर के शास्त्र भंडारों में संग्रहीत हैं ।

२२. ब्रह्म रायमल्ल

१७वीं शताब्दी के प्रथम भाग के महाकवि रायमल्ल के सम्बन्ध में अकादमी की ओर से प्रथम भाग—महाकवि ब्रह्मरायमल्ल एवं भ० विभुवनकीर्ति प्रकाशित हो चुका है ।

२३. जगजीवन

कविवर जगजीवन बनारसीदास के समकालीन ही नहीं किन्तु उनके कट्टर प्रशंसक भी थे । ये आगरा के सम्पन्न घराने के थे लेकिन पूर्णतः निरभिमानी भी थे ।

उनके पिता का नाम अमयराम था। उनके कितनी ही स्त्रियां थीं जिनमें मोहनदे सबसे अधिक प्रसिद्ध थी^१ और जगजीवन की माता भी वहीं थी। कवि अप्पवाल गंग गोत्रीय श्रावक थे। इनकी अच्छी शिक्षा दीक्षा हुई थी इसलिये थोड़े ही दिनों में उनकी चारों ओर ख्याति फैल गई। जगजीवन जानियों की मंडली के अगुवा बन गये।^२

जगजीवन बनारसीदास के परम भक्त थे तथा उनकी रचनाओं से परिचित थे। बनारसीदास की मृत्यु के पश्चात् जगजीवन ने संवत् १७०१ में उनकी सभी रचनाओं का एक ही रथान पर संकलन करके उसका नाम बनारसी विलास रखा और साहित्यिक क्षेत्र में अपना नाम अमर कर लिया। जगजीवनराम स्वयं भी कवि थे। इसलिये उन्होंने एकीभाव स्तोत्र की एवं भूपाल चौबीसी की भाषा टीका की थी। इनके कितने ही पद भी मिलते हैं। डा० प्रेमसागर ने भूपाल चौबीसी का उल्लेख नहीं किया है।

जगजीवनराम के समय आगरा साहित्यकारों एवं साहित्यसेवियों का प्रमुख केन्द्र था। पं० हीरानन्द ने समवसरण विधान की प्रशस्ति में जगजीवनराम का अछ्छा वर्णन किया है जो निम्न प्रकार है—

अथ मुनि नगरराज आगरा, सकल लोक अनुपम सागरा ।
साहजहाँ भूपति है जहाँ, राज करे नयभारग तहाँ ॥७५॥
ताको जाफरखां उमराउ, पंचहजारी प्रगट कराउ ।
ताको अजरवाल दीवान, गरगगोत सब विधि परवात ॥७६॥
संधही अमैराज जानिये, सुखी अधिक सब करि मानिये ।
बनितागण नाना परकार, तिनमें लघु मोहनदे सार ॥७७॥
ताको पूत पूत-मिरमौर, जगजीवन जीवन की ठौर ।
सुन्दर सुभद्ररूप अभिराम, परम पुनीत धरम-धन-धाम ॥७८॥

१. नगर आगरे में अजरवाल गरगगोत सागर सबलसा ।
संध ही प्रसिद्ध अभिराम राज माननीक, पंचवाल मलनी में मयो है कवलसा ।
ताके प्रसिद्ध लघु मोहनदे संधइनि, ताके जिनमारग विराजित धवलसा ।
ताहि को सपूत जगजीवन सुविद्ध जंग, बनारसी जंग आके हिए में सबलसा ।
२. सर्व जोग पाइ जग जीवन विस्थात भयो,
ज्ञान की मंडली में जिसको विकास है ।

काल-लबधि कारन रस पाइ, जग्यो जगारथ अनुभौ आइ ।

अह्निसि ग्यानमंडली चैन, परत और सब दीस फैन ॥८२॥

इससे दो बातों पर प्रकाश पड़ता है—एक तो यह कि संवत् १७०१ में आगरे में जाताओं की एक मंडली या आध्यात्मियों की सैली थी, जिसमें संघवी जगजीवनराम, पं० हेमराज, रामचन्द्र, संघी मथुरादास, भवालदास, और भगवतीदास थे । भगवतीदास को "स्वपरप्रकाश" विशेषण दिया है । ये भगवतीदास वेही जान पड़ते हैं जिनका उल्लेख बनारसीदास ने नाटक समयसार में निरन्तर परमार्थ चर्चा करने वाले पाँच पुरुषों में किया है । हीरानन्दजी अपने दूसरे खण्डोक्त ग्रन्थ पंचास्तिकाय (१७०१) में भी धनमल और मुरारि के साथ इन्हीं का जातारूप में उल्लेख किया है ।

दूसरी बात यह है कि जफरखां बादशाह जाहजहाँ का पाँचहजारी उमराव था जिसके कि जगजीवन दीवान थे और जगजीवन के पिता अमरराज सर्वाधिक सुधी सम्पन्न थे । उनके अनेक पक्षियाँ थी जिनमें से सबसे छोटी मोहनदे से जगजीवन का जन्म हुआ था ।

२४. कुंवरपाल

ये कविवर बनारसीदास के अभिन्न मित्र थे ।^१ जिन पाँच साथियों के साथ बँटकर बनारसीदास परमार्थ चर्चा किया करते थे उनमें कुंवरपाल का नाम भी सम्मिलित है ।^२ पाण्डे हेमराज ने उन्हें जाता अधिकारी के रूप में स्मरण किया है । महोपाध्याय मेधविजय ने अपने "युक्ति प्रबोध" में उनकी सर्वमान्यता स्वीकार की है । स्वयं कवि कुंवरपाल ने अपनी "समकित बलीसी" में अपना यश चारों ओर नगरों में फैलने के लिये लिखा है ।^३

१. कुंवरपाल बनारसी मित्र जुगल इक विस ।
तिनहि ग्रंथ भाषा कियो बहु विधि छव कवित ॥२॥
१. रूपचंद पंडित प्रथम, दुतिय चतुर्भुज नाम ।
तृतीय भगौतीदास नर, कौरपाल गुरुधाम ॥
वरमदास ए पंच जम, मिलि बंटे इक ठौर ।
परमारथ बरखा करै, हम के कथा न ओर ॥
२. पुरि पुरि कुंवरपाल जस प्रगद्यो, बहुविध ताप बंस बरिणजई ।
वरमदास जसकवर सदा धनी, बहसाखा बिसतर किम किजई ।

बनारसीदास ने "सूक्ति मुक्तावली" में कुंअरपाल का नाम अपने अभिन्न मित्र के रूप में लिखा है और दोनों ने मिलकर सूक्ति मुक्तावली भाग रचना की ऐसा उल्लेख किया है। कवि की अब तक कविरपाल बत्तीसी एवं सम्यक्त्व बत्तीसी रचनायें उपलब्ध हो चुकी हैं।

कुंअरपाल का जन्म ओसवाल वंश के खीरडिया गोत्र में हुआ था। कुंअरपाल के पिता का नाम अमरसिंह था। नाथूराम प्रेसी ने अमरसिंह का जन्म स्थान जैसलमेर माना है। कुंअरपाल के हाथ का लिखा हुआ एक गुटका विक्रम संवत् १६८८-८९ का है जिसमें विभिन्न पाठों का संग्रह है। कुछ रचनायें स्वयं कवि द्वारा निर्मित भी हैं। लेकिन उनका नामोल्लेख नहीं हुआ है। इसी तरह एक गुटका और मिला है जो स्वयं कुंअरपाल के पढ़ने के लिये लिखा हुआ गया था। जिसमें कुंअरपाल द्वारा लिखी हुई समकित बत्तीसी का विषय अध्यात्मरस से है। इसका अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है—

हुआ उच्छाह सुजस आतम सुनि, उत्तम जिके परम रस भिन्ने ।
ज्यजं सुरही तिण चरहि दूध हुई, ग्याता नेरह प्रम पुन गिन्ने ॥
निजबुधि सार विचारि अध्यात्म, कवित बत्तीस भेट कवि किल्ने ।
कविरपाल अमरस 'तनू' भव, अतिहितचित आदर कर लिन्ने ॥

२५. सालिवाहन

सालिवाहन १७वीं शताब्दी के अन्तिम चरण के कवि थे। इन्होंने संवत् १६९५ में आगरा में रहते हरिवंश पुराण भाषा (पद्य) की रचना की थी। इनके पिता का नाम खरगसेन एवं गुरु का नाम भट्टारक जगभूषण था। कवि भदावर प्रान्त के कञ्चनपुर नगर के निवासी थे। हरिवंश पुराण की प्रशस्ति में इन्होंने अपना परिचय निम्न प्रकार दिया है—

संवत् सोरहसै तहाँ भये तापरि अश्रिक पचानवे गये ।
भाष मास किसान पक्ष जानि, सोमवार सुभवार बखानि ॥
भट्टारक जगभूषण देव गनधर सद्गस बादि जु एइ ।
नगर आगिरी उत्तम थानु साहिजहाँ तपे दूजो भान ॥
बाहन करी चौपई बन्धु हीन बुधि मेरी मति अन्धु ।

२६. सुन्दरदास

सुन्दरदास नाम के जैन कवि भी दृष्टे हैं जो बागड प्रान्त के रहने वाले

थे । लेकिन यह बागड प्रदेश डूंगरपुर वाला बागड प्रदेश नहीं है किन्तु देहली के आसपास के प्रदेश को बागड प्रदेश कहा जाता था ऐसा डा० प्रेमसागर जैन ने माना है । डा० जैन के अनुसार सुन्दरदास शाहजहाँ के कृपापात्र कवियों में से थे । बादशाह ने इनको पहिले कविराय और फिर महाकविराय का पद प्रदान किया था । डा० जैन ने लिखा है कि सुन्दरदास राजस्थानी कवि थे तथा जयपुर से ५० किलोमीटर पूर्व की ओर स्थित दोसा उनका जन्म स्थान था । इनकी माता का नाम सती एवं पिता का नाम जीला था । सुन्दरदास सम्प्रदायिक कवि थे । इनके अभी तक चार ग्रन्थ एवं कुछ कृत्कार रचनायें प्राप्त हो चुकी हैं । ग्रन्थों के नाम हैं सुन्दरसतसई, सुन्दर विलास, सुन्दर शृंगार एवं पाखंड पंचांगिका । जयपुर के ठोलियों के मन्दिर में पद एवं सहेलीगीत भी मिलता है । सहेलीगीत का प्रारम्भ निम्न प्रकार हुआ है—

सहेल्लो हे यो संसार अमार गोचित में था अपनौ जी सहेल्लो हे
ज्यों राचें तो गवार तन अज ओवन धिर नहीं ।

सुन्दर शृंगार—इसकी एक प्रति साहित्य शोध विभाग जयपुर के संग्रह में है जिसमें ३५६ पद्य हैं । प्रारम्भ में कवि ने अपना एवं बादशाह शाहजहाँ का परिचय निम्न प्रकार दिया है—

तीन पहिर लो रवि नलें, जाके देसनि नाहि ।
जीत लई जगती इसी, साहिजहा नर नाहि ॥५॥

कुल दरिया खाई कियो, कोटतीर के टांग ।
आठो दिसि यों वसि करि, यों कीजै इक गांव ॥६॥

साहिजहां निन गुननि कों, दीने अगिनित दान ।
तिन मैं सुन्दर सुकावि को, कीयो बहुत संगपान ॥७॥

तब भूपत भनि सबद थे, हथ हाथी सिर पाद ।
प्रथम दीयो कवि राय पद, बहुरि महाकवि राइ ॥८॥

विप्र ग्वारियर नगर को, बागी है कविराज ।
जासौ साहि मया करौ, सदा गरीब निवाज ॥९॥

जब कवि को मन यों बछौ, तब यह कीयो बिचार ।
बरनि नाइका नायक विरच्यो ग्रंथ विस्तार ॥ १३ ॥

सुंदर कृत सिंगार है, सकल रसनि को सार ।
नांव धरयो या ग्रंथ की, यह सुंदर सिंगार ॥ १४ ॥

जो सुंदर सिंगार को, पढ़ें, मुनें सग्यानु ।
तिन मानौ संसार मैं, करयो सुधारस पान ॥ १५ ॥

संदर्भ भोरह से डरत, कीते प्रशस्तीत ।
कालिक सुदि षष्टि गुरी, रच्यो ग्रंथ करि मीति ॥ १६ ॥

सुन्दर शृंगार की प्रशस्ति से मालूम होता है कि कवि खालियर के रहने वाले ब्राह्मण कवि थे जैन नहीं थे ।

२८. परिहानन्द (नन्दलाल)

परिहानन्द आगरा के पास गीसुना ग्राम के रहने वाले थे लेकिन बाद में आगरा आकर रहने लगे थे । वे अग्रवाल जातीय गोयल गोत्र के श्रावक थे । उनकी माता का नाम चन्दा तथा पिता का नाम भैरु था । काशी नागरी प्रचारिणी पत्रिका हस्तलिखित ग्रंथों की खोज २०वां अर्धवार्षिक विवरण में माता का नाम चन्दन दिया हुआ है ।^१ कवि के समय में आगरा पूर्ण वैभवशाली नगर था जहाँ सभी तरह का व्यापार था जिस कारण वहाँ कवि के शब्दों में असंख्य बनवान रहते थे । उस समय आगरा मथुरा मंडल का उत्तम नगर माना जाता था ।^२

परिहानन्द ने हिन्दी के अच्छे कवि थे उन्होंने यशोधर चरित्र को संवत् १६७० श्रावण शुक्ला सप्तमी सोमवार को समाप्त किया था । डा. प्रेमसागर जैन ने कवि का नाम परिहानन्द के स्थान पर नन्दलाल लिखा है । नन्द नाम से संकत

१. अग्रवाल वरवंस गोसना गाँव को
गोयल गोत प्रसिद्ध चिह्न ता ठाँव को
माता चन्दा नाम पिता भैरु मन्थी
परिहानन्द कही मन मोद अंग न गुन ना गिन्यौ ॥ १९ ॥
२. माताहि चन्दन नाम पिता भयरो मन्थी
नन्द कही मनमोद गुनी गन ना गन्यो ।
३. नगर आगरी अस सुवासु, जहपुर नाना मोग बिलास ।
बसहि साहु बहु धनी असंखि, बनजहि बनज सापहहिनखि ।
गुणी लोग छत्ती सौ कुरी, मथुरा मंडल उत्तम पुरी ।

१६६३ वाली कृति "सुदर्शन सेठ कथा" को भी इन्हीं कवि की रचना स्वीकार किया है। सुदर्शन सेठ कथा कि एक प्रति भट्टारकीय शास्त्र भण्डार अजमेर में सुरक्षित है।

कवि की तीसरी कृति 'गूढ विनोद' में भी कवि ने अपना नाम नन्द ही दिया है। इसकी एक पाण्डुलिपि जयपुर के पंडित लूणकरणजी के शास्त्र भण्डार में संग्रहीत है।

यशोधर चरित्र ५९८ पद्यों का प्रबन्ध काव्य है। रचना भाषा एवं शैली की दृष्टि से यह एक उत्तम कृति है। यह काव्य अभी तक अप्रकाशित है।

२८. परिमल्ल

परिमल्ल कवि हिन्दी के १७वीं शताब्दी द्वितीय चरण के कवि थे। ये प्रथम कवि हैं जिन्होंने काव्य प्रारम्भ करने की तिथि दी है नहीं तो सभी कवि रचना समाप्ति की तिथि देते हैं। परिमल्ल का श्रीपाल चरित्र एक मात्र काव्य है जिसकी अभी तक उपलब्धि हुई है। कवि ने इसे संवत् १६५१ आषाढ शुक्ला अष्टमी अष्टाद्विका पर्व के प्रथम दिन प्रारम्भ किया था।

संवत् सोलह से उच्चरयो मांषण इक्यावन आगरो।
मास अषाढ पहुँतो आइ बरषा रिति कां कहे बढाइ।
पक्ष उजाली आठै जाणि, सुक्रवार वार परवारि।
कवि परिमल्ल सुद करि चित्त, प्रारम्भ्यो श्रीपाल चरित।

उस समय देश पर बादशाह अकबर का शासन था। चारों ओर सुख शान्ति थी कवि ने अकबर को दूसरा भानु लिखा है

बज्जर गतिसाह हर्ष गयो, तां सुत साहि हुमाऊ भयो।
जा सुत अकबर साहि समाण, सो तप तप्यो दूसरो भाण ॥३२॥
तार्क राज न होइ अनीति, बसुधा बहुत करि बसि जीति।
कितेक देस तास की आन, दुजो और न ताहि समान ॥३३॥

वंश परिचय —परिमल्ल कवि अत्यधिक सम्मानित वंश से संबंधित थे इनकी जाति बिरहिया जैन थी। कवि के पितामह नंदन चौधरी थे जो ग्वालियर के राजा भानसिंह द्वारा सम्मानित थे। उनकी कीर्ति चारों ओर फैली हुई थी। वे स्वयं प्रतापी थे तथा अपने कुल को प्रसन्न रखने वाले थे। कवि के पितामह रामदास एवं पिता आसकरन थे। ये आसकरन के पुत्र थे। परिमल्ल आगरा में आकर रहने लगे

थे । धीरे वहीँ पर रहते हुए उन्होंने श्रीपाल चरित को चौपई बन्ध छन्द में पूर्ण किया था ।^१

कवि की एक मात्र कृति श्रीपाल चरित की राजस्थान के ग्रंथ भण्डारों में कितनी ही पांडुलिपियां उपलब्ध होती हैं । पूरा काव्य २३०० चौपई छन्दों में निबद्ध है । यद्यपि श्रीपाल का जीवन कथा लोकप्रिय कथा है लेकिन कवि की वर्णन शैली बहुत ही अच्छी है जिसमें काव्य में चमत्कार छा गया है ।

काव्य की एक प्रति आमेर शास्त्र भण्डार में संख्या १३६० पर संग्रहीत है जिसमें १२५ पत्र हैं तथा जिसे संवत् १७९४ में गटन में जैकिशन जोशी द्वारा लिपिबद्ध किया गया था ।

२९. वादिचन्द्र

वादिचन्द्र विद्यानन्दि की परम्परा में होने वाले भ. ज्ञानभूषण के प्रशिष्य एवं भ. प्रभाचन्द्र के शिष्य थे । इन्हें साहित्य निर्माण की सचि मुह परम्परा से प्राप्त हुई थी । संस्कृत एवं हिन्दी गुजराती पर इनका अच्छा अधिकार था इसलिये इन्होंने संस्कृत एवं हिन्दी दोनों में अपनी कलम चलायी । ये एक समर्थ साहित्यकार थे । संवत् १६४० में इन्होंने संस्कृत में बाल्हीक नगर में पार्श्वपुराण की रचना करके अपने कर्तृत्व शक्ति का परिचय दिया ।^२ ज्ञानसूर्योदय नाटक को संवत् १६४८^३ एवं यशोधर चरित्र को संवत् १६५७ में पूर्ण किया था ।^४ "पवनदूत" कालीदास के मेषदूत के आधार पर रचा गया काव्य है ।^५

१. गोत्रि गीरी ठाढ़ो उत्तिम धान, सूरवीर यह रामान ।
ता आगि चवन चौधरो, कीरति सब जग में विस्तरी ॥ ६६ ॥
जाति बिरहिया गुणह गंभीर, अति प्रताप कुल रंजन धीर ।
ता सुत रामबास परवान, ता सुत अस्ति महा सुर ग्यानि ॥ ६७ ॥
तसु कुल संठस है परिमल्ल, सबे आगरा में अरिसल्ल ।
तासु महि न बुझि नहि श्रान, कीथो चौपई बंध प्रवान ॥ ६८ ॥
२. शून्याब्धी रसाब्जाके वर्षे पक्षे समुज्ज्वले ।
कार्तिक मास पंचम्यां बाल्हीके नगरे सुवा ॥ पार्श्वपुराण
३. प्रभास्ति संग्रह-सम्पादक-डा. कस्तूरचन्द कासलीवाल पृष्ठ १६
४. अंकलेश्वर-सुग्रामे श्री चिन्तामणि मन्दिरे ।
सप्तपंच रसाब्जाके वर्षे कारि सुशास्त्रकम् ॥
५. पं. उदयपाल कासलीवाल द्वारा सम्पादित-जन साहित्य प्रसारक कार्यालय बम्बई द्वारा सन १९९४ में प्रकाशित

इसके अतिरिक्त सुलोचना चरित्र को एक पाण्डुलिपि ईडर के शास्त्र भण्डार में संग्रहीत है ।

वादिचन्द्र की हिन्दी में भी कितनी ही कृतियाँ मिलती हैं जो राजस्थान के विभिन्न शास्त्र भण्डारों में उपलब्ध होती हैं । अब तक उपलब्ध कुछ कृतियों के नाम निम्न प्रकार हैं:—

- १-पार्श्वनाथ विनती
- २-श्रीपाल सोभागी आख्यान
- ३-बाहुबलिनो छंद
- ४-नेमिनाथ समवसरण
- ५-द्वादश भावना
- ६-आराधना गीत
- ७-अम्बिका कथा
- ८-पाण्डवपुराण

पार्श्वनाथ विनती की एक प्रति दि. जैन मन्दिर कोटडियों का, डूंगरपुर के शास्त्र भण्डार में संग्रहीत है । इसका रचनाकाल संवत् १६४८ दिया हुआ है ।^१ श्रीपाल सोभागी आख्यान को उदयपुर एवं कोटा के शास्त्र भण्डारों में प्रतियाँ सुरक्षित हैं ।^२ इसका रचना काल संवत् १६५१ है । पं. नाथूराम प्रेमी ने आख्यान के विषय में लिखा है कि यह एक कीर्ति काव्य है और इसकी भाषा गुजराती मिश्रित हिन्दी है । इसकी रचना संघपति धनजी सदा के आग्रह से हुई थी । आख्यान में सभी रसों का प्रयोग हुआ है तथा भाषा एवं शैली में सरलता एवं प्रवाह है ।^३ यह एक भक्ति प्रधान काव्य है । काव्य का एक उदाहरण देखिये—

दान दीजे जिन पूजा कीजे, समकित मनै राखिजे जी
सूत्रज भणिए णवकार गणिए, असत्य न विभाषिजे जी
लोभ तजी जे थहा चरीजे, सांभल्यानु फल एह जी
ए गीत जे नर नारी सुरासे अनेक मंगल सह गेह जी

१. राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों की ग्रंथ सूची पंचम भाग-पृ. सं. ११६१
२. राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों की ग्रंथ सूची पंचम भाग-पृ. सं. ४६१
३. संघपति धनजी सदा वचन कीथो ए प्रबन्ध जी ।
केवली श्रीपाल पुत्र सहित तुम्ह नित्य करो जयकार जी ।

बाहुबलि तो छन्द-इसकी एक पाण्डुलिपि दि, जैन मन्दिर कोटडिया डूंगरपुर के एक गुटके में संग्रहीत है। डा. प्रेमसागर जैन ने इसका नाम भरत बाहुबलि छन्द नाम दिया हुआ है।^१ इस कृति में वादिचन्द्र ने अपने गुग का नाम निम्न प्रकार किया है—

तत् एव नाम जिनसनान्द्र, जगिए बोल्ये वादिचन्द्र ।

४-नेमिनाथ तो समवसरण, ५-गीतमस्वामी स्तोत्र एवं ३-द्वादश भावना की पाण्डुलिपियां दिगम्बर जैन खण्डेलवाल मन्दिर उदयपुर के शास्त्र भण्डार के एक गुटके में संग्रहीत हैं। इस गुटके में वादिचन्द्र के गुरु भ. शानभूषण एवं भ. वीरचन्द्र आदि की कृतियाँ भी संग्रहीत हैं। डा. प्रेमसागर जैन ने आराधना गीत, अम्बिका कथा एवं पाण्डवपुराण इन कृतियों का और उल्लेख किया है।^२

३०. कनककीर्ति

कनककीर्ति नामक दो विद्वान हो गये हैं। एक कनककीर्ति खरतर गच्छीय शाखा के प्रसिद्ध जिनचन्द्रसूरी की शिष्य परम्परा में नयकमल के प्रशिष्य एवं जय-मन्दिर के शिष्य थे। जैन गुर्जर कवियों भाग एक में इनकी दो रचनायें नेमिनाथरास एवं दीपद्वीरास का उल्लेख हुआ है। इनका निर्माण क्रमशः बीकानेर एवं जैसलमेर में हुआ था इसलिये संभवतः कवि उसी क्षेत्र के होंगे।

दूसरे कनककीर्ति दिगम्बर विद्वान थे और वे भी १७वीं शताब्दी के ही थे। उन्होंने अपने आपको माणिक का शिष्य होना बताया है। इन कनककीर्ति की दिगम्बर भण्डारों में पर्याप्त संख्या में कृतियाँ मिलती हैं। तत्त्वार्थ सूत्र की श्रुतसागरी टीका पर हिन्दी गद्य में जो टीका लिखी है वह दिगम्बर समाज में बहुत लोकप्रिय टीका है। इसकी भाषा ठूँडारी है इसलिये जगता है कि ये कनककीर्ति ठूँडाहड प्रदेश के किसी ग्राम अथवा नगर के रहने वाले थे। उन्होंने अपनी किसी भी रचना में खरतरगच्छ अथवा नयकमल के नाम का उल्लेख नहीं किया है इसलिये डा. प्रेमसागर जैन का दोनों विद्वानों को एक मानना सही प्रतीत नहीं लगता।^३

दिगम्बर कनककीर्ति की अब तक निम्न रचनाओं की खोज की जा चुकी है।

१. हिन्दी जैन भक्ति काव्य और कवि-पृष्ठ संख्या १३८
२. हिन्दी जैन भक्ति काव्य और कवि-पृष्ठ संख्या १३९
३. हिन्दी जैन भक्ति काव्य और कवि-पृष्ठ संख्या १७८

- १-तत्त्वार्थ सूत्र भाषा टीका
- २-बारहखड़ी
- ३-मेघकुमार गीत
- ४-श्रीपाल स्तुति
- ५-कर्म घटवासी
- ६-पार्श्वनाथ की आरती

उक्त रचनाओं के अतिरिक्त कनककीर्ति के पद, स्तवन, विनती आदि कितनी ही लघु कृतियाँ मिलती हैं। इन सभी कृतियों से कवि के दिगम्बर मतानुयायी होने का ही उल्लेख मिलता है।

३१. विष्णु कवि

विष्णु कवि उज्जैन के रहने वाले थे। संवत् १६६२ में इन्होंने भविष्यदत्त कथा को उज्जैन में समाप्त किया था। इसी कथा की एक मात्र अपूर्ण पाण्डुलिपि श्री दिगम्बर जैन सरस्वती भवन पंचायती मन्दिर मस्जिद नज़र देहली में संग्रहीत है। पूरा काव्य ४०१ चौपई छन्दों में निबद्ध है। भाषा बहुत सरल किन्तु सरस है। कवि ने अपना परिचय निम्न प्रकार दिया है :-

संवत् सोरहसँ हर्ष गर्ई, अधिक तापर छायाई भई ।
पुरी उज्जैनी कविनि वी दासु, विष्णु तहाँ करि रहयो निवासु ।
मन बच कम सुनौ सबु कोई, ब्रंथन्या सुनै पुत्र फल होइ ।
बहिरे गुन ति पावे कान, मूरिख हीहि ते चतुर सुबान ।
निर्धन सुनै एकु धित लोड, ता घर रिचि चडै सुभ भाइ ।
जो लवधारे चित्त मंझारि, रस रावण तहि आवे हारि ।
अचला होइ सय गुन रासि, जन्म न परै कर्म की पासि ।
श्रीर बहुत गुन कह लागि गनौ, धर्म कथा यहु मनु दे सुनौ ।
जन्म त होइ ताहि अवसान, निश्चय पदु पावे निर्वान ॥

श्वेताम्बर जैन कवि

३२. हरि कलश

हरि कलश खरनर गच्छ के साधु थे। ये जिन सन्ध्यामूरि की शिष्य परम्परा में होने वाले हर्षप्रभ के शिष्य थे। उनका साहित्यिक काल संवत् १६१५ से १६५७ तक का माना जाता है। इन्होंने बीकानेर एवं नागौर में सर्वाधिक विहार किया।

ये राजस्थानी भाषा के कवि कहलाते हैं। अब तक उनकी दस रचनायें प्राप्त हो चुकी हैं जिनके नाम निम्न प्रकार हैं—

- | | |
|-------------------------------|-------------------------------|
| १. सम्पत्कवकौमुदी (१६२४) | २. सिंहासन बत्तीसी (१६३६) |
| ३. कुमति विध्वंसन चौपई (१६१७) | ४. आराधना चौपाई (१६१३) |
| ५. अठारह नाता (१६१६) | ६. रत्नचूड़ चौपई |
| ७. सीती कवयिणी संवाद | ८. दूरियाली |
| ९. मुनिपति चरित्र चौपई (१६१८) | १०. सौलह स्वप्न सज्जाय (१६२२) |

३३. समयसुन्दर

समयसुन्दर का जन्म सांघोर में हुआ था। इनका जन्म संवत् १६१० के लगभग माना जाता है। डा० माहेश्वरी ने इसे सं० १६२० का माना है। इनकी माता का नाम लीनारे था। युवावस्था में उन्होंने दीक्षा ग्रहण करली और फिर काव्य, चरित, पुराण, व्याकरण छन्द, ज्योतिष आदि विषयक साहित्य का पहिले अध्ययन किया और फिर विविध विषयों पर रचनायें लिखी। संवत् १६४१ से आपने लिखना आरम्भ किया और संवत् १७०० तक लिखते ही रहे। इस दीर्घकाल में इन्होंने छोटी-बड़ी संकयों ही कृतियाँ लिखी थीं। समयसुन्दर राजस्थानी साहित्य के अभूतपूर्व विद्वान् थे, जिनकी की कहावतों में भी प्रशंसा वर्णित है।

“राजा ना ददले सौख्यम्” इन आठ अक्षरों के आवय के आपने १० लाख से भी अधिक अर्थ करके सम्राट अकबर और समस्त सभा को आश्चर्य चकित कर दिया था। “सिताराम चौपाई” नामक राजस्थानी भाषा में निबद्ध एक सुन्दर काव्य है। समयसुन्दर कुसुमाञ्जलि में आपकी ५६३ रचनायें प्रकाशित हो चुकी हैं। सखप्रद्युम्न चौपाई, मृगावती रास (१६६८), प्रियमेलक रास (१६७२), शत्रुजय रास, स्थूलिभद्र रास आदि रचनाओं के नाम उल्लेखनीय हैं।

३४. जिनराजसूरि

ये युग प्रधान जिनचन्द्रसूरि के प्रशिष्य थे। ये भी राजस्थानी भाषा में लिखने वाले कवि थे। इनकी शालिभद्र चौपई बहुत ही लोकप्रिय कृति है। “जिन राजसूरी कृति संग्रह” में इनकी सभा रचनायें प्रकाश में आ चुकी हैं। नैषधकाव्य पर इन्होंने ३३००० श्लोक प्रमाण संस्कृत टीका की थी। जिनराजसूरि ने संवत् १६८६ में आगरा में बादशाह शाहजहाँ से भेंट की थी।

३५. बामो

ये वाचक उदयसागर के शिष्य थे। इनका पूरा नाम दयासागर था। सं० १६७१ में इन्होंने जालौर में "भदन नारिश्च चौपई" की रचना समाप्त की थी। यह हिन्दी भाषा का एक सुन्दर प्रेम काव्य है। इस रचना के मध्य में रति सुन्दरी ने जो गुप्त लेख अपने प्रियतमा को भेजा था वह विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इसका एक पद्य निम्न प्रकार है—

विरह आगि उपजी अधिक अहुनिस दई सरीर ।
साहिब देहु पसाऊ करि, दरसन रूपी नीर ॥

३६. कुशललाभ

कुशललाभ राजस्थानी भाषा के उल्लेखनीय कवि थे। "दोलामारू चौपई" आपकी बहुत ही प्रसिद्ध कृति मानी जाती है। इन्होंने "दोलामारू का दूहा" के बीच-बीच में अपनी चौपाइयाँ मिलाकर प्रबन्धात्मकता उत्पन्न करने का प्रयास किया था। कुशललाभ की चौपाइयों में विरह रस में कोई व्याघात नहीं पहुँचा है अपितु कथा के एक सूत्र में वंश जाने से प्रबन्ध काव्य का आनन्द आया है। डा० हमारीप्रसाद द्विवेदी ने भी कुशललाभ की रचना कौशल की प्रशंसा की है।

कुशललाभ में कवित्व शक्ति गजब में थी। तीनों ही रसों में उन्होंने सकल काव्यों का निर्माण किया और साहित्य जगत में गहरी लोकप्रियता प्राप्त की। साधवानल चौपाई इतकी शृंगाररस प्रधान रचना है। श्री पूज्यवाहन गीत, स्थूलभद्र, छत्तीसी, तेजसार रास, स्तम्भन पार्श्वनाथ स्तवन, गौडी पार्श्वनाथ स्तवन और नवकारछंद इनकी भक्ति परक रचनाएँ हैं। स्थूलभद्र छत्तीसी का प्रथम पद्य देखिये—

सारद शरदचन्द्र कर निर्मल, ताके चरण कमल चित लाइकि
सुणत संतोष होई श्रवण कुं, नागर चतुर सुनइ नित भाइकि
कुशललाभ मुनि आनंद भरि, सुगुरुप्रसाद परम सुख पाइकि
करिह धूलभद्र छत्तीसी, अति सुन्दर पश्वंध बनाइकि

३७ मानसिंह मान

ये खरतरगच्छ के उपाध्याय शिव निधान के शिष्य और मुकवि। इनके रचनायें संवत् १६७० से १६८३ तक प्राप्त होती हैं। इन्होंने राजस्थानी एवं हिन्दी दोनों में काव्य रचनायें की थी। योग बावनी, उत्पत्ति-नाम एवं भाषा

कविरस संजरी के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। अन्तिम रचना शृंगार रस प्रधान है नायक नायिका वर्णन सम्बन्धी १०६ इसमें पद्य हैं। इसके आदि और अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है—

सकल कला निधि वादि गज, पंचानन परधान ।
श्री शिव विधान पाठक चरण, प्रणमी बंधे मुनि भान ॥१॥

नव अंकुर जीवन भई, लाल मनोहर होइ ।
कोयि सरल भूषण ग्रहे, चेष्टा मुग्धा होइ ॥२॥

अन्तिम— नारि नारि सब को कहे, बिऊ नाइकासु होइ ।
निज गुण मति मति रीति धरी, मान ग्रंथ अब लोइ ।

३८. उदयराज

उदयराज खरतगच्छीय साधु थे। मिश्रबन्धु विनोद में इनके आश्रयदाता का नाम महाराजा रायसिंह लिखा है। लेकिन भजन छत्तीसी में आश्रयदाता जोधपुर के महाराजा उदयसिंह थे ऐसा स्पष्ट होता है। श्री अमरचन्द नाहटा ने भी इसी मत को माना है।^१

भजन छत्तीसी में कवि ने लिखा है कि उन्होंने इसे संवत् १६६७ में पूर्ण किया था जब वे ३६ वर्ष के थे।^२ इनके पिता का नाम भद्रसार, माता का नाम हरणा, भ्राता का नाम सुरचन्द्र, पत्नि का नाम पुरवाणा, पुत्र का नाम सुदन और मित्र का नाम रत्नाकर था।^३

१. मिश्रबन्धु विनोद प्रथम भाग पृष्ठ ३६४

२. राजस्थान में हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज-भाग-२

परिशिष्ट १ पृष्ठ १४२-४३

३. सोलहसे सतसठे कीध जन भजन छत्तीसी

भक्तु बरस छत्तीस हुब भनि आवइ इसी

४. सम्पिता भद्रसार जनम समये हरणा उर ।

समपि भ्रात सुरचन्द्र मित्र समये रयणावर ॥

समपि कलमि पुरवाणि, समपि पुत्र सुदन दिवावर

रूप अने भक्तार ओ सो समये आपज रहण

उदरराज ब्रह्म लधौ रत्नौ, भव भव समये मह महण

भजन छत्तीसी पृष्ठ ३२

इनकी कृतियों में गुणवाचनी, भजन छत्तीसी, चौबीस जिन सर्वेश्वर, मन प्रसन्ना दोहा, एवं वंश विरहिणी प्रबन्ध के नाम उल्लेखनीय हैं। इनकी कविताओं में सरसता एवं सरलता है तथा पाठक को आकर्षण करने की शक्ति है। भजन छत्तीसी का एक पद्य देखिये—

प्रीति आथ परजले प्रीति अवंरा पर जाले
प्रीति गोत्र गालत्रे प्रीति सुध वंश बिटाले ।
प्रीति काज घर नारि त्रिद दे श्रीर छोडे ।
प्रीति लाज परिहरै प्रीति पर खंडे पाडे ।
धन परै देत दुख अंग में, अभाव भर लै अजरी जरै
उदेराज कह सुनि सगतभा इसी प्रीति जिण्ड करै ।

३९. श्रीसार

श्रीसार खतरगच्छीय भेमकीर्ति शाखा के श्री रत्नहर्ष के शिष्य थे। ये हिन्दी के अच्छे कवि एवं सफल गद्य लेखक थे। उनका समय १७वीं सताब्दी का अन्तिम चरण है। अब तक आपकी तीस से भी अधिक कृतियां प्राप्त हो चुकी हैं। कवि की और भी रचनाओं की खोज आवश्यक है।

४०. गरिा महानन्द

गरिा महानन्द के गुरु का नाम विद्याहर्ष था जो तपागच्छ शाखा के हीरविजयसूरी की परम्परा से सम्बन्धित थे। इनकी एकमात्र रचना अंजना सुन्दरी रास प्राप्त हुई है जिसे कवि ने संवत् १६६१ में रायपुर नगर में समाप्त की थी। इसकी एक पाण्डुलिपि जैन सिद्धान्त भवन आरा में संरक्षित है। एक वर्णन देखिये जिसमें अंजना सखियों के साथ खेलने का वर्णन दिया गया है—

फूलिय वनह बनगानीय वालीय करइ रे टकोल ।
करि कुंकुम रंग रोजीय धोलिय झकमझोल ॥
खेलइ खेल खंडो कलई, गोकली भहीयर सात ।
अंजना सुन्दरी सुन्दरी मंजरी गृही करी डान ॥५४॥

४१. सहजकीर्ति

सहजकीर्ति राजस्थानी भाषा के कवि थे। उनका सांगानेर निवास स्थान था तथा खतरगच्छ की क्षेम शाखा के नाथु थे। आचार्य हेमनन्दन के शिष्य थे। इनकी गुरु परम्परा में जिनसागर, रत्नसागर, रत्नहर्ष एवं हेमनन्दन के नाम

उल्लेखनीय है। राजस्थान इनका प्रमुख कार्यक्षेत्र माना जाता है। इनके द्वारा निबद्ध रचनाओं में प्रीति छत्तीसी, शत्रुजय, महात्म्यरास, सुदर्शन श्रेष्ठिरास, जिनराज सूरि गीत, जंसलमेर चंद्र प्रवाही, कलावती रास (१६६७), व्यसन छत्तीसी (१६६८), देवराज बच्छराज चौपई (१६७२), अनेक शास्त्र समुच्चय, पार्ष्वनाथ महात्म्य क. म., वैष्णव सत्संग कवि के नाम उल्लेखनीय हैं।

सहजकीर्ति की कितनी ही रचनायें दिगम्बर शास्त्र भंडारों में भी उपलब्ध होती हैं जिनमें चउबीस जिनमण्णवर वर्णन, पार्ष्वभजन बीस तीर्थंकर स्तुति आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। सहजकीर्ति का निश्चित समय तो मालूम नहीं हो सका लेकिन इनकी अधिकांश रचनायें १७वीं शताब्दी के तृतीय चरण की प्राप्त होती हैं। कवि की भाषा का एक उदाहरण निम्न प्रकार है—

केवल कमलाकर सुर, कोमल वचन बिलास ।
कवियण कमल दिवाकर, पणमिय कनविधि पास ।
सुर नर किद्धर वर भमर, सुन चरण कंज जास ।
सरस वचन कर सरसती, नमीयइ मोहाग बास ।
जासु पसायइ कवि लहइ, कविजन मई जस बास ।
हंस गमणि सा भारती, देउ प्रभू वचन बिलास ॥

—सुदर्शन श्रेष्ठिरास

४२. हीरानन्द मुकीम

हीरानन्द मुकीम आगरा के वनाढ्य आर्यक थे। शाहजादा सलीम से उनका विशेष सम्बन्ध था। ये जीहरी थे। यात्रा संघ निकालने में इन्हें विशेष रुचि थी। कविवर बनारसीदास ने भी अपने अर्द्ध कथानक में इनके सम्बन्धशिखर यात्रा संघ का उल्लेख किया है। श्री अग्रचन्द नाहटा के अनुसार “वीर विजय सम्बेद शिखर चंद्र परिपाटी” में यात्रा संघों का वर्णन दिया हुआ है। जिसमें साह हीरानन्द के संघ का भी वर्णन आया है। संघ में हाथी, घोड़े, रथ, पंदल और तुमकदार भी थे। संघ का स्थान स्थान पर स्वागत होता था।

हीरानन्द स्वयं कवि भी थे। इनके द्वारा लिखी हुई “अध्यात्म बावनी” हिन्दी की एक अच्छी कृति मानी जाती है। बावनी की रचना संवत् १६६५ आषाढ सुदी ५ है बावनी का प्रथम एवं अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है—

ऊँकार सरु पुरुष ईह अलग अगोचर
अंतरज्ञान विचारि पार पावई नहि को नर

ध्यान मूल मति जाणि आरि अंतरि हहरावड ।
 आत्म तत् अनुप रूप तसु ततषिण पावड ॥
 इम कहइ हीरानन्द संवपति अमल अटल इहु ध्यान थिरि ।
 सुहु सुरति सहित मन मइ घरउ भुमति भुगति दायक पवर ॥१॥

अंतिम पद्य—

मंगल करउ जिन पास आस पूरण कलि सुरतर ।
 मंगल करउ जिन पास दाम जाके सब सुर तर ।
 मंगल करउ जिन पास आस पय सेवई सुरपति
 मंगल करउ जिन पास तास पय पूजइ दिनपति
 मुनिराज कहई मंगल करउ, जिन सपरिवार श्री कान्ह सुख
 बावन्न बरग बहु फल करहु संवपति हीरानंद तुव ॥५७॥

४२. हेम विजय

हेमविजय आचार्य हीरविजयसूरि के प्रशिष्य एवं विजयसेनसूरि के शिष्य थे ।
 सवत् १६३९ में हीरविजयसूरी अकबर द्वारा आमंत्रित किये गये थे । इसी तरह
 विजयसेनसूरि भी सम्राट अकबर द्वारा आमंत्रित थे । इस तरह हेमविजय को अच्छी पुरु
 परम्परा मिली थी । हेमविजयसूरि हिन्दी के भी अच्छे विद्वान थे । इनके द्वारा निर्मित
 कितने ही पद मिलते हैं इनमें भी नेमिनाथ के पद उल्लेखनीय हैं एक पद देखिये—

कहि राजभती मुमती सखियान कूँ एक जिनैक खरी रहुरे ।
 सखिरी सगिरि अंगुरी मुही बाहि करति बहुत इसे निहुरे ।
 अबही तबही कबही जबही मदुराय कूँ जाय इसी कहुरे ।
 मुनि हेम के साहिब नेमजी हो, अब तोरन तें तुम्ह कयूँ बहुरे ।

४४. पदमराज

“अभयकुमार प्रबन्ध” पदमराज कृत हिन्दी काव्य है जिसमें अभयकुमार
 के जीवन पर प्रकाश डाला गया है । पदमराज खरतरगच्छ के आचार्य जिनहंस के
 प्रशिष्य एवं पुण्यसागर के शिष्य थे । जैसलमेर नगर में इसकी रचना समाप्त हुई
 थी । प्रबन्ध का रचना काल संवत् १६५० है । प्रबन्ध का अन्तिम पद्य देखिये—

संवत् सोलहसइ पंचमि जैसलमेरु नगर उलासि ।
 खरतरगच्छ नायक जिन हंस तस्य सीस गुणवंत संस ।
 श्री पुण्यसागर पाठक सीस, पदमराज पभणइ सुजगीस ।
 जुग प्रधान जिःचन्द मुनिदं विजयभान निरुपम आनन्द ।
 भणइ गुणइ जे चरित महंत, रिद्धि सिद्धि सुख ते पामन्ति ।

भट्टारक रत्नकीर्ति

[४६]

भट्टारक रत्नकीर्ति धर्म गुरु थे । उपदेश देना, विधि विधान कराना एवं संघ का संचालन करना जैसे उनके प्रमुख कार्य थे ^१ । लेकिन सबसे अधिक विशेषता उनकी काव्य शक्ति थी । वे गुजरात प्रदेश के रहने वाले थे । गुजराती उनकी मातृभाषा थी । लेकिन हिन्दी में उन्होंने भक्ति परक गीत लिखे और तत्कालीन समाज में जिन भक्ति के प्रति आकर्षण पैदा किया । रत्नकीर्ति का जन्म गुजरात प्रान्त में घोषा नगर में हुआ था । उनके पिता हुंबड आतोंय श्रेष्ठी देवदास थे ^२ । माता का नाम सहजलदे था । इनके जन्म के समय के सम्बन्ध में कोई जानकारी नहीं मिलती लेकिन इतना अवश्य है कि माता ने ऐसे उत्तम पुत्र को पाकर अपने आप को धन्य माना था । पुत्र जन्म पर घर में ही नहीं पूरे नगर में उत्सव आयोजित किये गये थे और माता-पिता भविष्य के सुनहले स्वप्न देखने लगे थे । बालक बड़ा होतहार था इसलिए उसने पढ़ने लिखने में देर नहीं लगी और थोड़े ही समय में उसने प्राकृत एवं संस्कृत का अध्ययन कर लिया । गुजराती उनकी मातृभाषा थी और हिन्दी उसने सहज रूप में सीख ली थी । थोड़े ही समय में वह अपनी बुद्धि चातुर्य एवं विनम्र शीलता के कारण सबका प्रिय बन गया ।

संवत् १६३० में अभयनन्दि भट्टारक गार्दी पर विराजमान थे । अभयनन्दि आचार्य कुन्दकुन्द की परम्परा में होने वाली मूलसंघ, सरस्वति समाज एवं बलात्कार गण शाखा में होने वाले भट्टारक लक्ष्मीचन्द्र के प्रशिष्य एवं अभयनन्दि के शिष्य थे । अभयनन्दि का उस समय काशी प्रभाव था और वे दिगम्बर गच्छ के शिरोमणि थे । गुरुओं के सागर एवं विद्या के केन्द्र थे । भट्टारक अभयनन्दि को जब बालक रत्नकीर्ति की बुद्धि के सम्बन्ध में जानकारी मिली तो वे उसको अपना शिष्य बनाने के लिए आतुर हो गये । एक दिन अकस्मात् ही जब अभयनन्दि का घोषा नगर में विहार हुआ तो वे बालक को देखते ही बड़े प्रसन्न हुए और उसकी बुद्धि एवं वाक् चातुर्य से प्रभावित होकर उसे अपना शिष्य बना लिया ।

१. राजस्थान के जैन सन्त-व्यक्तित्व एवं कृतित्व-पृष्ठ संख्या १२७ से १३४
२. हुंबड वंशे विबुध विख्यात रे, भात सेहजलदे देवीदास तात रे ।
कुंभर कलानिधि कोमल काय रे, यद यूजे जेम पातक पलाय रे ॥

यद्यपि रत्नकीर्ति ने पहले शास्त्रों का अध्ययन कर रखा था लेकिन भट्टारक अभयनन्दि इससे संतुष्ट नहीं हुए और पुनः उसे अपने पास रखकर सिद्धान्त, काव्य व्याकरण, ज्योतिष एवं आयुर्वेद विषयों के ग्रंथों का अध्ययन करवाया। बालक व्युत्पन्नमति था। इसलिये शीघ्र ही अपने ग्रंथों पर अधिकार पा लिया। अध्ययन समाप्त होने के पश्चात् अभयनन्दि ने उसे अपना पट्टाभिषेक जोषित कर दिया। बत्तीस लक्ष्यों एवं बहूतर कलाओं से सम्पन्न विद्वान् युवक को कौन अपना शिष्य बनाना नहीं चाहेगा।

संवत् १६२० के दक्षिण प्रान्त के जालणा नगर में एक विशेष समारोह आयोजित किया गया। समारोह के आयोजक थे संघपति पाक साहू तथा संघवणि रपाई तथा उनके पुत्र संघवी आसवा एवं संघवी रामाजी जो जाति से बघेरवाल थे। समारोह में भ. अभयनन्दि ने संवत् १६२० वैशाख सुदि ३ के शुभ दिन भट्टारक पद पर रत्नकीर्ति का पट्टाभिषेक कर दिया। उसका नाम रत्नकीर्ति रखा गया। इस पद पर वे संवत् १२५९ तक रहे। भट्टारक पदाभिषेक के समय वे सिद्धान्त ग्रंथों के परम वक्ता थे तथा आगम काव्य, पुराण, तर्क शास्त्र न्याय शास्त्र, छंद शास्त्र, नाटक आदि ग्रंथों पर वे अच्छा प्रवचन करते थे।

आकर्षक व्यक्तित्व

संत रत्नकीर्ति के सम्बन्ध में अनेक पद मिलते हैं जिनमें उनकी सुन्दरता, उनकी विबुधता एवं स्वभाव के विस्तृत वर्णन किये गये हैं। इन पदों के रचयिता हैं गणेश जो उनके शिष्यों में से एक थे। ये पद उस समय लिखे गये थे जब वे सिंहास करने थे। रत्नकीर्ति की सुन्दरता का वर्णन करते हुए कवि गणेश लिखते हैं उनकी आँखें कमल के समान थीं, उनका शरीर फूल के समान कोमल था जिसमें से कण्ठा टपकती थी। वे पापों के नाशक थे। वे सकल शास्त्रों के ज्ञाता थे और अपने प्रवचनों को इतना अधिक सरस बना देते थे कि जिसको सुनकर सभी ओतगद्गद् हो जाते थे। कवि ने उन्हें शोभन गणधर की उपमा दी है। इसी तरह एक दूसरे पद में उनकी सुन्दरता का व्याख्यान करते हुए गणेश कवि लिखते हैं कि उनकी कांति चन्द्रमा के समान थी। उन की दंत पंक्ति वाह्य के समान थी। उनकी वाणी से मधुर रस टपकता था। उनके अधरोष्ठ बिम्ब कल के समान थे। उनके हाथ अत्यधिक कोमल थे तथा हृदय विशाल था। वे पाँचों महाव्रतों के धारी, पाँच समिति एवं तीन गुप्ति के पालक थे। उनका उदय पृथ्वी पर अभयकुमार के रूप में हुआ था वे दिगम्बर

आगम काव्य पुराण सुलक्षण, तर्क न्याय गुरु जानें जो।

छंद नाटिका विंगत सिद्धान्त, पृथक् पृथक् बखानें जो॥

गीत/रत्नि० सं० ९/पृष्ठ ६६-६७

धर्म के शृंगार स्वरूप थे। उन्होंने कामदेव पर बालकपने से ही विजय प्राप्त कर ली थी। वे धर्म्यधिक विनयी, विवेकी, मानव थे और दान देने में उन्होंने देवताओं की भी पीछे छोड़ दिया था। विद्वत्ता में वे अकलंक निष्कलंक एवं गोवर्धन के समान थे। कवि ने लिखा है ऐसे महान संत को पाकर कौन समाज गौरवान्वित नहीं होगा। एक अन्य पद में कवि गणेश ने लिखा है कि वे गोमटसार के महान ज्ञाता थे और अभयकुमार के समान व्युत्पन्न मति थे। उनके दर्शन मात्र से ही विपत्तियाँ स्वयमेव दूर भाग जाया करती थी।

बिहार

रत्नकीर्ति २७ वर्ष तक भट्टारक रहे। इस अवधि में उन्होंने सारे देश में बिहार करके जैन धर्म एवं संस्कृति तथा साहित्य का खूब प्रचार प्रसार किया। उनका मुख्य कार्यक्षेत्र गुजरात एवं राजस्थान का बागड़ प्रदेश था। बारडोली में उनकी भट्टारक गादी थी इसलिये उन्हें बारडोली का संत भी कहा जाता है। उनकी गादी की लोकप्रियता आसमान को छूने लगी थी इसलिये उन्हें स्थान-स्थान से सादर निमन्त्रण मिलने थे। वे भी उन स्थानों पर बिहार करके अपने भक्तों की बात रखते थे। वे जहाँ भी जाते सारा समाज उनका पलक पावड़े बिछाकर स्वागत करता था। उनके मुख से धर्म प्रवचन सुनकर कृत कृत्य हो जाता। उनके बिहार के संबंध में लिखे हुए कितने ही गीत मिलने हैं जिनमें उनके स्वागत के लिये जन भावनाओं को उभारा गया है। यहाँ ऐसा एक पद दिया जा रहा है—

सखी री श्रीरत्नकीरति जयकारी

अभयतंद पाद उदयो दिनकर, पंच महाप्रत घारी।
सास्त्रसिधांत पुण्य ए ओ मो तकें वितकें विचारी।
गोमटसार संगीत सिरोमणी, जाणी गोयम प्रवतारी।
साहा देवदास केरो मुत मुखकर सेजसदे उर भवतारी।
गणेश कहे तुम्हें नंदो रे भविगण कुमति कुसंग निवारी ॥

इसी तरह के एक दूसरे पद में और भी सुन्दर ढंग से रत्नकीर्ति के व्यक्तित्व को उभारा गया है जिसके अनुसार ७२ कलाओं से युक्त, चन्द्रमा के समान मुख वाले गच्छ नायक, रत्नकीर्ति विशाल पांडित्य के धनी हैं। जिन्होंने मिथ्यात्वियों के मन का मर्दन किया है तथा बाद विवाद में अपने आपकी सिद्धि के समान सिद्ध किया है। सरस्वती जिनके मुख में बिराजती है। वह मान सरोवर के हंस के समान, नम मंडल में चन्द्रमा के समान सम्यक चरित्र के धारी, तथा जैनधर्म के मर्मज्ञ, ज्ञानराज-पुर में प्रसिद्धि प्राप्त, मेघाढी, संधवी तोला, आसवा, मली के आराध्य ऐसे भट्टारक

रत्नकीर्ति का जोरदार स्वागत के लिये कवि गणेश जन सामान्य को प्रेरित करता है ।^१

एक अन्य पद में भट्टारक रत्नकीर्ति खान मलिक द्वारा सम्मानित हुए थे ऐसा भी उल्लेख मिलता है ।^२ रत्नकीर्ति 'गोरखन्दर' गये । घोघा नगर में तो वे जाते ही रहते थे । बारडोली उनका केन्द्र था । बागड प्रदेश के सागवाड़ा गलियाकाँट एवं बांसवाड़ा आदि में भी बराबर जाते रहते थे ।

f

प्रतिष्ठा वधान

रत्नकीर्ति ने कितने ही विधान एवं प्रतिष्ठाएं सम्पन्न करवायी थी । पंचकल्याणकों में वे स्वयं प्रतिष्ठाचार्य बनते और प्रतिष्ठाओं का संचालन करते थे । उनके द्वारा सम्पन्न तीन प्रतिष्ठाओं का वर्णन मिलता है जिनके माध्यम से वे तत्कालीन समाज में धार्मिक भावनाओं जाग्रत किया करते थे । सबसे पहिले उन्होंने दादुनगर में संवत् १६३६ में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा सम्पन्न करवायी ।^३

संवत् १६४३ में बारडोली नगर में ही बिम्ब प्रतिष्ठा का आयोजन सम्पन्न करवाया । नगर में चारों प्रकार के संघ का मिलन हुआ । भट्टारक रत्नकीर्ति के परामर्शानुसार कंकोली । (निमन्त्रण पत्र) लिखे गये जिन्हें गाँवों में एवं नगरों में भेजा गया । विशाल मंडप बनाया गया तथा प्रतिष्ठा महोत्सव में अंकुरारोपण, जलयात्रा, आदि विविध क्रियाएं सम्पन्न हुई । पंच कल्याणक प्रतिष्ठा समाप्ति पर प्रतिष्ठाकारकों के रत्नकीर्ति ने तिलक किया उनके साथ तेजबाई, जैमल, मेघाई,

१. कला बहोतरी कोडामणो रे, कमल बदन करणाल रे ।
गद्य नायक गुण आगलो रे, रत्नकीरति विबुध विशाल रे ॥
आदो रे मामिनी गजगामिनी रे, स्वामि जी वाणि विख्यात रे ।
अभयनंद पक्ष कंज दिनकर रे, धन एहना मात ने तात रे ॥
२. लक्षण बरतीस सकल अंगि बहोतरि, खान मलिक दिये मानजे ।
गोरगीत पृष्ठ संख्या १९५ ।
३. सांगसीर सुखी पंचमी दिने, कुकम चित्रि लखाय ।
देस देस पठावे पंडित, आवे सज्ज बंध ।
विध प्रतिष्ठा जोव जह्ये पुण्य तस वर कंद ॥

मानेज गोपाल, बेजलदे, मानबाई बहिन आदि सभी थे। यह प्रतिष्ठा संवत् १६४३ वैशाख सुदी पञ्चमी गुरुवार के शुभ दिन समाप्त हुई थी।^४

बलसाड नगर में फिर उन्होंने पंच कल्याणक प्रतिष्ठा सम्पन्न कराई। यह प्रतिष्ठा हुंबड वंशीय मल्लिदास ने कराई थी। उसकी पत्नी का नाम राजबाई था। उसके जब पुत्र जन्म हुआ तब मल्लिदास ने दान आदि में खूब पैसा लगाया तथा एक पंच कल्याणक प्रतिष्ठा का आयोजन किया। मंगसिर सुदी पंचमी के दिन कुंकुम पत्रिका लिखी गई।

चारों ओर गांवों में पंडितों को भेजा गया। पत्रिका में लिखा गया कि जो भी पंच कल्याणक प्रतिष्ठा को देखेगा उसे सहान पुण्य को प्राप्ति होगी।^१ पंच कल्याणक प्रतिष्ठा की पूरी विधि सम्पन्न की गयी। अंकुरारोपण, वस्तु विधान नांदी मंडल, होम, जलयात्रा आदि विधान कराये गये। मंडल में भट्टारक रत्नकीर्ति सिंहासन पर धिराजगान रहते थे। विविध वाद्य यंत्र बजाये गये थे। संधपति मल्लिदास, संधयेण मोहनदे, राजबाई आदि की प्रशान्ता की सीमा नहीं रही। अन्त में कलशाभिषेक सम्पन्न हुए तब प्रतिष्ठा समारोह को समाप्ति की घोषणा की गयी।^२

इसके पश्चात् माघ सुदी एकदशी के शुभ दिन भट्टारक रत्नकीर्ति ने ब्रह्म

१. एसी परे सज्जन आवयाए, थोजिन मंडप द्वार के
उत्सव सोभताए याग मंडल विध सोभतिए।
संधपूज सुखकार के, उत्सव अति घराए
जिन उपर कुंम ठालायाए, जय जयकार सुधायके॥
पंच कल्याणक विध हवाए, थो रत्नकीर्ति गुरुराय के॥
२. अरे संध मेल्या विविध वेशना, सोल छतीस ए।
वैशाख बुदि एकवसी सोमवार, प्रतिष्ठा तिलक असोस ए।
गीत पृष्ठ संख्या ६५
३. थो रत्नकीर्ति भट्टारक बचने, कंकोलि लखाई जे।
गाँम गाँमनी संध सेजवाला में मे पाता आवे॥
मंडल रचना अति घरी उपमा, अंकुरारोपण उदार जे।
जल यात्रा सांतिक संध पूजा, अन्न दान अपार जी॥
संवत् सोल छेहतालि, वैशाख बधि पंचमी ने गुरुवार जी।
रत्नकीर्ति गौर तिलक करे, धन्य थो संध जय जयकार॥

जयसागर को आचार्य पद पर दीक्षित किया। सर्वे प्रथम प्रासुक जल से स्नान कराया गया। भट्टारक रत्नकीर्ति ने उसके माथे पर तिलक किया तथा पांच महाव्रतों की अंगीकार कराया गया।^३

इस प्रकार भट्टारक रत्नकीर्ति जीवन पर्यन्त देश के विभिन्न भागों में विहार करते रहे। वास्तव में भट्टारक रत्नकीर्ति का युग भट्टारकों का स्वर्ण युग था जब सारे देश में उनके त्याग एवं तपस्या की इतनी अधिक प्रभावना थी कि समाज का अधिकांश भाग उन पर समर्पित था। उनके आदेश को शिरोधार्य करने में ही जीवन की उपलब्धि मान जाता था। भट्टारक संस्था भी अपने आपको साधु समाज का एक प्रतिनिधि बनने का पूरा प्रयास करनी रही। समय-समय पर अपने को योग्य प्रमाणित किया और समाज एवं संस्कृति के विकास में पूर्ण जागरूक रहा। रत्नकीर्ति का विशाल व्यक्तित्व राजा की आशाओं का केन्द्र था।

शिष्य परिवार

रत्नकीर्ति जैसे तो अनेकों शिष्यों के आचार्य थे, जीवन निर्माता थे और उनके मार्गदर्शक भी, वे लेकिन उनमें से कुमुदचन्द्र, ब्रह्म जयसागर, गणेश, राधव एवं दामोदर के नाम विशेषतः उल्लेखनीय हैं। इन सभी ने रत्नकीर्ति के सम्बन्ध में पद एवं गीत लिखे हैं। कुमुदचन्द्र तो रत्नकीर्ति के पश्चात् भट्टारक गादी पर ही बैठे थे। वे योग्य गुरु के योग्य शिष्य थे। लेकिन गणेश ने रत्नकीर्ति के संबन्ध में सबसे अधिक पद एवं गीत लिखे हैं। इन सबके सम्बन्ध में आगे विस्तृत प्रकाश डाला जायेगा। ऐसा लगता है कि रत्नकीर्ति के साथ उनका शिष्य परिवार भी चलता था और वह उनके प्रति अपनी भक्ति भाव प्रगट करता रहता था। रत्नकीर्ति की परम्परा के भट्टारकों को छोड़कर अन्य भट्टारकों के सम्बन्ध में इस प्रकार के गीत एवं पद प्रायः नहीं मिलते हैं।

कृतित्व

रत्नकीर्ति भक्त कवि थे। नेमिराजु के जीवन ने उन्हें सबसे अधिक

३. माघ सुदी एकादसीए ए सोभन सुक्रवार के।
थी रत्नकीर्ति सुरीवर हसा तिलक हवा जयभार के।
कहम जयसागर जगन्नाथ ए आचारज पद सार के।
जल यात्रा जन देखताए, श्री रत्नकीर्ति यतिराय के।
पांच महाव्रत आवया ए संध सानीध्य गुरुराय के।
मत्सिदासनी खेल

प्रभावित किया था। यही कारण है कि उनकी अधिकांश कृतियों में ये दोनों ही प्राराध्य रहे हैं। नेमिराजुल का एक प्रकार का वर्णन अन्य किसी कवि द्वारा लिखा हुआ नहीं मिलता है। अब तक जितनी खोज हो सकी है उसके अनुसार कवि के ३८ पद प्राप्त हो चुके हैं तथा १ अन्य लघु रचनाये हैं। यद्यपि ये सभी लघु कृतियाँ हैं लेकिन भाव एवं विषय की दृष्टि में सभी उच्च कोटि की कृतियाँ हैं। रत्नकीर्ति सन्त थे लेकिन अपने पदों में उन्होंने विरह एवं शृंगार दोनों ही का अच्छा वर्णन किया है। वे राजुल के सौन्दर्य एवं उसकी तड़फन से बड़े प्रभावित थे। यही कारण है उनकी प्रत्येक कृति में दोनों ही भावों की कमी नहीं है।

सावन का महिना विरही युवतियों के लिये असह्य माना जाता है। जब आकाश में काले काले बादलों की घटा छा जाती है। कभी वह गरजती है तो कभी बरसती है। ऐसी प्राकृतिक वातावरण में राजुल भी अकेली कैसे रह सकती थी। इसलिये वह भी अपने विरह को अपनी सखियों के समक्ष बहुत ही करुणामय शब्दों में निम्न प्रकार व्यक्त करती है--

सखी री सावनी घटाई सतावे
रिमझिम खून्द बदरिया बरसत, नेमि मेरे नहीं आवे ।
कूँजत कीर कोकिला बोलत, पपीया वचन न लावे ।
दादूर मोर चोर घन गरजत, इन्द्र धनुष डरावे ॥सखी॥
लेख लखू री गुपति वचन को, जटुपति कूँज गुनावे
रत्नकीरित प्रभु निठोर भयो, अपना वचन बिसरावे ॥

रत्नकीर्ति ने उक्त पद में राजुल की विरही अबला का बहुत ही सही चित्रण किया है। इसमें राजुल की आत्मा बोल रही है और वह नेमि पिशा के मिलन के लिये व्याकुल हो चली है। कभी कभी पति त्याग के कारण को लेकर राजुल के मन में अन्तर्द्वन्द्व होने लगता है। पशुओं की पुकार का बहाना उसके समक्ष में नहीं आता और वह कहती है कि सम्भवतः मुक्ति रूपी स्त्री के वरण के लिये नेमि ने राजुल को छोड़ी है। पशुओं की पुकार तो एक बहाना है। इसलिये वह कह उठती है कि “रत्नकीर्ति प्रभु छोड़ी राजुल मुगति वधु विरमाने।”

कभी कभी राजुल नेमि के घर आने का स्वप्न लेने लगती है और मन में प्रफुल्लित हो उठती है। एक ओर नेमि हरी है तथा दूसरी ओर वह स्वयं हरिबदनी है। हरि के सहस्र ही उसकी दो आँखें हैं तथा अधरोष्ठ भी हरिलता के रंग वाले हैं। इस तरह वह अपने शरीर के सभी अंगों को हरि के अंगों के समान मान बैठती है और मन में प्रसन्न हो उठती है।

लेकिन जब उसे वास्तविक स्थिति का बोध होता है तो वह नेमि के विरह में तड़पने लगती है और एक रात्रि के सहवास के लिये ही उनसे प्रार्थना करने लगती है। वह कहती है कि प्रातः होने पर चाहे वे दीक्षा स्वीकार कर लें लेकिन एक रात्रि को कम से कम उनके साथ व्यतीत करने पर वह अपने जीवन को धन्य समझ लेगी।

नेमि तुम आवां धरिय धरे

एक रयनि रही पात पियारे बोहोरी चारित धरे ।।नेमा।।

और जब नेमि राजकुल को बार बार पुकार पर भी नहीं आते हैं तो राजकुल भी रुठने का बहाना करती है क्योंकि पता नहीं रुठने से ही नेमि आ जावे इसलिये वह नेमि के पास अपना सन्देश भेजती है कि न वह हाथ में मेहनती मांडेगी और न आंखों में कालजल डालेगी। वह गिर का अलंकार नहीं करेगी और न मोतियों में अपनी मांग को भरेगी। उसे किसी से भी बोलना अच्छा नहीं लगता। वह तो नेमि के विरह में ही तड़पती रहेगी और उनकी दासी बनकर रहना चाहेगी।

न हाथे मंडन कहं फजरा नेन भरुं

होउ रे बेरागत नेम की चेरी।

सीस न भांगन देउं मांग मोती न लेउ।

अब फोर हूं तेरे मुगनी चेरी।

नेमि के विरह में राजकुल पागल हो जाती है इसलिये कभी वह अपनी सजनी से पूछती है तो कभी चन्द्रमा से बात करने लगती है। कभी वह कामदेव को उलहाना देती है तो कभी वह जलधर से गजना नहीं करने की प्रार्थना करती है। बड़ा दर्द भरा है कवि के गीत में। राजकुल के हृदयगत भावों को उभाड़ने में कवि पूर्णतः सफल हुआ है।

गुनो मेरी मयनी धन्य या रयनी रे।

पीयु घर आवे तो जीव सुख पावे रे।।

मुनि रे विधाता चन्द्र संतापी रे

विरहनी बन्ध के साधेय दुआ पापी रे।

गुन रे मनमथ बलिया एक भुज रे।

नेमि राजकुल के अतिरिक्त महाराज रत्नकीर्ति ने भगवान राम के स्तवन के रूप में पद्य लिखे हैं। कवि ने राम की जिस रूप में स्तुति की है उसमें उसने

महाकवि तुलसीदास जैसी जैसी की खपनाया है । ऐसा मान्य होता है कि महाकवि तुलसी एवं सूरदास ने राम एवं कृष्ण भक्ति की जो गंगा बहायी थी उससे रत्नकीर्ति अपने आपको नहीं बना पाये और वे भी राम भक्ति में समा गये और 'वन्देह जनता शरण' तथा कमान कदन करुणा निलय जैसे कुछ सुन्दर भक्ति पूर्ण पद लिखकर जन गणस को राम भक्ति में डुबो दिया । कवि का एक पद देखिये—

वन्देह जनता शरण

दशरथ नंदन दुरति निकेदध, राम नाम शिव करन ॥१॥

अमान अन्ता अनादि अविकल, रहित जनम जरा मरन ।

अलख निरजन धुध मन रजग, सेवक जग अधशत हरन ॥२॥

काम रूप करुण रस फारिस, गुर भगनायक गुत चरण ।

रत्नकीरति कहे सेवो सुन्दर भवउदधि तारन तरन ॥३॥

रत्नकीर्ति के अर्थ तक निम्न पद एवं कृतियां प्राप्त हो चुकी हैं ।

१. सारंग ऊपर सारंग मोहे सारंगत्वासार जी
२. सुण रे नेभि सामलीया साहेब क्यों बन छोरी जाय
३. सारंग सजी सारंग पर आवे
४. वृषभ जिअ मेवो बहु प्रकार
५. सखी री भावन बटाई गतावे
६. नेम तुम कैसे चले गिरिनगर
७. कारण कोउ पीया को न जाये
८. राजुल मेहे नेमी जाय
९. राम बताये रे मोही रावन
१०. अब गिरि बरज्यो न माने मोरो
११. नेभि तुम आवो धरिय परे
१२. राम कहे खबर जया मोही भागी
१३. दशरथ वीनती अहत होइ दास
१४. बरज्यो न माने नयन निटोर
१५. झीलने कड़ा करयो मधुनाथ
१६. सरद की रयनि सुन्दर सोहात
१७. सुन्दरी मथल सिनार करे गोरी
१८. कहा थे मंडन कह कजरा नैन भर
१९. सुनो मेरी रायनी धन्य या रयनी रे

२०. रथडो नीहानती रे पूछति सहे सावन नी बाट
२१. सखी को मिलावो नेम नरिदा
२२. सखी रे नेम न जानी पीर
२३. बदेहं जनता शरणं
२४. श्रीराग गावत सुर किन्नरी
२५. श्रीराग गावत सारंगघरी
२६. आजू आनी आये नेम नो साउरी
२७. बली बंधो का न बरज्यों अपनो
२८. आजो रे मखि सागलियो बहालो रथि परि छडि आवे रे
२९. गोछि बडी जुए राजुन रागी नेनिहुनर वर जावे रे
३०. आधो सोहामणीसुन्दरी वृन्द रे पूजिये प्रथम जिणंद रे
३१. ललना समुद्रजिजय सुत साम रे अदुपति नेमकुमार हो
३२. मुणिए खनि राजुन रहे हैड हरेष न माय जाल से
३३. सशधर वदन सोहामणि रे, गजगामिनी गुणमाल रे
३४. वरागरसी तनरी नो राजा अवबगेन का गुणशर
३५. श्रीजिन सनमति अवतरला ना रंगो रे
३६. नेम जी दयालुदारे तू तो यादव कुन सिणगार
३७. कमल वदन कण्ठा निलयं
३८. सुदर्शन नाम के में वारि

अन्य कृतियां

३९. महावीर भीत
४०. नेमिनाथ फागु
४१. नेमिनाथ का ब'हरमासा
४२. सिद्ध धूल
४३. धनिभदनी बीनती
४४. नेमिनाथ बीनती

उक्त नामांकित पदों के प्रतिष्ठित रत्नकीर्ति को सबसे बड़ी रचना "नेमिनाथ फागु" है। इस फागु में अगवान नेमिनाथ एवं राजुन का जीवन वर्णित है। 'फागु' नामांकित इस कृति में कवि श्रृंगार रस में अधिक धके है और प्रत्येक वर्णन को श्रृंगार प्रधान बना दिया है। राजुन की सुन्दरता का वर्णन करते हुए कवि ने उसे एक से एक सुन्दर उभमा में प्रस्तुत किया है। ऐसी ही चार पंक्तियां पाठकों के अवलोकनार्थ प्रस्तुत की जा रही है।

चंद्र बदली मृग लोचनी मोचनी खंजन मीन ।
बासग जीरयो बेणिहं, थेसिया मधुकर दीन
पुगल गल दीये सणि, उपमा नाशा कीर
अधर चिद्रूम सम उपता, दंतनू निर्मलनीर ॥

फाग में ५८ पद्य है जिनमें राजुन नेमि का जन्म से लेकर विवाह तक की घटना का वर्णन किया गया है। फाग में भी राजुन की विरह वेदना को सशक्त शब्दों में व्यक्त करने का कवि का ध्येय रहा है। और उसमें कवि पूर्णतः सफल भी रहे हैं।

फाग का रचना स्थान हांसोट नगर रहा था जो गुजरात का प्रमुख सांस्कृतिक नगर था। फाग की राग केदार है।^१

बाहरमासा.....भट्टारक रत्नकीरति की यह कृति भी वही रचनाओं में से है। इनमें नेमि के विषय में राजुन के बारह महिने कैसे व्यतीत होते हैं इसका सुन्दर वर्णन किया गया है। कवि का बाहरमासा जेठ मास से प्रारम्भ होता है तथा प्रत्येक महिने का वह विस्तृत वर्णन करता है वह राजुन के विरही जीवन के प्रत्येक मनोगत भावों को उभारता चाहता है जिसमें वह पर्याप्त रूप से सफल हुआ है।

आधाड़ मान आते ही पति का विरह और भी रताने लगता है। दादुर क्या बोलते हैं मानों प्राण ही निकलते हैं। धनी वर्षा होती है। अंधेरी रात्रियां होती हैं तो पिथ की वाट जाहते-जोहते अंधों में घासू आ जाते हैं। पड़ोहा पिउ पिउ बोलने लगता है तो राजुन कैसे धैर्य धारण कर सकती है। वृक्ष भी घास में हवा के झोंको के साथ जब हिलने हैं तो वे गरसर में खान करते हुए लगने हैं। और जब मयूर अपने पंखों को फलाकर मयूरी के मन को प्रसन्न करता है तो मन अधीर हो जाता है। जब आकाश में मिजली लवक-लवक कर भभकने लगती है तो उसकी कोमल काया उसे कैसे सहन कर सकती है। बिना पिया के वह धकेली कैसे रह सकती है।

तिम तिम नाहनो नेह ताजे आधाडि अगान ।

दादुर बोले प्राण ताजे बरसाते विशाल ।

१. नेमि विलास उल्लास स्यु, जो गासे नर नारि
रत्नकीरति सूरिवर कहे, ते लहे सील्य अपार ॥ १ ॥
हांसोट भाहि रचना रची, फाग राग केदार
औं जिन जुग घन जाणये, सारदा भर दातार ॥ २ ॥

दिवस अंधारी रातडी बलि बाट घाटे नीर
 बासीयडो पिउ पिउ बोले किम घर मन धीर
 तर तरणी साखा करे भाषा सांजजा सोहेत ।
 रितुकाल मोर कला करी मयूरी मन भोहेत ।
 अज सखी अगाल आव्यो तन्हई ने मेह ।
 सबक शब्दके बिजली किम सेह कोमल देह
 आथो परा सांखन रासे करे कायिनि लज
 किम रहू हूं एकली रे आवयो आषाढ़ ।

भाषा:—बारहमासा की भाषा पर गुजराती का अधिक प्रभाव है क्योंकि इसकी रचना भी धोघा नगर के जिनवैत्यालय में की गई थी। धोघा नगर १६वीं शताब्दी में भट्टारकों के विहार का प्रमुख केन्द्र था। वहां आवकों की अच्छी बस्ती थी। जिन मन्दिर था। वह सागर के किनारे पर बना हुआ था।

शेष रचनाएं:—कवि की अन्य सभी रचनाएं गीत रूप में हैं जिनमें नेमि राजुल प्रकरण ही प्रमुख रूप से प्रस्तुत किया गया है। उसके गीतों की भाषा नेमि राजुल इसी तरह है जिस तरह मीरा के कृष्ण रहे थे। अन्तर इतना सा है कि एक ओर नेमिनाथ विरागी जीवन अपनाने हैं। अपनी तपस्या में लीन हो जाने हैं और राजुल उनके लिये तड़कती / अपने विरह की व्याथा सुनाती है, रोती है और अंत में जब नेमि तपस्वी जीवन पर ही धने रहते हैं तो वह स्वयं भी तपस्विनी बन जाती है तथा भोगों से विरक्त होकर जगत के समक्ष एक प्रतीक्षा उदाहरण प्रस्तुत करती है। नेमि राजुल के प्रसंग में भट्टारक रत्नकीर्ति अपने गीतों के माध्यम से राजुल के मनोगत भावों का, उसकी विरही जीवन का सजीव चित्र उपस्थित करता है जबकि मीरा स्वयं ही राजुल बनकर कृष्ण के दर्शनों के लिये लानाथित रहती है स्वयं गाती है, नाचती है और अपने आराध्य की भक्ति में पूर्णतः समर्पित हो जाती है।

भट्टारक रत्नकीर्ति अपने समय के प्रमुख सन्त थे। उनका पूर्णतः विरागी जीवन था। साध हो में वे लेखनी के भी धनी थे। अपने भक्तों, अनुयायियों एवं प्रशासकों के अतिरिक्त समस्त समाज को नेमि राजुल के प्रसंग से जिन भक्ति में समर्पित करना चाहते थे। लेकिन जिन भक्ति का उद्देश्य भोगों की प्राप्ति न होकर कर्णों की निर्जरा करना था। इसलिये ये गीत १७वीं सदी में बहुत लोकप्रिय रहे और समस्त देश में गाये जाते रहे।

वे अपने समय के प्रथम सन्त थे जिन्होंने नेमि राजुल के प्रसंग को अपने

पदों की विषय वस्तु बनाया। उनके समय में मीरा एवं घूरदास के राधा कृष्ण से सम्बन्धित पद लोकप्रिय बन चुके थे और भक्ति रस से मोतप्रोत भक्त को उनके अतिरिक्त कुछ नहीं दिख रहा था। भट्टारक रत्नकीर्ति ने समय की गति को पहिचाना और अपने अनुयायियों एवं समाज का ध्यान आकृष्ट करने के लिये नेभि राजुल कथनरूप को इतना उछाला कि उसमें उन्हें पूर्ण सफलता प्राप्त हुई। राजुल के मनोगत भावों को व्यक्त करते समय वे कभी स्वाभाविकता से दूर नहीं हटे और जो कुछ भाव तौरण द्वार से लीटने पर अपने पति के प्रति किसी नयोद्धा के हाने चाहिये उन्हीं भावों को अपने पदों में उतारने में उन्हें आशासीत सफलता मिली।

भट्टारक कुमुदचन्द्र

[४७]

कुमुदचन्द्र भट्टारक रत्नकीर्ति के प्रमुख शिष्य थे। वे भट्टारक गान्धी पर रत्नकीर्ति के द्वारा अभिविक्त किये गये और बागड़ एवं गुजरात प्रदेश के धर्माधिकारी बन गये। भ. रत्नकीर्ति ने अपनी गायत्री की यशोगाथा को चारों ओर फैला दिया था इसलिए कुमुदचन्द्र के भट्टारक बनते ही उनकी भी कीर्ति चारों ओर फैलने लगी। जब वे भट्टारक बने तो गुवा थे। सौन्दर्य उनके चरित्रों को नमता था। सरस्वती की उन पर पहिले से ही कृपा थी। उन ती वाणी में आकर्षण था इसलिये वे जन-जन के विशेष प्रिय बन गये और समाज पर उनका पूर्ण वर्चस्व स्थापित हो गया।

कुमुदचन्द्र का जन्म गोपुर ग्राम में हुआ था। पिता का नाम सदाफल एवं माता का नाम पद्मबाई था। वे मोहबंश के सन्ने सपुत्र थे।^१ उनका जन्म का नाम क्या था इसका कहीं उल्लेख नहीं मिलता लेकिन वे जन्म से ही होतहार थे युवावस्था के पूर्व ही उन्होंने संयम धारण कर लिया था। उन्होंने इन्द्रियों के तगर की उजाड़ कर कामदेव स्त्री नाग को महज के ही जीत लिया।^२ अध्ययन की ओर उनकी प्रारम्भ से ही रुचि थी इसलिए वे गान दिन व्याकरण, नाटक, न्याय, आगम-शास्त्र, छंद शास्त्र एवं अलंकारों का अध्ययन किया करते थे।^३ भोभटसार जैसे ग्रन्थों का उन्होंने विशेष अध्ययन किया था। गुर्वावली गीतों में कुमुदचन्द्र का निम्न प्रकार गुणमान गाया गया है—

१. मोह बंश शृंगार शिरोमणि साह सदाफल तगत रे
जायो अतिबर जुग जयवन्तो पद्मबाई सोहात रे।
२. बालपणे जिराो संयम लिखो, धरीयो चेराम रे।
इन्द्रिय ग्राम उजारया हेला, जीत्यो सब नाग रे।
३. अहनिशि छन्द व्याकरण नाटिक भरो
न्याय आगम अलंकार।
बाबोगज केशरी विरुद्ध वास रे
सरस्वती गच्छ सिरानार रे।

गीत धर्म सागर कृत

तस पद कुमुद कुमुदचन्द्र, क्षमावतं गुरु गतं तत्र ।
 मुनीन्द्र चंद्र समो यश उजलोए
 + + + + + + +
 कुमुदचन्द्र जेहलो चांदलो, रत्नकीरति पाटे गोरह भलो ।
 मोढवंश उदयाचल रवि, जेहना वचन बखार्णे कवि ।

एक गीत में कुमुदचन्द्र की सभी दृष्टियों से प्रशंसा की गई है । गीत अनुसार पंचाचार, पाँच सगिति एवं तीन गुप्ति के वे पालनकर्ता थे । क्रोध कषाय पर उन्होंने प्रारम्भ से ही विजय प्राप्त करली थी । कामदेव पर भी उनकी विजय अदभुत थी इसलिये वे शीलशृंगार कहलाते थे । गीत में उनकी जन्मभूमि, माता पिता एवं वंश सभी का गुणानुवाद किया है—यहीं नहीं उनकी शारीरिक विशेषताओं को भी गिनाया गया है ।

समिति गुपति आदि ए गाले चरित्र तेर प्रकार ।
 क्रोध कषाय तजी रे वेगे जीत्यो रति भरतार ।
 शील शृंगार सोहे रे वृद्धि उदयो अभयकुमार ।।
 + + + + + + +
 आखड़ी कज पांखड़ी रे अधर रंग गह्वो परवान
 राणी साभली रे लाजीगई कोमल जन अंतराल ।
 शरीर सोहामणू रे ममने जीत्यो गज गुणमान ।
 को कहे गुरु अवतारे देउ दान मान मोती भाल ॥

संवत् १६५६ बैशाख मास में बारडोली नगर में रत्नकीर्ति ने स्वयं अपने शिष्य कुमुदचन्द्र को अपने ही हाथों से भट्टारक पद पर प्रतिष्ठापित कर दिया ।^१ यह था भट्टारक रत्नकीर्ति का त्याग । वे उसी समय से मूलसंध सरस्वती गच्छ के शृंगार कहलाने लगे । शास्त्रार्थ करने में वे अत्यधिक चतुर थे ।^२

विहार

कुमुदचन्द्र ने भट्टारक बनते ही गुजरात एवं राजस्थान में विहार किया और

१. संवत् सोल छपन्ने बंशाखे प्रगट पट्टीधर व्याप्या रे ।
 रत्नकीरति गोर बारडोली वर सुर मंत्र शुभ आप्या रे ॥
२. मूलसंध भगट मणि माहंत सरसति गच्छ सोहाये रे ।
 कुमुदचंद्र भट्टारक आगति बादि को बादे न आये रे ॥

अपने ओजस्वी, मधुर तथा आकर्षक वाणी से सबका हृदय जीत लिया। वे जहाँ भी जाते अग्रतःपूर्व स्वागत होता तथा समाज उनके लिये पलक पावड़े बिछा देता। कुंकुम छिड़का जाता तथा चौक पूर करके बधावा पाये जाते। चारों ओर श्रद्धा भक्ति एवं गुणानुवाद का आलावरण बन जाता। उनके दर्शनमात्र से समाज अपने आपको धन्य मान लेता।^१

कुमुदचन्द्र के एक शिष्य संयमसागर ने तो समस्त समाज से उनके स्वागत करने के लिये निम्न पद लिखा है:—

आवो राहेलडी रे सह मिलि संगे
वांदो गुरु कुमुदचन्द्र ने मनि रंगे।
छंड आगम अलंकार नो जाण
चार चितामणी प्रमुख प्रमाण।
तेर प्रकार ए चारिख रोहे
दीठडे भवियण जन मन मोहे।
राह सदाफल जेहनो तात
धन जनम्यो गदमाबाई मात।
सरस्वती गच्छ तणो सिरुमार
वेगस्युं जीतियो दुखरमार।
महीयले मोहवणो सु दिखवात
हाथ जोडादिशा वादी संधात।
जे गरगार ए गोर गुण गाते
संयमसागर कहे ते मुखी थाय ॥

गणेश कवि ने भी एक कुमुदचन्द्रनी हमची लिखी है जिसमें उसने कुमुदचन्द्र के गुणों का विस्तृत वर्णन किया है। धारडोली नगर में भट्टारक मादी स्थापित करने एवं उस पर कुमुदचन्द्र को पट्टस्थ करने में संधगति कहानजी, स सहस्रकरण जी मल्लिदास एवं गोपाल जी का भवभे बड़ा योगदान था। हमची में कुमुदचन्द्र के पांडित्य एवं विद्वत्ता की निम्न शब्दों में प्रशंसा की है

पंडित पणे प्रसिद्ध प्राक्रमी जगधादिनी वर एहने
सेवो सुरतरु चिन्दयो चितामणि उपमा नहीं कहे ने रे

१. सुन्दरि रे सह आवो, तम्हे कुंकुम छडो देवडावो
वास मोतिमे चौक पूरावो, रडा सह गुरु कुमुदचन्द्र ने बधावे ॥

भट्टारक पद स्थापन के पश्चात् बारडोली नगर साहित्यिक, धार्मिक एवं आध्यात्मिक गतिविधियों का केन्द्र बन गया। कुमुदचन्द्र की वाणी सुनने के लिये वहाँ धर्म प्रेमी समाज का जमघट रहता था। कभी तीर्थ यात्रा करने वालों का संघ उनका आशीर्वाद लेने आता तो कभी कभी विभिन्न नगरों का समाज उन्हें सादर निमन्त्रण देने आता। कभी वे स्वयं ही संघ का नेतृत्व करते तथा तीर्थों की यात्रा कराने में सहयोग देते। संवत् १९८२ में कुमुदचन्द्र संघ सहित घोषा नगर आये जो उनके गुरु रत्नकीर्ति का जन्म स्थान था। बारडोली वापिस लौटने पर श्रवकों ने उनका अभूतपूर्व स्वागत किया। इसी वर्ष उन्होंने गिरनार जाने वाले एक संघ का नेतृत्व किया था और उसमें अभूतपूर्व सफलता पाई थी।^१

साहित्य सेवा

कुमुदचन्द्र बड़े भारी साहित्यिक भट्टारक थे। साहित्य सर्जना में वे अधिक विश्वास करते थे। इसलिये भट्टारक पद के कर्तव्य से अवकाश पाते ही वे काव्य रचना में लग जाते। इसलिये एक मीत में उन के लिये “अह्निजि छंद व्याकरण नाटिक भण्डे न्याय आगम अलंकार” लिखा गया है। कुमुदचन्द्र की अब तक जितनी रचनाएँ मिली हैं वे सब राजस्थानी भाषा की ही हैं। उनकी अब तक २८ छोटी बड़ी कृतियाँ एवं ३० से भी अधिक पद मिल चुके हैं। लेकिन शास्त्र भण्डारों की खोज पाने पर और भी रचनाएँ मिलने की आशा है। उनकी प्रमुख रचनाओं के नाम निम्न प्रकार हैं :—

१. भरत बाहुबलि छंद
२. अपन क्रिया बिनती
३. ऋषभ विवाहलो
४. नेमिनाथ का द्वादशमासा
५. नेमिश्वर हृषी
६. त्रण्यरतिगीत
७. हिन्दोलना गीत
८. दशलक्षणि धर्म व्रत गीत
९. अडाई गीत
१०. व्यसन साधन गीत
११. भरतेश्वरगीत

-
१. संवत् सोल व्यासीये संवच्छर गिरनारि यात्रा कीषा ।
 श्री कुमुदचन्द्र गुरु नामि संघपति तिसक कहवा ॥
 गीत धर्मसागर कृत

१२. पार्श्वनाथगीत
१३. गौतम स्वामी चौपाई
१४. संकटहर पार्श्वनाथनी विनती
१५. लोहनाथपार्श्वनाथनी विनती
१६. जिनवर विनती
१७. गुरुगीत
१८. आरतीगीत
१९. जन्म कल्याणक गीत
२०. अधोलडी गीत
२१. शीतगीत
२२. सिन्ताभणि पार्श्वनाथ गीत
२३. दीवाली गीत
२४. चौबीस तीर्थंकर देह प्रमाण चौपाई
२५. बलभद्रनी विनती
२६. नेमिजिन गीत
२७. बराजारागीत
२८. गीत
२९. विभिन्न राग रागनियों में निमित पद

इस प्रकार कुमुदचन्द्र की जो कृतियां राजस्थान के विभिन्न शास्त्र भण्डारों में उपलब्ध हुई हैं उनका नामोल्लेख किया जा सका है। कवि की सभी रचनाओं राजस्थानी भाषा में हैं जिन पर गुजराती का पूर्ण प्रभाव है। वास्तव में १७वीं शताब्दि में गुजराती एवं राजस्थानी भिन्न-भिन्न नहीं हो सकी थी। इसलिये कवि ने अपनी कृतियों में दोनों ही भाषाओं का प्रयोग किया है। उनकी रचनाओं में गीत अधिक है जिन्हें ये अपने प्रवचन के समय श्रोताओं के साथ गाते थे। नेमिनाथ के तोरण द्वार पर आकर वैराग्य धारण करने की अद्भुत घटना से ये अपने गुरु रत्नकीर्ति के समान बहुत प्रभावित थे इसलिये इन्होंने भी नेमि राजुल पर कितनी ही रचनाएं एवं पद लिखे हैं उनमें नेमिनाथ वारहमासा, नेमिश्वरगीत, नेमिजिनगीत आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। कवि की कुछ प्रमुख रचनाओं का परिचय निम्न प्रकार है :-

१. भरत बाहुबली छंद

भरत बाहुबलि एक छण्ड काव्य है, जिसमें मुख्यतः भरत और बाहुबलि के युद्ध का वर्णन किया गया है। भरत चक्रवर्ति को सारा भूमण्डल विजय करने के

पश्चात् मालूम होता है कि अभी उनके छोटे भाई बाहुबलि ने उनकी अधीनता स्वीकार नहीं की है तो सम्राट भारत बाहुबलि को उपमाने की दूत भेजते हैं। दूत और बाहुबलि का उत्तर-प्रत्युत्तर बहुत सुन्दर हुआ है।

अन्त में दोनों भाइयों में युद्ध होता है, जिसमें विजय बाहुबलि की होती है। लेकिन विजय श्री मिलने पर भी बाहुबलि जगत से उदासीन हो जाते हैं और वैराग्य धारण कर लेते हैं। घोर तपश्चर्या करने पर भी “मैं भारत की भूमि पर खड़ा हुआ हूँ” यह सत्य उनके मन से नहीं हटती। लेकिन जब स्वयं सम्राट भारत उनके चरणों में आकर गिरते हैं और वास्तविक स्थिति को प्रगट करते हैं तो उन्हें तत्काल केवल ज्ञान प्राप्त हो जाता है। पूरा का पूरा खण्ड काव्य मनोहर शब्दों में रचित है। रचना के प्रारम्भ में कवि ने जो अपनी गुरु परम्परा दी है वह निम्न प्रकार है—

परानिवि पद आदीश्वर केरा, जेह नामें छूटे भव-फेरा ।
ब्रह्म सुता समर्थ मतिदाता, गुण गण मंडित जग विख्याता ॥

वन्दवि गुरु विद्यानंदि सूरि, जेहनी कीर्ति रही मर पूरी ।
तस पट्ट कमल दिवाकर जाणु, मल्लिभूषण गुरु गुण बखाणु ॥
तम पट्टोधर पंडित, लक्ष्मीचन्द महाजस मंडित ।
अभयचन्द गुरु शीतल वायक, सेहेर वंश मंडन सुखदायक ॥

अभयनंदि समर्थ मन साहि, मध भूला बल गाडे बाहि ।
तेह सणि पट्टे गुणभूषण, वंदवि रत्नकीरति गत भूषण ॥
भरत महिपति कृत मही रक्षण, बाहुबलि बलवंत विचक्षण ।

बाहुबलि पोदनपुर के राजा थे। पोदनपुर धन धन्य, बाग बगीचा तथा झीलों का नगर था। भारत का दूत जब पोदनपुर पहुँचता है तो उसे चारों ओर विविध प्रकार के सरोवर, वृक्ष, लताओं दिखलाई देती है। नगर के पास ही गंगा के समान निर्मल जल वाली नदी बहती है। साल-सात मंजिल वाले सुन्दर महल नगर की शोभा बढ़ा रहे हैं। कुमुदचंद्र ने नगर की सुन्दरता का जिस रूप में वर्णन किया है उसे पढ़िये—

चाल्यो दूत पयाणें रे हे तो, थोड़े दिन पोयणपुरी पोहोतो ।
दोठी सीम सधन करण साजित, बापी कूप तडाग विराजित ॥

कलकारं जो नल जल कुंडी, निर्मल नीर नदी अति ऊंडी ।
विकसित कमल अमल दलपंती, कोमल कुमुद समुज्जस कंती ॥

वन वाडी आराम सुरंगा, अंब कदंब उदंबर तुंगा ।
करण केतकी कभरख केली, नव नारंगी नागर बेली ॥

अगर तगर तरु तिद्रुक ताला, सरल सोपारी तरल तमाला ।
बदरी बकुल भदाड बीजीरी, जाई जुई जंबु जंभीरी ॥
चंदन चंपक चारउली, वर वासंती वटबर सोली ।
रायणरा जंबु सुविशाला, दाडिम दमणो द्राख रसाला ॥

फूला सुगुल्ल भमूल्ल गुलाबा, नीपनी वाली निंबुक निंबा ।
कणयर कोमल लंता सुरंगी, नालीयरी दीखे अति चंगी ॥
पांडल पनश पलाश महाधन, लवली लीन ललग लताधन ।

बाहुवलि के द्वारा अधीनता स्वीकार न किए जाने पर दोनों ओर की विशाल सेनायें एक दूसरे के सामने आ डटीं । लेकिन दोनों ओर राजाओं ने दोनों भाइयों को ही चरम शरीरी जानकर वह निश्चय किया कि दोनों ओर की सेनाओं में युद्ध न होकर दोनों भाइयों में ही जलयुद्ध तथा युद्ध एवम् मलयुद्ध हो जावे और उसमें जो जीत जावे उसे ही चक्रवर्ती मान लिया जाये । इस वर्णन को कवि के शब्दों में पढ़िये—

अथ युद्ध तयारे सहु वेढा, नीर नेत्र मल्लाह व परंढया ।
जो जीते ले राजा कहिये, तेहनी आण विनयसुं वहिए ।
एह विचार करीने नरवर, चल्या सहु साथे मछर भर ।
भुजा दंड मन सुंड समाना, ताडंगा अंवारे गाना ।
हो हो कार करि ते घाया, वच्छा वच्छ ते पडया राया ।
ह्वकारे पड्यारे पाडे, वनगा वनग करी ते पाडे ।
पग पडधा पोहोवीतल बाजे, कडकडता तरुवर से भाजे ।
नाठा वनचर आठा कायर, फूटा मथगल फूटा सायर ॥
गड गडता गिरिवर ते पडीआं, फूल करंता फणियति डरीआ ।
गड गडगडीआ मन्दिर पडीआं, दिग दंतीव मक्या चल चकीया ।
जन खलभली आबालक छलीया, भव-भीरु अबना कल मलीआ ।
तोपण से धरणी धरंके, थलड डता पडता नवि चूके ।

१. चालगा मल्ल अखाडे बलीआ, सुर नर किन्तर जीवा मलीआ ।
काइया काछ कसी कड तरंगी, बाणड बोली बोले बाणी ॥

(२) त्रेपन क्रिया विनती

इसमें त्रेपन क्रियाओं के पालने पर मकाश डाला गया है। त्रेपन क्रियाओं में ८ मूलगुण, १२ व्रत, १२ तप, ११ प्रतिभा, ४ प्रकार के दान तथा १ आवश्यकों के नाम गिनाये गये हैं। विनती की अन्तिम दो पंक्तियाँ निम्न प्रकार हैं—

जे नर नारी गावसी ए विनती सुचंग ।
ते मन वाञ्छित पाभसे नित नित मंगल रंग ।

(३) आदिनाथ विवाहलो

इसका दूसरा नाम ऋषभजिन विवाहलो भी है। कवि की "विवाहलो" बड़ी कृतियों में गिना जाता है जो ११ श्लोकों में पूर्ण होता है। विवाहलो नाभिराजा की नगरी-कोशल नगरी वर्णन में प्रारम्भ होता है। नाभिराजा के मरुदेवी रानी थी जो मधुर बाणों युक्त, रूप की खान एवं रूप की ही कली थी। रानी १६ स्वप्न देखती है। स्वप्न का फल पूछती है और यह जानकर प्रसन्नता से भर जाती है कि वह तीर्थंकर की माता बनने वाली है। आदिनाथ का जन्म होता है। इन्द्रों द्वारा जन्म कल्याणक मनाया जाता है। आदिनाथ बड़े होते हैं और उनका विवाह होता है। इसी विवाह का कवि ने विस्तृत वर्णन किया है। कच्छ महाकच्छ की कन्याओं की सुन्दरता, देवताओं द्वारा विवाह की तैयारी, विवाह में बनने वाले विविध व्यञ्जन, बारात की तैयारी, ऋषभ का घोड़ी पर चढ़ना, बाद्ययन्त्रों का बजना, अनेक उत्सवों का आयोजन आदि का सुन्दर वर्णन किया गया है। अन्त में भरत बाहुबलि आदि पुरुषों की उत्पत्ति, राज्य शासन, वैराग्य आदि का भी वर्णन किया गया है।

प्रस्तुत रचना तत्कालीन सामाजिक रीति रिवाजों की प्रतीक है। कवि ने प्रत्येक रीति रिवाज का बहुत ही सुन्दर वर्णन किया है। विवाह में बनने वाले व्यञ्जनों का वर्णन देखिये—

दूध पाक चखासा करीयां, सारा सकरपारा कर करीया ।
मोटा मोती अमोदक लावे दलिया कसमसीया भावे ।
अति सरवर सेवइया सुन्दर, आरोमे भोग पुरन्दर
त्रोसे पापड मोटा तलीया, मारआला अति उजलीया
मीठे सरसी ये रुई दोधी, भेल्ले केरो अवाणे कीधी
आथ्यां केर काकड स्वाद लाये, लिबू जमतां जीभे रस जाणें ।

विवाहलो संवत् १६७८ अषाढ शुक्ला २ सोमवार को समाप्त हुआ था। इस समय कुमुदचन्द्र घोषा नगर में थे।

संवत सोल अष्टोत्तारए, भासा अषाढ धनसार ।
उजली बीज रलीया मणिए, अति भलो ते शशिवार
लक्ष्मीचन्द्र पाटे निरमलाए, अभयचन्द्र मुनिराय ।
तस पटे अभयवन्दि गुहए, रत्नकीरति सुभ काय
कुमुदचन्द्रे मन उजलेए, घोघा नगर मसारि ।

विवाहलो की पाण्डुलिपियाँ राजस्थान के विभिन्न भण्डारों में उपलब्ध होती हैं ।

(४) नेमिनाथ का द्वावशमासा

इसमें नेमिनाथ के विरह में राजुल की तड़पन का सुन्दर वर्णन मिलता है । बाहुरमासा काव्य की लघु कृति है जो १४ पद्यों में पूर्ण होती है ।

(५) नेमीश्वर हमची

भट्टारक रत्नकीर्ति के समान ही कुमुदचन्द्र भी नेमि राजुल की मक्ति में समर्पित थे इसलिये उन्होंने भी नेमि राजुल के जीवन पर विभिन्न कृतियाँ एवं पद लिखे हैं । हमची भी ऐसी ही रचना है जिसमें ८७ छन्दों में नेमिनाथ के जीवन की मुख्य घटनाओं का वर्णन किया गया है । रचना की भाषा राजस्थानी है लेकिन उस पर महाराष्ट्री का प्रभाव है । पूरी रचना धर्तकारों से युक्त है । हमची में राजुल की सुन्दरता, बरात की सजधज, विविध बाध यन्त्रों का प्रयोग, तोरण द्वार से लोटने पर राजुल का विलाप आदि घटनाओं का बहुत ही मार्मिक वर्णन मिलता है ।

नेमिनाथ तोरण द्वार से नोट गये । राजुल विलाप करने लगी तथा मूर्च्छित होकर गिर पड़ी । माता पिता ने बहुत समझाया लेकिन राजुल ने किसी की भी नहीं सुनी । आखिर पति ही तो स्त्री के जीवन में सब कुछ हैं इसी का एक वर्णन देखिये—

बाडि बिना जिम बेनि न सोहे, अर्थ बिना जिम वासी ।
पंडित जिम सभा न सोहे, कमल बिना जिम पाणी रे ॥ ८२ ॥
राजा बिन जिम भूमि न सोहे, चंद्र बिना जिम रजनी ।
पीउड बिना अबला न सोहे, सांभलि मेरी सजनी ॥ ८३ ॥

हमची की पाण्डुलिपि ऋषभदेव के भट्टारकीय शास्त्र भण्डार के एक गुटके में संग्रहीत है ।

(६) अण्वरति गीत

यह भी विरहात्मक गीत है और राजुल की तीनों ऋतुओं में पति वियोग होने वाला दशा का वर्णन किया गया है। इसमें मुख्यतः प्रकृति वर्णन अधिक हुआ है। लेकिन ऋतु वर्णन का आनंदन राजुल ही है। शीत ऋतु आने पर राजुल कहती है कि वह बिना पिया के कैसे रहेगी—

बाजे ते शीतल बायरा, बाजे ते बाहिर द्वार ।

धूजे ते बनना पंखिया, किग रहेस्ये रे वनि पिय सुकुमार के ॥ ८ ॥

इसी तरह हिम ऋतु में निम्न सात प्रकार के साधन सुख का मूल माने गये हैं—

तैल तापन तुला तरुणी ताम्रपट तंबोल ।

तप्ततोय ते सातभू सुखिया मेरे हिम रिति सुख मूल के ।

इस प्रकार गीत छोटा होने पर भी गागर में सागर के समान है।

(७) हिनोला गीत

यह गीत भी राजुल का सन्देश गीत है जिसमें वह नेमि के विरह से पीड़ित होकर विभिन्न सन्देश वाहकों से नेमि के पास अपना सन्देश भेजती रहती है। गीत में कवि ने राजुल की आत्मा को निकाल कर रख दिया है राजुल कहती है—

घर बन जाल रांग सहु, विरह दवातल शील ।

हूं हिरणी तिहां एकली, केसरि बाम कराल ॥ १४ ॥

वह फिर संदेश भेजती है

भोजन तो भावे नहीं, भूषण करे रे संताप

जो हूं भरिस्य विलखि बई, तो तह्ण लागस्ये बाप ॥ १९ ॥

पशु देखी पाछा बल्या, मनसु थया रे दयाल

मझ उपरि माथा नहीं, ते तम्हेस्या रे कृपाल ॥ २० ॥

तम्हे संयम लेवा संचरया, जाण्यो पम्हो हर्ष मर्म ।

एकस्युं ससी एकस्युं तुसी अबलो तुम्हारी धर्म ॥ २१ ॥

गीत में २१ पद्य है। अन्त में कवि ने अपने नाम का उल्लेख किया है—

ए भगता सुख गामीइ, विवत जाये सहु दुरि ।

रतनकीरति पर मंडणी, बोले कुमुदचन्द्र सूरि ॥ २१ ॥

अट्टारक रत्नकीरति एवं कुमुदचन्द्र - व्यक्तित्व एवं कृतित्व

(८) दशलक्षणि धर्म व्रत गीत

इस गीत में दश लक्षण धर्मों पर सुन्दर प्रकाश डाला गया है। कवि ने गीत का प्रारम्भ निम्न प्रकार किया है—

धर्म करो ते चित उजले रे जे दस लक्षण ।
स्वर्गैतणा ते सुख पामीइ जिम तरीय संसार ॥१॥

(९) अठाई गीत

वर्ष में तीन बार अष्टाह्निका पर्व आता है जो कार्तिक, फागुन एवं अषाढ मास के शुक्ल पक्ष की अष्टमी से पूर्णिमा तक आठ दिन तक मनाया जाता है। प्रस्तुत गीत में अष्टाह्निका व्रत करने की विधि एवं कितने उपवास करने पर कितना फल मिलता है उसका वर्णन किया गया है। पूरा गीत १४ पद्यों का है जिसका अन्तिम भाग निम्न प्रकार है—

जे नर नारी व्रत करीये, तेहने धरि आणंद जी
रत्नकीरति गौर पाट-पटोधर, कुमुदचन्द्र सुरिद जी ।

(१०) व्यसन सातनू' गीत

कवि ने प्रस्तुत गीत में मानव को सात व्यसनों के त्याग की सलाह दी है क्योंकि जो भी प्राणी इन व्यसनों के भक्तर में पड़ा है उसी का जीवन नष्ट हुआ है। सात व्यसन है—जुआ खेलना, मांस खाना, मदिरा पान करना, वेश्या सेवन करना, शिकार खेलना, चोरी करना, पर स्त्री सेवन करना। कवि ने पहिले ८ पद्यों में व्यसनों की बुराई बसाई है और फिर आगे के चार पद्यों में उदाहरण देकर इन व्यसनों में तही पड़ने की सलाह दी है।

परनारी संगम—म करिय्य सुख व्यसन सातमें परनारी री संग ।

हाव भाव करये ते छोटी, जे हवा रस पतंग ।

जीव भूँके व्यसन असार, जीव छूटे तु संसार ॥

उदाहरण—चारदत्त दुख अति शत्रु' पाभ्यो, राज्यो वेश्या रूप ।

ब्रह्मदत्त चक्री आहेडे, ते पडियो भव कूप ।

जीव भूँके व्यसन असार, जीव छूटे तु संसार ॥

(११) भरतेश्वर गीत

कवि ने भरतेश्वर गीत का दूसरा नाम 'अष्ट प्रातिहार्य गीत' भी लिखा है। इसमें आदिनाथ के समवसरण की रचना एवं भगवान के अष्ट प्रातिहार्यों का वर्णन दिया हुआ है। गीत सरल एवं मधुर भाषा में विबद्ध है। इसमें सात छन्द हैं अन्तिम छन्द निम्न प्रकार है—

भक्त जीगाने जे संकोजे, चोनीस प्रतिपद्यवत ।
 युगला धर्म निवारण स्वामी सही मंडल विचरंत ।
 शेष कर्मते जीते जिनवर बया मुक्ति थीवंत ।
 कुमुदचन्द्र कहे श्रीजिन माता सहिये सुख अनंत ॥७॥

(१२) पार्श्वनाथ गीत

इस गीत में कवि ने हांसोट नगर के जिन मन्दिर में विराजमान पार्श्वनाथ स्वामी के पंच कल्याणकों का वर्णन किया है। गीत में १७ पद्य हैं हैं। अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है—

श्री रत्नकीरति भुक्ते नगी, कीधा पावन पंच कल्याण ।
 सुरी कुमुदचन्द्र कहे जे भणे, ते पामे अमर विमान ॥१०॥

(१३) गौतम स्वामी गीत

गौतम स्वामी के नाम स्मरण के महत्त्व का वर्णन करता ही गीत रचना का प्रमुख उद्देश्य रहा है। पूरे गीत में ८ पद्य हैं।

(१४) लोडण पार्श्वनाथ विनती

लाड देश के डभाई नगर में पार्श्वनाथ स्वामी का प्रख्यात मन्दिर है। वहाँ की पार्श्वनाथ की जिन प्रतिमा लोडण पार्श्वनाथ के नाम से जानी जाती है। भट्टारक कुमुदचन्द्र ने एक बार अपने रांच सहित वहाँ की यात्रा की थी। पार्श्वनाथ स्वामी की सातिशय प्रतिमा है जिसके नाम स्मरण से ही बिछा बाधाएं स्वतः ही दूर हो जाती है। विनती में ३० पद्य हैं—अन्तिम तीन पद्य निम्न प्रकार हैं—

जेह ते नामे भासे शोक, संकट राखला थाये फोक ।

लक्ष्मी रहे नित संगे ॥२८॥

नाम जपता न रहे पाप, जनम मरण टाले संताप ।

आये मुगति निवास ॥२९॥

जे नर सभरे लोडण नाम, ते पागे मन वंछित काम ।

कुमुदचन्द्र कहे भासा ॥३०॥

(१५) आरती गीत

भगवान की आरती करने से अशुभ कर्मों का नाश होता है पुण्य की प्राप्ति होती है और अन्त में मोक्ष की उपलब्धि होती है। इन्हीं भावों को लेकर यह आरती गीत निबद्ध किया गया है। इसमें ७ पद्य हैं।

सुगंध सारंग धहे, पाप ते नवि रहे ।

मनह वंछित लहे, कुमुदचन्द्र कहे जिन आरती ।

(१६) जन्म कल्याणक गीत

तीर्थंकर का जन्म होने पर देवताओं द्वारा उनका जन्माभिषेक उत्सव मनाया जाता है उसी का इसमें वर्णन किया गया है। एक पंक्ति में सिद्धार्थनन्दन के नाम का उल्लेख करने से यह भगवान महावीर के जन्म कल्याणक का गीत लगता है। गीत में ५ पद्य हैं। प्रत्येक पद्य चार-चार पंक्तियों का है।

(१७) अन्धोलडी गीत

प्रस्तुत गीत में बालक ऋषभदेव की प्रातःकालीन जीवन चर्या का वर्णन किया गया है। ऋषभदेव के प्रातः उठते ही अन्धोलडी की जाती है अर्थात् उनके अंगों में तेल, उषदन, बेसार, चन्दन लगाया जाता है। तेल चुपड़ा जाता है फिर निर्मल एवं स्वच्छ जल से रनाव कराया जाता है। स्नान के पश्चात् शरीर को अंगोष्ठा से पोंछा जाता है फिर पीत वस्त्र पहनाये जाते हैं आँखों में वज्रज लगाया जाता है। उसके पश्चात् नाशता में दाख, बादाम, अखरोट, पित्ता, चारोली, घेवर, फीजी, जलेबी, लड्डू आदि दिये जाते हैं।

ऋषभदेव ने नाशता के पश्चात् बहुत बारीक वस्त्र पहिन लिये साथ ही में कान में कुण्डल, पाव में धुंधड़ी, गले में हार तथा हाथों में बाजूबन्द पहिन लिये और वे सबके मन को लुभाने लगे।

गीत में १३ पद्य हैं। अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है—

बाजूबन्द सोहामणी राखडली मनोहार ।

रूपे रतिपति जीतिथो, जाये कुमुदचन्द्र बलिहार ॥

(१८) शील गीत

इस गीत में कवि ने चारित्र्य प्रधानता पर जोर दिया है। यदि मानव असंयमी है काम वासना के अधीन होकर अनैतिक आचरण करता है तो उसके अच्छी गति कभी प्राप्त नहीं हो सकती। दूसरी स्त्रियों के साथ जीवन बिगाड़ने के लिये कवि कहता है—

जह धी खोले रे रस पतंगनी ।
तेहवो चटको रे परत्रिय संगनी
परत्रिया केरो प्रेम पिउडा रसे को जाणी खरो ।
दिन चार रंग सुरंग रुझाडो, पछे मरहे निरधरे ।
ओ घणां साथे नेह मांडे छांड़ि ते हस्युं बातडी
इम जाणी मन करि नाहुला, परनाही साथे प्रीतडा ॥

गीत में १० डाल एवं १० ओटक छन्द है।

(१९) चिन्तामणि पार्श्वनाथ गीत

प्रस्तुत गीत में चिन्तामणि पार्श्वनाथ की अष्ट द्रव्य से पूजा करने के महात्म्य का वर्णन किया गया है। अष्ट द्रव्यों में प्रत्येक द्रव्य से पूजा करने के महत्व पर भी प्रकाश डाला गया है।

जल चन्दन अक्षत वर कुम्भें, चढ़ दीवडली धूपे रे ।
फल रचना मूँ अरघ करो सखी जिम न पडो भव कूर रे

गीत में १३ पद्य हैं। गीत के अन्त में कवि ने अपने एवं अपने गुरु दोनों के नामों का उल्लेख किया है। चिन्तामणि पार्श्वनाथ पर कवि का एक गीत और भी मिलता है।

(२०) दीपावली गीत

इस गीत में दीपावली के अवसर पर भगवान् महावीर के मोक्ष कल्याणक उत्सव मनाने के लिये प्रेरणा दी गयी है। उसी समय गोत्तम गणधर को कैवल्य हुआ और अपने ज्ञान के आलोक से लोकालोक को प्रकाशित किया। देवताओं ने नृत्य करके निर्वाण कल्याणक मनाया तथा मानव समाज ने घर घर में दीपक जलाकर निवारण कल्याणक के रूप में दीपावली मनायी।

(२१) चौबीस तीर्थ'कर देह प्रमाण गीत

प्रस्तुत गीत में चौबीस तीर्थ'करों के देह प्रमाण पर चार चरणों का एक एक पद्य निबद्ध किया गया है। रचना साधारण श्रेणी की है। जो २७ पद्यों में पूरी होती है। अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है—

ए चौबेसे जिनवर नमो,
जिम संसार बिसे नवि भमो ।
पामो अविचल सुखनी खानि
कुमुदचन्द्र कहे मीठी बाणी ॥२७॥

(२२) वणजारा गीत

इस गीत में जगत की लेश्वरता का वर्णन किया गया है। गीत की प्रत्येक पंक्ति "वणजारा रे एह संसार बिदेस, नमीय भमो तु उसनो" से समाप्त होती है। यह मनुष्य वणजारे के रूप में यों ही संसार में भटकता रहता है। वह दिन रात पाप कमाता है इसलिये संसार बन्धन से कभी नहीं छूटने पाता।

पाप कर्या ते अनंत, जीव दया पालो नहीं ।
सांची न बोलियो बोल, मरम मो सबहु बोलिया ॥

गीत में विविध उपाय भी गुंजाये गये हैं। गीत में 41 पद्य हैं।

पद साहित्य

छोटी बड़ी रचनाओं के अतिरिक्त कुमुदचन्द्र ने पद भी पर्याप्त संख्या में निबद्ध किये हैं। उस समय पद रचना करना भी कविगत विशेषता मानी जाती थी। कबीर, मीराबाई, मुरदास एवं तुलसीदास सभी ने अपने अपने पदों के माध्यम से भक्तिरस की जो गंगा बहाई थी वैसी ही अथवा उसी के अनुरूप कुमुदचन्द्र ने भी अपने पदों में प्रहृष्ट भक्ति की ओर जन सामान्य का ध्यान आकृष्ट किया। वे भगवान् पार्श्वनाथ के बड़े भक्त थे। इसलिये अपने पदों में भी पार्श्वनाथ भक्ति की गंगा बहाई। वे कहते हैं कि उन्होंने आज भगवान् पार्श्व के दर्शन किये हैं। उनका शरीर सावला है, सुन्दर मूर्तिमान है तथा सिर पर सर्प सुशोभित है। वे कमठ के मद को तोड़ने वाले हैं तथा चकोर रूपी संसार के खिये वे चन्द्रमा के समान हैं। पाप रूपी अन्धकार को नष्ट कर प्रकाश करने वाले हैं तथा सूर्य के समान उदित होने वाले हैं। इन्हीं भावों को कवि के शब्दों में देखिये—

आजु में देखे पास जिनेंदा
 सांवरे गात सोहमनि मूरति, शोभित नील कर्णेंदा ॥आजु॥
 कमठ महामद भजन रंजन, भविक चकोर सुचंदा
 पाप तनोपह भुवन प्रकाशक उदित अनूप दिनेंदा ॥आजु॥
 भुविज-दिविज पति दिनुज दिनेसर सेवित पद अरविग्या
 कहत कुमुदचन्द्र होत सबे सुख देखत बामानंदा ॥आजु॥

कुमुदचन्द्र लोडण पार्श्वनाथ के बड़े भक्त थे। उन्होंने लोडण पार्श्वनाथ की विनती लिखने के अतिरिक्त दो पद भी लिखे हैं जिनमें लोडण पार्श्वनाथ की भक्ति करने में अपने आपको सौभाग्यशाली माना है एक पद में “वे आज सबनि में हूं बड़ भागी” कहते हैं और दूसरे पद में लोडण पार्श्वनाथ के वर्णनमात्र से अपने जन्म को सफल मान लेते हैं इसलिये वे कहते हैं “जनम सफल भयो, भयो सु साजरे, तनकी तपत मेरी सब मेठी, देखत लोडण पास आज रे।”

भक्ति के रंग में रंग कर वे भगवान से कहते हैं कि यदि वे दीनदयाल कहते हैं तो उन जैसे दीन को क्यों नहीं उबारते हैं। कवि का “जो तुम दीनदयाल कहावत” वाला पद अत्यधिक लोकप्रिय रहा तथा जन सामान्य उसे गाकर प्रभु भक्ति में अपने आपको समर्पित करता रहा।

जब भक्तिरस में ओतप्रोत होने पर भी विघ्नों का नाश नहीं होने लगा तथा न ममोगत इच्छाएं पूरी होने लगी तो भगवान को भी उलाहना देने में वे पीछे नहीं रहे और उनसे स्पष्ट शब्दों में निम्न प्रार्थना करने लगे—

प्रभु मेरे तुम कुं ऐसी न चाहिये
 सघन विघन घेरत सेवक कूं मौन घरी कित रहिये ॥प्रभु॥
 विघन-हरन सुख-करन सबगिकुं, नित चिन्तामनि कहिए
 अशरण शरण अचन्धु बन्धु रूपसिन्धु को विरद निबहिये ॥प्रभु॥

जो मनुष्य भव में आकर न तो प्रभु की भक्ति करते हैं और न अत उपवास पूजा पाठ करते हैं तथा कोई न पुण्य का काम करते हैं लेकिन जब वे मृत्यु को प्राप्त होने लगते हैं तो हृदय में बड़ा भारी पछतावा होता है और उनके मुख से निम्न शब्द निकल पड़ते हैं—

मैं तो नर भव बाधि गमायो
 न कियो तप जप अत विधि सुन्दर, काम भयो न कमायो ॥मैं तो॥

बिकट लोभ तँ कपट कूर करी, निपट वियै लपटायो
बिटल कुटिल षाठ संगति बैसो, साष्ट निपट बिचटायो ॥मैं तो॥

इसी पद में कवि आगे कहते हैं कि हे मानव तू दिन प्रतिदिन गांठ जोड़ता रहा और दान देने का नाम भी नहीं लिया और जब यौवन को प्राप्त हुआ तो दूसरी स्त्रियों के धक्कर में फँसकर अपना समस्त जीवन ही गवां दिया । जब संसार से विदा होने लगा तो किसी ने साथ नहीं दिया और पापों की गठरिया लेकर ही जाना पड़ा तब पश्चात्ताप के अतिरिक्त शेष कुछ नहीं रहा । इन्हीं भावों को कवि के शब्दों में देखिए—

कृपण भयो कुछ दान न दीनों, दिन दिन दाम मिलायो ।
जब जौवन जंजाल पड़यो तब परत्रिया तनु चित लायो ॥मैं तो॥
अंत समैं कोउ संग न आवत, झूठहि पाप लगायो ।
कुमुदचन्द्र कहे चूक परी मोही, प्रभु पद अस नहीं गायो ॥मैं तो॥

अर्हद भक्ति एवं पार्श्व भक्ति के अतिरिक्त भट्टारक कुमुदचन्द्र ने अपने गुरु भट्टारक रत्नकीर्ति के समान राजुल नेमि पर भी कितने ही पद निबद्ध करके राजुल की विरह भावना के व्यक्त करने में वे आगे रहे हैं । राजुल की विरह भावना को व्यक्त करते हुए वे “सखी री मन तो रह्यो नहि जात”, जैसे सुन्दर पद की रचना कर खासते हैं और उसमें राजुल के मनोगत भावों का पूरा चित्र प्रस्तुत कर देते हैं । राजुल को न भूख लगती है और न प्यास सताती है तथा वह दिन प्रतिदिन मुरझाती रहती है । रात्रि को नींद नहीं आती है और नेमि की याद करते करते प्रातः हो जाता है । विरहावस्था में न तो चन्द्रमा अच्छा लगता है और न कमल पुष्प । यही नहीं मंद मंद चलने वाली हवा भी काटने दीड़ती है इन्हीं भावों को कवि के शब्दों में देखिये—

नहि न भूख नहीं तिगु लागत, घरहि घरहि मुरझात ।
मन तो उरखी रह्यो मोहन सुं सेवन ही सुरक्षात ॥सखी॥
नाहिते नींद परती निसि वासर, होत बिभुरत प्रात ।
चन्दन चन्द्र सजल नलिनी दल, मन्द मरुत न सुहात ॥

अब तक कवि के ये पद उपलब्ध हो चुके हैं लेकिन बागड प्रदेश के शास्त्र भण्डारों में संग्रहीत गुटकों में उनका और भी पद साहित्य मिलने की संभावना है । कुमुदचन्द्र के पदों के अध्ययन से उनकी गहन साहित्य सेवा का पता चलता है । वे भट्टारक जैसे सम्माननीय एवं व्यस्त पद पर रहते हुए भी दिन रात साहित्याराधना

में लगे रहते थे और अपनी छोटी बड़ी कृतियों के माध्यम से समाज में पवित्र वातावरण बनाने में लगे रहते थे। वास्तव में उनका सगस्त जीवन ही जिनवारी की सेवा में समर्पित रहता था। उनका पद साहित्य एवं अन्य कृतियाँ उनके हृदय का प्रतिनिधित्व करती हैं। वे दिन रात तीर्थंकर भक्ति में स्वयं डूबे रहते थे और अपने भक्तों को खुशोया रखते थे। वह समय ही ऐसा था। चारों ओर भक्ति ही भक्ति का वातावरण था। ऐसे समय में कुमुदचन्द्र ने जनता की मांग को देखते हुए साहित्य सर्जना में अपने आपको समर्पित रखा। उनका साहित्य पढ़ने से उनके हृदय की चुभन का पता लगता है। उनको सारे समाज को विभिन्न प्रकार की बुराइयों एवं दूषित वातावरण से दूर रखते हुए जीवन का विकास करना था और इसके लिये साहित्य सर्जन को ही अपना एक मात्र साधन माना। वे अपने गुरु रत्नकीर्ति से भी दो कदम आगे रहे और अनेकों कृतियों की रचना करके उस समय के भट्टारकों साधु सन्तों के समक्ष एक नया आदर्श उपस्थित किया।

शिष्य परिवार

वैसे तो भट्टारकों के अनेक शिष्य होते थे। उनके सम्पर्क में रहने में ही लोग गौरव का अनुभव करती थे। लेकिन कुमुदचन्द्र ने अपने सभी शिष्यों को साहित्य सेवा का व्रत दिया और अपने समान ही साहित्य सर्जन में लगे रहने की प्रेरणा दी। यही कारण है कि उनके शिष्यों की भी अनेक रचनाएँ मिलती हैं। कुमुदचन्द्र के प्रमुख शिष्यों में—अभयचन्द्र, ब्रह्मसागर, धर्मसागर, संयमसागर, जयसागर एवं गणेशसागर के नाम उल्लेखनीय हैं। इन सबने कुमुदचन्द्र के सम्बन्ध में भी कितने ही पद लिखे हैं जिससे उनके विद्यालय व्यक्तित्व एवं अपने गुरु के प्रति समर्पित जीवन का पता लगता है। इनके सम्बन्ध में आगे विस्तृत रूप से प्रकाश डाला जावेगा।

बिहार

गुजरात का बारडोली नगर इनका प्रमुख केन्द्र था। इसलिये इन्हें बारडोली का सन्त भी कहा जाता है। यहीं पर रहते हुए वे सारे देश में अपने जीवन, त्याग एवं साधना के आधार पर लोगों को पावन सन्देश सुनाते रहते थे। वे प्रतिष्ठाओं में भी जाते थे और वहाँ जाकर धर्म प्रचार किया करते थे।

भट्टारक काल

कुमुदचन्द्र भट्टारक गादी पर संवत् १६५६ से १६८५ तक रहे। इन २९-३० वर्षों में उन्होंने समाज को जाग्रत रखा और सदैव साहित्य एवं धर्म प्रचार की ओर

अपना लक्ष्य रखा । वे संघ के साथ विहार करते और जन जन का हृदय सहज ही जीत लेते । वे प्रतिष्ठा—महोत्सवों, धर्म विधानों आदि में भाग लेते और तत्कालीन समाज से ऐसे आयोजनों को करते रहने की प्रेरणा देते ।

भाषा

कुमुदचन्द्र की कृतियों की भाषा राजस्थानी के अधिक निकट है । लेकिन गुजरात एवं आगड़ प्रदेश उनका मुख्य विहार स्थल होने के कारण उसमें गुजराती का पुट भी आ गया है । मराठी भाषा में भी वे लिखते थे । 'नेमीश्वर हमची' मराठी भाषा की सुन्दर रचना है । कृतियों से उनके पदों की भाषा अधिक परिष्कृत है और कितने ही पद तो खड़ी बोली में लिखे गये जैंग लगते हैं और उन्हें तुलसी, सूर और भीरा दास रचित पदों के समकक्ष रसे जा सकता है । भाषा के साथ साथ भाव एवं शैली की दृष्टि से भी कवि का पद साहित्य उल्लेखनीय है । रचनाओं में यारी, म्हारी, पाछे, धन्यो, जैसे शब्दों का प्रयोग बहुत हुआ है । इसी तरह आव्यूं, जाव्यूं, हरख्यां, सूक्या जैसे क्रिया पदों की बहुलता है । कभी-कभी कवि णुड़ राजस्थानी शब्दों का प्रयोग करता है जिसे निम्न पद्य में देखा जा सकता है—

कातिय दिन दिवानिना मखि घरि घरि लील चितारि जी
किम कम कंत ग आविधो, हवेस्मूं करिये घरि करि वासि जी ।

नेमिनाथ बारहमासा

इसी तरह राजस्थानी भाषा का एक और पद्य देखिये—

बचन माहुरं मानिये, परितगी थी रहो बेगला ।
अपवाद भाषे चढ़े मोटा रंक थड़ये दोहिला ।

शील गीत

छन्दों का प्रयोग

कुमुदचन्द्र की विविध रचनाओं से ज्ञात होता है कि वे छन्द शास्त्र के अच्छे ज्ञेता थे इसलिये उन्होंने अपनी कृतियों को विभिन्न छन्दों में निबद्ध की है । कवि को सबसे अधिक ओठक, ठाल एवं विभिन्न राग रागनियों में काव्य रचना करना प्रिय रहा । गीत लिखना उन्हें रुचियल लगता था इसलिये इन्होंने अधिकांश कृतियां गीतारमयता शैली में लिखी हैं । वे अपनी प्रवचन सभाओं में इन गीतों को सुनाकर अपने भक्तों की भाव विभोर कर देते थे ।

संवत् १७४८ कार्तिक शुक्ला पञ्चमी के दिन लिखित एक प्रशस्ति में भट्टारक कुमुदचन्द्र की पूर्ववर्ती एवं उत्तरवर्ती भट्टारक परम्परा निम्न प्रकार दी है --

मूल संघ, सरस्वती गच्छ एवं बलात्कारगण

आचार्य कुन्दकुन्द	
भट्टारक लक्ष्मीचन्द्र	
भट्टारक अभयचन्द्र	
अभयचन्द्र	
रत्नकीर्ति	[१६३०-१६५६]
कुमुदचन्द्र	[१६५६-१६८५]
अभयचन्द्र	(द्वितीय)
शुभचन्द्र	(१७२१)
रत्नचन्द्र	[सं० १७४५]

इस प्रकार भट्टारक कुमुदचन्द्र के पश्चात् संवत् १७०० के पूर्व तक भट्टारक अभयचन्द्र एवं भ. शुभचन्द्र धीरे हुए। इन दोनों भट्टारकों का परिचय निम्न प्रकार है—

४६. भट्टारक अभयचन्द्र

अभयचन्द्र संवत् १६८५ में भट्टारक गादी पर विराजमान हुए। वे भट्टारक बनते समय पूर्णयुवा थे। उन्होंने काम्पदेव के मद को चकनाचूर कर दिया था। वे निष्ठता में गौतम गणधर के समान थे। अपूर्व क्षमाशील, गंभीर एवं गुणों की खान थे। विद्या के वे कोष थे तथा वाद विवाद में वे सदैव अपराजित रहते थे। पं. श्रीपाल ने उनके सम्बन्ध में अपने एक पद में निम्न प्रकार परिचय दिया है—

चन्द्रवदनी मृग लोचनी नारि

अभयचन्द्र मछ नायक वांधो, सकल संघ जयकारि।

सदन महाभय मोडेए मुनिवर, गोयम सम गुणधारी
क्षमावंतवि गंभीर निचक्षण, गुह्यो गुण भंडारी ॥

अभयचन्द्र अपने गुरु भट्टारक कुमुदचन्द्र के योग्यतम शिष्य थे। उन्होंने भट्टारक रत्नकीर्ति एवं भट्टारक कुमुदचन्द्र का समय देखा था और देखी थी उनको साहित्यिक साधना इसलिये जब वे स्वयं भट्टारक बने तो उन्होंने भी उसी परम्परा को जीवित रखा। बारडोली नगर में इनका पट्टाभिषेक हुआ था। उस दिन फाल्गुण सुदी ११ सोमवार संवत् १६८५ था। पाट महोत्सव में समाज के अनेक प्रतिष्ठित व्यक्ति उपस्थित थे। इनमें हंभडी नानजी, हेमजी, मेराजी, गणजी, गानजी, भीमजी आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। कविवर दामोदर ने पाट महोत्सव का निम्न शब्दों में वर्णन किया है—

बारडोली नगरि उद्भय कीधो, महोत्सव अन्त अवारी ।
संधवी नाग जी अति आणशा, हेमजी हरष अपार ।
मधवी कुंदर जी कुलमडल, भेमजी महिमावत
रूपजी मालजी रनोहार, महु सज्जन मन मोहंत ।
संधर्व भीमजी भावस्यु, गुन जीवा मने उल्हास
संभवई जीवराज उनट घणो, पहीली छे मन तणी ग्राम ।
संवत् सोल पच्यासीये, फागुण मुदि एकादणी सोमवार
नेमिनन्दे सुर मंत्रज, आप्पा बरतयो जयकार ॥

अभयचन्द्र का जन्म संवत् १६८० के लगभग हंभड वंश में हुआ था। इनके पिता का नाम श्रीपाल एवं माता का नाम कोडमदे था। बचपन में ही बालक अभयचन्द्र को साधुओं की मंडली में रहने का सुझाव मिल गया था। हेमजी कुंदर जी इनके भाई थे। ये सम्बन्ध धराने के थे। युवावस्था के पूर्व ही उन्होंने पांच महाव्रतों का पालन प्रारम्भ कर दिया था।

हंभड वंशे श्रीपाल माह तान, जन्मथो रुडी रनदे कोडमदे मात ।
लघु गणें लीधो महाव्रत भार, मनवण करी जीत्यो दुर्धरि भार ।

इसी के साथ इन्होंने संस्कृत प्राकृत के ग्रंथों का उच्च अध्ययन किया। न्याय शास्त्र में पारंगता प्राप्त की तथा अलंकार शास्त्र एवं नाटकों का तलस्पर्शी अध्ययन किया। इसके साथ ही अष्टमहर्षी, त्रिलोकसार, गोम्मटसार जैसे ग्रन्थों का गहरा ज्ञान प्राप्त किया।

व्याकरण छन्द अलंकार रे अष्ट सहस्री उदार रे
विलोक गोमटसार के भाष हृदय धरे ॥

जब उन्होंने युवावस्था में पदार्पण किया तो त्याग एवं तपस्या के प्रभाव से उनकी भुजाकृति स्वयमेव आकर्षक बन गयी और भक्तों के लिये वे आध्यात्मिक आदूर बन गये । इनके भक्तों में शिष्य जन गये उनमें गणेश, दामोदर, धर्मसागर, देवजी, रामदेवजी के नाम विशेषतः उल्लेखनीय हैं । इन शिष्यों ने मट्टारक अभयचन्द्र की अपने गीतों में भारी प्रशंसा की है । लगता है उस समय चारों ओर अभयचन्द्र का यशोगान फैल गयी थी । जब वे विहार करते तो इनके शिष्य जन-साधारण को एवं विशेषतः महिला समाज को निम्न शब्दों में आश्वासन करते थे—

आवो रे भामिनी गज वर गमनी
बांदवा अभयचन्द्र मिली मृग नयनी ।
मुगताफलनी ताल भरी जे
गच्छनयक अभयचन्द्र वधार्थीजे ।
कुंकुम चन्दन भरीय कचोली
मेरो पद पूजो गोमता गढ़ भली ॥ ३ ॥

अभयचन्द्र के सम्बन्ध में उनके शिष्य शिष्यों द्वारा कितने ही प्रशंसात्मक गीत मिलते हैं जिनसे कितने ही भवीन तथ्यों की जानकारी मिलती है । इन्हीं के शिष्य धर्मसागर ने एक गीत में उनके यश की प्रशंसा करते हुए लिखा है कि देहली के सिंहासन तक उनकी प्रशंसा पहुँच गयी थी और वहाँ भी उनका सम्मान था । चारों ओर उनका यश फैल गया था ।

दिल्ली रे सिंहासन केरो राजियो रे
राजियो यश विभुवन मन्दिरे ॥

इसी तरह उनके एक शिष्य दामोदर ने अपने एक गीत में भक्तों से निम्न प्रकार का आग्रह किया है -

बांदो बांदो सखी री श्री अभयचन्द्र गोर बांदो ।
मूलसंध भंडल दुरित निकसन कुमुदचन्द्र पाठि बांदो ॥ १ ॥
सास्य सिद्धान्त पूरण ए जाण, प्रतिबोधे भक्तियण अनेक
सकल कला करी विश्व में रंजे भंजे बादि अनेक ॥ २ ॥
हूबहू बंशे विख्यात वसुधा, श्रीपाल भावन तात ।
जामो जननी मती यशवंतो कोडमदे धन मात ॥ ३ ॥

रत्नचन्द्र पाटि कुमुदचन्द्र मति प्रेमे पूजो पाय ।

तास पाटि श्री अभयचन्द्र गोर रामोदर नित्य गुण गाय ॥ ४ ॥

भट्टारकों की वेश भूषा लाल चदर वाली होती थी । चदर को राजस्थानी में पछेवड़ी कहते हैं । इसलिये जब भट्टारक अभयचन्द्र अपनी भट्टारकीय वेश भूषा में सभा में बैठते थे तो वे कितने सुन्दर एवं लुभावने लगते थे । इसी को धर्म सागर ने एक गीत में छन्दों बद्ध किया है—

लाल पिछोड़ी अभयचन्द्र सीहे

निरच्छता भविषकनां मन मोहे ।

आंगुष्ठनी कम गाम्भीर्य, मुण्डू ने पुनिगचन्द्र

शुक्र कचो भभ नासिका रे, अधर प्रधानां वृद्ध रे

कठे कबू हरावियां रे, हैशने मरस्वती बाल्हो

बांदि सकोमल एहजीने पिछि, हाथि रडियो ली रे

संवत् १७०६ में भट्टारक अभयचन्द्र का मूलत नगर में विहार हुआ । उस समय उनका वहां अभूतपूर्व स्वागत हुआ । घर-घर में उत्सव आयोजित किये गये । मंगल गीत गाये गये । चारों ओर आनन्द ही आनन्द छा गया । जब जब कार होति लगी । इसी एक दृश्य का “देवजी” ने एक पद में निम्न प्रकार छन्दों बद्ध किया है—

आज आनन्द गत अति भरी ए, कोई बरतयो जय जय कार ।

अभयचन्द्र मुनि आनन्द्यात, कोई सुनत नगर मझार रे ॥

घरे घरे उछव अति आनन्द, कोई माननी मंगल गाय रे ।

अंगे पूजा मे उवाचमाण, कोई कुंजुम छहारे बड़ा रे ।

श्लोक कथांओ गोर प्रयोभना रे, बाणी सीडी अपार मान तो ।

धर्मरूप ये मांगी मे प्रतिबोध ॥, कोई कुननि नो करे परिहार जी ।

संवत सनर छजोतिरे, कोई तरिजी प्रेमजीनी पूगी आस रे ।

रामजीने श्रीपाल हरषी पाण, कोई देवजी कुमरजी मोहनदास रे ।

मौनम गम चार सोभनी ए, कोई बूधे जयी धर्मकुमार रे ।

सकल कला गुण मंडणी ए, कोई देवजी कहे उग्रजी उदार रे ॥

इस तरह के और भी बीसों गीत भट्टारक अभयचन्द्र के सम्बन्ध में उनके ईश्वर शिष्यों द्वारा लिखे हुये मिलते हैं जिनमें उनकी भूरि भूरि प्रशंसा की गयी है । अभयचन्द्र का इतना अच्छा वर्णन उनके प्रसाधारण व्यक्तित्व की ओर स्पष्ट

सकेत हैं। वे 36 वर्ष तक भट्टारक पद पर रहे और सारे प्रदेश में घूमते हजारों प्रार्थनों एवं भक्तों का समूह इकट्ठा कर लिया।

श्रमयचन्द्र के अब तक निम्न रचनायें प्राप्त हो चुकी हैं -

- | | |
|------------------------|-----------------------|
| (१) वासपूज्यनीधमाल | (२) गीत |
| (३) चन्दा गीत | (४) सुखडी |
| (५) पद्मावती गीत | (६) शान्तिनाथजी चिनती |
| (७) श्रीदीश्वरजी चिनती | (८) पञ्चकल्याणक गीत |
| (९) बलभद्र गीत | (१०) लाछन गीत |
| (११) विभिन्न पद। | |

भट्टारक श्रमयचन्द्र की विद्वत्ता एवं शास्त्रों के ज्ञान को देखते हुए उक्त कृतियाँ बहुत कम हैं इसलिये अभी उनकी किसी बड़ी कृति के मिलने की अधिक संभावना है लेकिन इसके लिये बागड़ प्रदेश एवं गुजरात के शास्त्र भण्डारों में खोज की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त यह भी संभव है कि श्रमयचन्द्र ने साहित्य निर्माण के स्थान पर वैसे ही प्रचार-प्रसार पर अधिक जोर दिया हो।

श्रमयचन्द्र की उक्त सभी रचनाएँ लघु कृतियाँ हैं। यद्यपि काव्यत्व भाषा एवं शैली की दृष्टि से ये उच्च स्तरीय रचनाएँ नहीं हैं लेकिन तब भी राजा की भाँग पर ये रचनाएँ लिखी गयीं थीं इसलिये इहाँ कवि का काव्य वैभव एवं सौष्ठव प्रदर्शित होने के स्थान पर प्रचार-प्रसार का अधिक लक्ष्य रहा था। कुछ प्रमुख रचनायें का सामान्य परिचय निम्न प्रकार है—

१—वासपूज्यनीधमाल

१० पद्यों में २०वें तीर्थंकर वासुपूज्य स्वामी के कल्याणों का वर्णन दिया गया है। धमाल में सूरत नगर का उल्लेख है जो संभवतः वहाँ के मन्दिर में वासुपूज्य स्वामी की प्रतिमा स्तवन के कारण होगा।

सूरत नगर मानुं जगईस, सकल गुणहर नामें शोस ।
 मूलसंघ मण्डल मनोहर, कुमुदचन्द्र करुणा भण्डार ॥६॥
 तेह पाटे उदयो वर हण, श्रमयचन्द्र धन हूँदण वंश ।
 ते गोर गाये एह मुभास, भणता सुणता स्वर्ग निवास ॥१०॥

२—चन्दागीत

इस गीत में कासीदास के मेघदूत के विरही यक्ष की भाँति रक्षक राजकुल

अपना सन्देश चन्द्रमा के माध्यम से नेमिनाथ के पास भेजती हूँ । सर्वप्रथम चन्द्रमा से अपने उद्देश्य के बारे में निम्न पद्यों में वर्णन करती हूँ—

विनय करी राजुल कहे, चन्दा वीनतई अय धारो रे ।
उज्ज्वल गिर जई वीनवे, अन्दा जेहा छे प्रण आधार रे ॥
गमने गमन साहसुं स्रष्टुं, चन्दा अमिव वरने अन्नन्त रे ।
पर उपगारी तू भनो, चन्दा बलि बलि वीनवू संत रे ॥

राजुल ने इसके पश्चात् भी चन्द्रमा के सामने अपनी यौवनवस्था की दुहाई दी तथा विरहग्निका उसके सामने वर्णन किया ।

विन्हु तणा दुख दोहिता, चन्दा ते किम में सहे बाय रे ।
जल बिना जेम मछली, चन्दा ते दुःख में बाय रे ॥

राजुल अपने सन्देश वाहक से कहती है कि यदि कदाचित् नेमिकुमार वापिस चले आवें तो वह उनके आनमन पर वह पूर्ण श्रृंगार करेगी । इस वर्णन में कवि ने विभिन्न अंगों में पहिने जाने वाले आभूषणों का अच्छा वर्णन किया है ।

३. मूखड़ी

यह ३७ पद्यों की लघु रचना है, जिसमें विविध व्यंजनों का उल्लेख किया गया है। कवि को पाकशास्त्र का अच्छा ज्ञान था । “मूखड़ी” से तत्कालीन प्रचलित मिठाइयों एवं नमकीन खाद्य सामग्री का अच्छी तरह परिचय मिलता है । शक्तिनाथ के जन्मावसर पर किये प्रकार की मिठाइयाँ आदि बनाई गई थी—इसी प्रसंग को खताने के लिए इन व्यंजनों का नामोल्लेख किया गया है । एक वर्णन देखिये—

जलेबी खाजला पूरी, पतासां पीण्णी संजूरी ।
दहीवरा पीणी मांही, साकर भरी ॥६॥
+ + +
साकरपारा सुहानी, लवणयडी मांवली ।
धापडासुं धीणुं धीव, आलू जीरनी ॥५॥
गरकीने चादखाने, बोट ने दही थड़ा सोनी ।
बावर घेवर धीसी, अनेक वांणी ॥६॥

4. आदीश्वरणी विनति

इसमें आदिनाथ भगवान का स्तवन तथा पांचों कल्याणकों का वर्णन किया गया है । रचना सामान्य है ।

इसमें भादिनाथ के पञ्चकल्याणकों का वर्णन किया गया है पद्य संख्या २१ है । रचना सामान्य है ।

भावीश्वरनु भन्ध कल्याणक गीत

इस प्रकार भट्टारक अभयचन्द्र ने आगामी लघु रचलाभा के माध्यम से जो महती सेवा की थी वह सदैव अभिनन्दनीय रहेगी ।

५०. भट्टारक शुभचन्द्र

भट्टारक अभयचन्द्र के पश्चात् शुभचन्द्र भट्टारक गद्दी पर बैठे । संवत् १७२१ की ज्येष्ठ वृद्धि प्रतिपदा के दिन पोरबन्दर में एक विशेष उत्सव किया गया और उसमें शुभचन्द्र को पूर्ण विधि के साथ भट्टारक गद्दी पर अभिषिक्त किया गया ।^१ पं. श्रीपाल ने शुभचन्द्र हमची लिखी है उसमें शुभचन्द्र अभिषिक्त के भट्टारक पद पर अभिषेक होने से पूर्व तक का पूरा वृत्तान्त दिया हुआ है ।

शुभचन्द्र का जन्म गुजरात प्रदेश के जलसेन नगर में हुआ जहाँ गढ एवं मन्दिर थे तथा सुन्दर सुन्दर भवन थे । बही तुलङ्ग वंश के शिरोमणि हीरा थावक थे । माणिक्ये उनकी पत्नी का नाम था । बचपन में ही बालक व्युत्पन्नमति थे उसका विद्याध्ययन की ओर विशेष ध्यान था, इसनिर्ग व्याकरण, तर्कशास्त्र, पुराण एवं छन्द शास्त्र का गहरा अध्ययन किया । अष्टसहस्री जैन कठिन ग्रन्थों को पढ़ा । प्रारम्भ में उसका नाम नवलराम था लेकिन ब्रह्मचर्यव्रत धारण करने पर उसका नाम सहेजसामर रखा गया और भट्टारक बनने पर वे शुभचन्द्र नाम से प्रसिद्ध हुये ।^२

शुभचन्द्र शरीर से अतीव सुन्दर थे । श्रीपाल कवि ने उनकी सुन्दरता का निम्न प्रकार वर्णन किया है—

नाशा शुक चंची सम सुन्दर, अधर प्रवाली वृन्द ।
रक्तवर्ण द्विज पति विशिष्ट, निरखता आनन्द रे ॥९॥

1. सखी संवत् सत्तर एक बीसे बली जेष्ठ बदी प्रतिपद बीचसे
थी पोरबन्दर मोहोद्धव हवा, मत्स्या जलविध संघ ते मवा नवा
2. हूबहू बंस हिरणी हीरा' सम सोहे मन गो धन्य
बस मन रंजक माणिक्ये शुभ जायो सुन्दर तन रे
बालपणे बुधिराज विलक्षण विद्या खजुर निधान ।
जैनागम जिन भक्ति करें एह जिन साक्षर बहुतान रे ॥१॥

रूपे मदन समान मनोहर, बुद्धे अभय कुमार ।
सीले सुदर्शन समान सोहे गीतम सम अवतार रे ॥१०॥

एक दिन भट्टारक अभयचन्द्र ने अपनी प्रवचन सभा में हसित होकर कहा कि सहेजसागर के समान कोई भूमि नहीं है। वहीं पट्टस्थ होने योग्य है। वह आगमों का सार भी जानता है।

इसके पश्चात् संधर्षति प्रेमजी, हीरजी, गल्लजी, नेमीदास हृम्भड़ वंश शिरोमणी बाघजी, संधजी, रामजीनन्दन, गंगाजी जीवधर वर्धमान अदि सभी श्रीपुर से आये और चतुर्विध संध के समक्ष यह महोत्सव का आयोजन किया। संध सहित श्री जगजीवन राणा भी पाट महोत्सव में आये तथा दक्षिण से धर्मभूषण भी संध समिन्वित हुये। शुभ मुहूर्त देखकर जिन पूजा की गई। शान्ति होम विधान सम्पन्न हुआ। जलयात्रा एवं जीर्णमवार हुई और जेठ सुदी प्रतिपदा के दिन जय जयकार शब्दों के बीच शुभचन्द्र को पट्टस्थ विराजमान कर दिया। सूरि मन्त्र धर्मभूषण ने दिया।

1. एकदा अनिआनन्द सोले, असयच द्व जयकार ।
सुरायो सह सज्जन मभ रंगे, पाट लगो सुविचार रे ॥१॥
- सहेज सिधु सम नहीं को यतिवर, जगमा जालो सार ।
पाट योग द्व सुन्दर एहने, आपयो गच्छ नो भार रे ॥२॥
- सधपति प्रेमजी हीरजी रे, सहेर वंश शृंगार ।
एकलमल आवई अति उदयो, रत्नजी गुण भण्डार रे ॥३॥
- नेमीदास निरुपम मर सोहे अखई अवाई वीर ।
हृम्भड़ वंश शृंगार शिरोमणि बाघजी कंध वीर रे ॥४॥
- रामजीनन्दन गंगाजी रे, जीवधर वर्धमान ।
इत्यादिक सधपति ए साते, आवा श्रीपुर गांग रे ॥५॥
- पाट महोत्सव माइयो रंगे सध चतुर्विध लाव्या ।
संधर्षति श्री जगजीवन राणो सध सहित ते आव्या ॥६॥
- दक्षरा देश नो गच्छति रे, धर्मभूषण तेझका ।
अति आइंवर साथे साहसो करीने तप थराव्या रे ॥७॥
- शुभ मुहूरत जोई जिन पूजा शान्तिक होम विधान ।
जमणगर पुगते जल जात्रा आये श्रीकल गान रे ॥८॥

शुभचन्द्र हमची

पट्टस्थ होने के पश्चात् इन्होंने अपने जीवन का सध्य निर्धारित किया और अपने आरम्भ उद्धार के साथ-साथ समाज के अज्ञानान्धकार को दूर करने का बीड़ा उठाया और उन्हें अपने मिशन में पर्याप्त सफलता भी मिली । उन्होंने अनेक स्थानों पर विहार किया और जन जन के श्रद्धा एवं भक्ति के पात्र बने । वे तीर्थों के बन्दना कां जाते तो अपने साथ पूरे संघ को ले चलते । एक बार वे संघ के साथ भागी तुगीगिरी की यात्रा पर गए थे और वहां आनन्द के साथ पूजा विधान सम्पन्न किये थे ।

सांगीतुंगी गई जिन भेरियाण, पूजा कीया पवित्र निज यात्र ।
सांत्तिक त्रीस चोविमि पूजा, सोभताए, जल यात्रा करी पोखे पात्र ॥८॥

जब वे नगर में विहार करते तो उनके भक्तगण उनका गुणानुवाच करते, प्रशंसा करते और स्तवन में पदों की रचना करते । इस प्रसंग पर निर्मित एक पद देखिये—

बादो श्री शुभचन्द्र गुणकारी
श्रमचन्द्र सूरि पाठे पट्टोधर, अकलंक समो अवतारी ।
राहु मन्जी कुल मंडल सुंदर, ज्ञानकदा गुणधारि ॥
माणकदे घन्य तात मनोहर, अव्यय तत्व विचारि ॥२॥
मूलसंघ सरहंस विचक्षणा बादो विबुध मदहारी ।
पंच महाव्रत पीलशिरोमणि, सुद्धाचार अमरी ॥बादो॥
सोलकला शणि बदन शिराजित, मनमथ मान उगारी
बागी चिनोद मिथ्यागत भागे गली गयो उदारि
गही मंदन महिमा छे मोये, कीर्ति जय विस्तारि
अमल दिमल बागी संग बांते, गुण गाउ नर नारि ॥बादो॥१॥

“शुभचन्द्र” के शिष्यों में पं. श्रीपाल, गणेश, विद्यासागर, जयनागर, आनन्दसागर आदि के नाम विशेषतः उल्लेखनीय हैं । “श्रीपाल” ने तो शुभचन्द्र के किये ही पद्यों में प्रशंशरसगत गीत लिखे हैं—जो साहित्यिक एवं ऐतिहासिक दोनों प्रकार के हैं ।

म. शुभचन्द्र साहित्य निर्माण में अत्यधिक रुचि रखते थे । यद्यपि उनकी कोई बड़ी रचना उपलब्ध नहीं हो सकी है, लेकिन जो पद साहित्य के रूप में इनकी कृतियां मिली हैं, वे इनकी साहित्य-रसिकता की ओर प्रकाश डालने वाली हैं । अब तक इनके निम्न पद प्राप्त हुए हैं—

१. पेलो सखी चन्द्रक्षम मुख चन्द्र
२. आदि पुरुष भजो आदि जिनेन्दा
३. कौन सखी सुध ल्यावे श्याम की
४. जगो जिन पार्श्वनाथ भक्तार
५. पावन भक्ति मात पद्मावनि पेलतां
६. प्रात समये शुभ ध्यान धरीजे
७. वामपूज्य जिन वगिती-मुणो वामु पूज्य मेरी विनती
८. श्री सारदा स्वामिनी प्रणमि पाय, स्तव नीर जिनेश्वर विबुधराय ।
९. अज्झारा पार्श्वनाथनी विनती

उक्त पदों एवं विनतियों के अतिरिक्त अभी भ. शुभचन्द्र की और भी रचनाएँ होंगी, जो किसी युग के पृष्ठों पर अथवा किसी शास्त्र भण्डार में स्वतन्त्र ग्रंथ के रूप में अज्ञातस्थानों में पड़ी हुई अपने लङ्कार की खाट जोह रही होंगी ।

पदों में कवि ने उत्तम भावों की रचने का प्रयास किया है ऐसा मालूम होता है कि शुभचन्द्र अपने पूर्ववर्ती कवियों के समान "नेमि-राजुल" की जीवन-घटनाओं से अधिक प्रभावित होकर एक पद में उन्होंने "कौन सखी सुध ल्यावे श्याम की" भाविक भाव भरा । इस पद से स्पष्ट है कि कवि के जीवन पर मीरा एवं सूरदास के पदों का प्रभाव भी पड़ा है—

कौन सखी सुध ल्यावे श्याम की ।

मधुरी धुरी मुखवद बिराजित, राजमति गुण गावे ॥श्यामः॥१॥

अंग विभूषण गर्वमय मेरे, गङ्गीहर माननी रावे ।

करो कछु तन्त भन्त मेरी सजनी, मोहि प्राणनाथ मिलाने ॥श्यामः॥२॥

गज गमनी गुण मन्दिर श्यामा, मनमथ मान सतावे ।

कहा अबगुन अब दीन दयाल छोरि मुगति गग भावे ।

सब सखी मिली मनमोहन के द्विग, जाई कथाजु सुनावे ।

मुनो प्रभु श्रीशुभचन्द्र के साहिब, कामिनी कुल क्या लजावे ॥४॥

कवि ने अपने प्रायः सभी पद भक्ति रस प्रधान लिखे हैं । उनमें विभिन्न तीर्थंकरों का स्तवन किया गया है । आदिनाथ स्तवन का एक पद है देखिये—

आदि पुरुष भजो आदि जिनेन्दा ॥टेका॥

सकल सुरामुर योग सु व्यंतर, नर खग दिनपति सेवित चंदा ॥१॥

जुग प्रादि जिनपति भये पावन, पतित उदाहरण नाशिक नंदा ।
 दीन दयाल कृपा निधि सागर, पार करो अघ-निभिर जिनंदा ॥२॥
 केवल ग्यान के सब कछु जानत, भाङ्ग कहु प्रभु भो मति मंदा ।
 देखत दिन-दिन चरण सरण ते, विनती करत यो मुरि शुभसंदा ॥३॥

५१. भट्टारक रत्नचन्द्र

ये भट्टारक गुप्तचन्द्र के शिष्य थे और उनके स्वर्गवास के पश्चात् भट्टारक गादी पर बैठे थे । एक प्रशस्ति के अनुसार ये संवत् १७४८ कार्तिक शुक्ला पंचमी को भट्टारक पर पर आसीन थे । पं० श्रीपाल ने एक प्रभाती गीत में भ. रत्नचन्द्र के सम्बन्ध में निम्नगीत लिखा है जिसके अनुसार रत्नचन्द्र अत्यधिक सुन्दर एवं अंग प्रत्यंगों से मनोहारी लगते थे । वे विद्वान् थे । सिद्धान्त ग्रन्थों के पाठी थे तथा अष्टसहस्री जैसे कष्ट साध्य ग्रन्थों के पारगामी अध्येता थे । पूरा प्रभाति गीत निम्न प्रकार है —

प्रातः समे समरो सुखदाय
 वार्दिये रत्नचन्द्र सूरि राय ।
 रूप देखी गयो इन्द्र आवाम
 गमने गज हंस रह्या बनवास ।
 वदन देखि जगधर हृषी खीरा
 लोचने वाजीया खंज मृग मीन ।
 जेहनां वचन तणे भडकाये
 सकल वादीश्वर निज वण धाये ।
 शील असिवर करि काम निहंइ
 ओष माया मद लोभ मे छंइ
 पव मिथ्यात सरण मद छंइ
 प्रबल पंचेन्द्री महा रिगु डंइ
 नव नय तत्व सिद्धान्ति प्रकाशे
 भलीयरे श्री दिन आगम गरसे
 अष्टसहस्री प्रादि ग्रन्थ अनेक
 चार जिन वेद लहे सु विवेक
 श्री गुप्तचन्द्र पटोदर राय
 गणपति रत्नचन्द्र नगु पाय
 मण्डग मूलसंघे गुरु एह
 विबुध श्रीपाल कहे गुणगह

भट्टारक रत्नचन्द्र की साहित्य रचना में विशेष रुचि थी। लेकिन अपने पूर्व गुण्यों के समान वे भी छोटी-छोटी रचनाओं के निर्माण में रुचि रखते थे। अब तक उनकी निम्न रचनाएं मिल चुकी हैं—

१. वृषभ गीत अथ नाम आदिनाथ गीत
२. प्रभाति
३. गीत आदिनाथ
४. बलिभद्रनुं गीत
५. चिन्तामणि गीत
६. बावनगज गीत
७. गीत

(१) आदिनाथ के स्तवन में लिखा हुआ यह छोटा सा पद है किन्तु भाव भाषा एवं शैली की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण है। पूरा पद निम्न प्रकार है—

वृषभ जित सैवो सुखकार ।
परम निरंजन भवभय भंजन संसारार्णवतार ॥वृषभ॥ टेक
नाभिराय कुलमंडन जितवर जनम्या जगदाधार ।
मन मोहन मरुदेवी नन्दन, सकल कला गुणधार ॥वृषभ॥
कनक कांतिसम देह मनोहर, पांवसें धनुष उदार ।
उज्ज्वल रत्नचन्द्र सम कीरति विस्तरी भुवन मगार ॥वृषभ॥

(२) प्रभाति में भी भगवान् आदिनाथ की ही स्तुति की गयी है। प्रभाति में ९ अन्तरे हैं तथा वह "सुप्रात समरो जितराज, सकल मन बांछित संपजे काज" से प्रारम्भ की गयी है।

(३) राग अशावरी में निबद्ध आदिनाथ गीत भी भगवान् आदिनाथ के स्तवन के रूप में लिखा गया है। लेकिन भाव भाषा एवं शैली की दृष्टि से जैसा उक्त पद है वैसा यह गीत नहीं लिखा जा सका। इसकी भाषा भी गुजराती प्रभावित है। गीत अर्णवात्मक है काव्यात्मक नहीं। अन्त में कवि ने गीत की समाप्ति निम्न प्रकार की है—

जय जय श्री जितनाथ निरंजन बांछित पूरे भास रे ।
श्री शुभचन्द्र पटोद्वर ब्रज दीनकर, रत्नचन्द्र कहे भासरे ॥९॥

(४) बलिभद्रनुं गीत—श्री कृष्ण के बड़े भाई बलभद्र ने तुंगी पहाड़ से

निर्वाण प्राप्त किया था। इसलिये यह पहाड़ जैनों के अनुसार सिद्ध क्षेत्र की कोटि में आता है। इस क्षेत्र की भट्टारक रत्नचन्द्र ने संघ सहित संवत् १७४५ में यात्रा की थी। उसी समय यह गीत लिखा गया था। इसमें ११ पद्य हैं। काव्य एवं भाषा की दृष्टि से गीत सागम्य है लेकिन वह ऐतिहासिक बन गया है। गीत के ऐतिहासिक स्थल वाले पद्य निम्न प्रकार हैं—

संवत् सत्तर परतालीसे काँई संघरति अबई सार रे।
संघ सहित जात्रा करी, मुख बोले जय जयकार रे।
श्री भूलसंधे गोहाकर काँई गछपति गुण भण्डार रे।
रत्नचन्द्र सुरिघर कहो, काँई भावो नर ने नर रे ॥१॥

(5) “चिन्तामणी पारसनाथनु गीत” भी ऐतिहासिक बन गया है। अंकलेश्वर नगर में चिन्तामणि पार्श्वनाथ का मन्दिर था। भट्टारक रत्नचन्द्र उस मन्दिर के बड़े प्रशंसक थे। वहाँ बड़े ठाट से अष्ट ब्रह्म से भगवान की पूजा होती थी। पूरा गीत निम्न प्रकार है—

श्री चिन्तामणि पुजो रे पास, वांछित पोहोचरो मनणी आन।
आखो रे भवियण सहु मली सगे, वसुविध पूज्य रे करो मन रगे।
देस मनोहर कागी रे, सोहे, नगर बनारसी जय मन मोहे ॥आखो रे॥
विश्वनेन राजा रे राज करत, ब्रह्मादेवी राणी सु प्रेम धरत।
तस कुल अंबर अभीनवोचन्द, उदयो अनोषण पास जिनैद।
नीलवर्ण नव हस्त उत्तंग, निश्चय काम कलाघर जंग।
सुरगर खग फणी सेवित पाय, रात मवच्छर पूरण आय।
एकदा अस्थीर संसार जाणि चारित्र जीतु रे सनेग आणी।
तप बले उपनु केवल जान, लोकान् लोक प्रफासी रे भान।
सेव करम सहु दूर करी ने, मुगति बहुबरी प्रेम घरी ने।
दर्शन जन रे वीर्य दानंत, गाम्या सीरुष अननारेनंत।
वांछित पूरे रे पंचम बाले, संकट को विधन सहु टाले।
श्री अंकलेश्वर नगर निवास, संघ सकल तणी पूरे रे प्राप्त।
मुनी शुभचन्द चरण ची आणी, गुरि रत्नचन्द्र बड़े अमृत बाणी।
आखो रे भवियण सहु मली सगे, वसुविध पूज्य रे करो मन रगे।

(६) बावनगजागीत—भट्टारक रत्नचन्द्र ने संवत् १६५६ में बावनगज सिद्ध क्षेत्र की संघ सहित यात्रा की थी। इसकी चूलगिरि भी कहते हैं। यहाँ से पाँच

करोड़ मुनियों ने निर्वाण प्राप्त किया । संघ में कितने ही श्रावक थे जिनमें संघवी अखई, अम्बाई, संघवी शान्ति, माणकजी, अमीचन्द्र, हेमचन्द्र, प्रेमचन्द्र, रामाबाई आदि के नाम उल्लेखनीय हैं । जब संघ राजनगर आया तो राणा मोहनसिंह ने सबका स्वागत किया । बावनगजा सिद्ध क्षेत्र पर जब संघ पहुँचा तो संघ के साथ भट्टारक रत्नचन्द्र भी चूलगिरि पर चढ़े । वहाँ सानन्द भगवान की पूजा की तथा भट्टारकजी ने संघपति के तिलक किया । उस दिन पौष सुदी ३ सोमवार था तथा संवत् १७५७ था । बाँस ऐतिहासिक है इससे यह पुरा भीत वहाँ दिया जा रहा है —

श्री जिन चरण कमल नमुं, सरस्वति प्रणमुं पावरे ।
चूलगिरि गुन धर्णउं, श्री शुभचन्द्र पसावरे ॥१॥
पवित्र चूल गिरि भेजोये
मिलियो संघ सोहामने पुजधा बावनगज पावरे ।
पाँच कोड भुवि सिंह वा, जेणो रत्नमा सुर रावरे ॥२॥
कुँवरजी कुलमंडन हवा, संघीय अखई अम्बाई गुणवाण रे ।
तेह कुल अम्बर चाँदलो, संघ दिणति धोलो भाई जाणरे ॥३॥
संघवी अम्बाई सुत अमरसी, माणकजी अमीचन्द्र जोडरे ।
तेह सणा कुँवर कोडामणा, हेमचन्द्र प्रेमचन्द्र ते संघनो कोडरे ॥४॥
रामाबाई बहमी इम कहे, भाई संघतिलक जस जीजेरे ।
रत्नचन्द्र गुरपद नमी, संघनां काम ते उत्तम कीजे रे ॥५॥
एतें वचने मज्जन हरखिधा, पुरत लिधो गुरु पासेरे ।
मार्गसीर सुदी पंचमीं, गुरु श्रीसंघ पूरे आसरे ॥६॥
सनय सनय संघ चालिये, कियो मेदा ने मीलान रे ।
राज पुरिभोक्कडोरार्जायो राणो मोहनसिध चतुर सुजान रे ॥७॥
संघ आयो ते जाणि करि, राये सुभट भेज्यो ते निवार रे ।
जाथा करी संघ आणीयो, राजपुर नगर मझार रे ॥८॥
संघवी आवि राणांजो ने भोल्या, राणा जीये दिधा घणा मान रे ।
संघ भजे जहां आवियो, आवे कोफल पान रे ॥९॥
जीवनदास ने राय इम कहे, तहमे जा करावो सार रे ।
राय आज्ञा मस्तग धरी, संघने लेइ चाल्यो ते निवार रे ॥१०॥
बडवानि आबिडे राविधा, मिलियो श्रीसंघ सार रे ।
चूलगिरि डंगर चढ़्या, त्यारे मुखे बोले जयकार रे ॥११॥
पूज्य तिहा बहुविध हवि, हवा सुखकार रे ।
संघ पूज हवि सोभति, जाधक बोले मंगलाचार रे ॥१२॥

चड़ता चड़ता डुंगरे, आनन्द हरण अपार रे ।
 बाबन गज जब निरखीये, तयारे मुखे बोले जयकार रे ॥१३॥
 संवत सतर सतवनो, पोस सुदि तीज सोमवार रे ।
 सिद्ध श्रेष्ठ अति सोभते, ते निमहि मानो नहि पार रे ॥१४॥
 श्री शुभचन्द्र पट्टे हवो, पर वादि मद भंजे रे ।
 रतनचन्द्र सुरिवर रहें, सब्ब शीव जन रंजे रे ॥१५॥

॥ इति गीत ॥

इस प्रकार भट्टारक रत्नचन्द्र ने हिन्दी साहित्य के विकास में जो महत्वपूर्ण योगदान दिया वह इतिहास में सदा स्मरणीय रहेगा ।

५२. श्रीपाल

संवत् १७४८ की एक प्रणति में पं० श्रीपाल के परिवार का निम्न प्रकार परिचय दिया गया है—

पण्डित ब्रणामय भार्या वीरबाई

।

पण्डित जीवराज भार्या जीबाई

।

पण्डित श्रीपाल भार्या सहजलदे

।

पण्डित अखाई पं० अमरसी—पं० अनंतदास, पं० बल्लभदास-त्रिभलदास

पुत्री—अमरबाई, प्रेमबाई, बेलबाई

उक्त प्रणति के अनुसार पं० श्रीपाल के पितामह का नाम ब्रणामय एवं पिता का नाम जीवराज था । साथ ही उनकी मातामह वीरबाई एवं माता जीबाई थी । श्रीपाल की पत्नी का नाम सहजलदे था । उनके पांच लड़के अखाई, अमरसी, अनंतदास, बल्लभदास एवं विमलदास एवं तीन पुत्रियाँ अमरबाई, प्रेमबाई एवं बेलबाई थी । श्रीपाल का पूरा वंश ही पण्डित था । वे हंमतट के रहने वाले थे । तथा संघपुरा जाति के आबक थे । श्रीपाल एवं उसके पूर्वज भट्टारकीय परम्परा के पण्डित थे तथा भट्टारक रत्नकीर्ति, भट्टारक कुमुदचन्द्र, अभयचन्द्र, शुभचन्द्र एवं भट्टारक रत्नचन्द्र परम्परा में उनकी गहरी भास्था थी तथा अधिकांश समय उनके संघ में रहते आये थे ।

श्रीपाल भट्टारक परम्परा के कट्टर समर्थक थे। उन्होंने भट्टारक रत्नकीर्ति, की प्रशंसा में एक गीत, भट्टारक अभयचन्द्र की प्रशंसा में दो गीत, भ. शुभचन्द्र की प्रशंसा में पाँच गीत तथा भ. रत्नचन्द्र की प्रशंसा में तीन गीत लिखे हैं। इन गीतों में भट्टारकों के लावण्य मय शरीर की तो प्रशंसा की ही है साथ में उनके अध्ययन की, प्रभाव की एवं महानता की भी प्रशंसा की गयी है। इन गीतों में भट्टारकों के माता पिता वंश नाम भी गिनाए हैं। उन्होंने प्रभावित की है जिनमें प्रातः उठकर भट्टारकों के दर्शन करने तथा उनकी मुष्णामुवाच करने, नगर में विहार करने पर उनका जोरदार स्वागत करने की प्रेरणा दी गयी है। इन गीतों में भट्टारकों का ऐतिहासिक वर्णन तो मिलता ही है साथ में उनकी लोकप्रियता का भी पता चलता है।

पं० श्रीमान के ग्रंथ तक २० गीत मिले हैं जो उनके साहित्य ग्रंथ के स्रोतक हैं। उनकी अब तक उपलब्ध रचनायें निम्न प्रकार हैं—

१. उपामकाव्ययन
२. शान्तिनाथनु भवान्तर गीत
३. रत्नकीर्ति गीत (मराठी)
४. गीत
५. बलिभद्र स्वामिना चन्द्रायनी
६. अभयचन्द्र गीत
७. रत्नचन्द्र गीत
८. रत्नचन्द्र गीत
९. रत्नचन्द्र गीत
१०. शुभचन्द्र गीत
११. शुभचन्द्र गीत
१२. शुभचन्द्र गीत
१३. प्रभाति
१४. प्रभाति
१५. प्रभाति (अभयचन्द्र)
१६. प्रभाति (शुभचन्द्र)
१७. प्रभाति
१८. संववई हीरजी गीत
१९. गीत

२०. बाहुबलीनी विनती
२१. नेमिनाथनी गीत
२२. बीस विरहमान विनती
२३. घृत कल्लोनी विनती
२४. आदिनाथनी धमाल
२५. भरतेश्वरनुगीत
२६. गीत
२७. गीत
२८. भरतेश्वरनु गीत
२९. शुभचन्द्र हमची
३०. गुर्वाचली

उक्त रचनाओं में अधिकांश रचनाये लघु रचनायें हैं जिससे ब्रह्म की काव्य रचना में गहरी रुचि होने का परिचाय मिलता है साथ ही में उसके भट्टारकों का गरम भक्त होने का संकेत भी मिलता है। कवि की सबसे बड़ी रचना उपासकाध्ययन है। इसे उसने संवत् १७४२ में सूरतनगर में लिखा था। इसमें श्रावकाचार का वर्णन मिलता है। इसकी रचना सधगति रामाजी के पठनार्थ की गयी थी जैसा कि निम्न प्रशस्ति से ज्ञात होता है—

इति श्री उपासकाध्ययनाख्यान पं० श्री श्रीपाल विरचिते संवत्ति रामाजी नामांकिते श्री श्रावकाचाराशिधानो प्रबन्ध समाप्तः ।

पण्डित श्रीपाल के समय सूरतनगर जैन धर्म का प्रमुख केन्द्र था। वहाँ पर वासुपूज्य स्वामी का मन्दिर था जहाँ पर बैठकर कवि ने उपासकाध्ययन का लेखन समाप्त किया था।

मुन्दर सूरति सहेर मझार, सोमित श्री जिन भुवन मझार ।
 गिखार-बद्ध दीठड़ मन मोहई, कतक कलस छवज सोरण सोहैं ।
 वासपूज्य तणु एक विसाल, रया, रचना रची रम रसाल ।

श्रावकाचार में श्रावक धर्म का वर्णन किया गया है।

श्रीपाल ने भट्टारक रत्नकीर्ति, कभयचन्द्र, शुभचन्द्र एवं रत्नचन्द्र की प्रशंसा के रूप में जो पद लिखे हैं वे अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। इन पदों से भट्टारकों

का परिचय के साथ ही कवि की काव्य कुशलता का भी परिचय मिलता है । भट्टारक अभयचन्द्र के सम्बन्ध में लिखा हुआ एक पद देखिये—

चन्द्रवदनी मुग जोचनी नारि
अभयचन्द्र गच्छ नाथक बांदो संकलसंध जयकारि ।
भद्रा महामन्न मोड़े ते मुनिवर, गोवर्ग सम गुणधारी ।
अनन्तवि-गम्भीर विचक्षण, गुरु मे गुण भण्डारी ॥चन्द्र॥
निर्विल कलाविधि विमल विद्यानिधि विकट वादि हठ हारी ।
रम्य रूप रक्षित नर नाथक, सज्जन जन सुखकारी ॥चन्द्र॥
सरसति गच्छ शृंगार शिरोमणी, मूलसंघ मनोहारी ।
कुमुदचन्द्र पद कमल दिवाकर, श्रीपाल सुख बलीहारी ॥चन्द्र॥

इसी तरह भट्टारक रत्नचन्द्र पर जो पद लिखा है वह भी अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है ।

आवो रे सखि चन्द्रवदन गुणमाल ।
मुरिखर रत्नचन्द्र ने वधावो मोतीयडे भरि खाल ॥आवो॥
कील आभूषण अंगे सोहे, संजय विदश प्रकार ।
अष्टविंशति मूल गुणोत्तम, धर्म रुदा वश धार ॥आवो॥
परिमा सहे निज अंगे अंगे, कहे अग्रिह रूपग ।
श्रीपाल कहे ऐह पंचम काले, प्रमट करे निज प्राण ॥आवो॥

संवत् १७३४ की ज्येष्ठ शुक्ला दशोदशी के दिन सूरतनगर में शर्ति विधान किया गया । संघ को भोज दिया गया तथा भट्टारक रत्नचन्द्र ने स्लिक किया गया । जिन यन्त्र की दृक्ष ल की गयी उस समय पण्डित थोप ल वहीं थे ।

संवत् १७२१ में पोरबन्दर में महोत्सव किया गया । चारों प्रकार के सष एकत्रित हुए । भट्टारक अभयचन्द्र का पट्ट स्थापित किया गया । उस समय शुभचन्द्र मुनि अवस्था में थे जो गौतम के समान लगते थे ।^१

श्रीपाल ने भट्टारक शुभचन्द्र की हमची लिखी । इसमें उसने भट्टारक

१. सखी संयत सत्तर एक बीसे बली जेष्ट बली प्रतिपद बीधसे ।
श्री पोबननगर सौहास्य हवा मत्था चतुर्विध संघ हो नवा नवा ।

शुभचन्द्र का पूरा इतिवृत्त लिखा दिया। संवत् १७२१ में शुभचन्द्र को भट्टारक पद पर अभिषिक्त किया गया था। शुभचन्द्र की सुन्दरता, सहोत्सव में विभिन्न श्रावकों का योगदान, भट्टारक पद पर शुभचन्द्र की व्यक्तिगत, इसी उपलक्ष्य की संगीत एवं नृत्य का आयोजन आदि सभी का इसमें वर्णन कर दिया है। इसमें २९ पद्य हैं। यन्त्रिम दो पद्य निम्न प्रकार हैं—

दिवस मांदि जिम रवि दीपंतो, गिरि मा मेरु कहंत ।

तिम श्री अभयचन्द्र ने पाटि, श्री शुभचन्द्र सोहंत रे ॥ २८ ॥

श्री शुभचन्द्र तसो मे हमची जो गाये जित धाम ।

श्रीपाल विबुध वंदे ए दाणी, ते सब बंछिन रामे रे ॥ २९ ॥

श्रीपाल ने भट्टारक अभयचन्द्र के गीत गाये, फिर भट्टारक शुभचन्द्र की प्रशंसा में गीत लिखे और ग्रन्थ में रतनचन्द्र के भट्टारक बनने पर उसका गुणानुवाद किया। इससे यह जान पड़ता है कि ये भट्टारकीय पंडित थे। संघ के साथ रहना तथा समय समय भट्टारकों का गुणानुवाद करना, संघ का इतिहास लिखना समाज को संघ के सम्बन्ध में प्रवर्गन कराते रहना उनके प्रमुख कार्य थे। ये पंडित थे और वे भी गुरुत्वंती पण्डित।

संवत् १७२८ की एक प्रशस्ति मिलती है जिसमें पं० श्रीपाल के पढ़ने के लिये सूरत में ग्रन्थों की निधि की गयी थी। उसमें भट्टारक शुभचन्द्र का उल्लेख किया गया है जिनके उपदेश से ग्रन्थ की प्रतिनिधि की गयी थी। प्रशस्ति निम्न प्रकार है—

संवत् सत्तर अठाहम : १७२८ : वर्षे मार्गशीरमासे शुक्लपक्षे पंचमी दिने शुक्रवारे श्रीसूर्यपूरे श्रीधामपुत्र्य जैत्यालये श्री मूलसंघ सरस्वतीगच्छे बलात्कारणो श्री कुन्दकुन्दान्वये भ० ग्लाकीतिदेवा तत्पट्टे भ० कुमुदचन्द्रदेवा तत्पट्टे भ० श्री अभयचन्द्र देवास्तत्पट्टे भ० श्री शुभचन्द्रोपदेशात् संघपुराजाते पंडित जीवराज भार्याजीवादे तथा मृत पंडित श्रीपाल पठताथे ।

गुरुवित्री में भट्टारक ज्ञानानन्द की परम्परा में होने वाले भट्टारकों का गुणानुवाद है। गुरुवित्री ऐतिहासिक बन गयी है। यदि संवत् लिखने की उस समय परम्परा होती तो ऐसे गीत भी निश्चित ही इतिहास की सामग्री बन जाते फिर भी इस प्रकार के गीत साहित्य की अमूल्य धरोहर हैं। इसमें ११ पद्य हैं। पूरी गुरुवित्री निम्न प्रकार है—

बंदो गुरु विद्यानन्द सूरि, जेह नामे दुख जाये दूरि ।
 जनम जनम नां पाप पलाय, जिन हईं मन वाञ्छित पाय ॥ १ ॥
 रत्नित भूषण छे गोटा मति, वेष्टीं अग जाये शुभगती ।
 बधन अनुपम अमिय समान, व्यासरीन रंज्यो सुस्तान ॥ २ ॥
 लक्ष्मीचन्द्र नमो नित पाय, जेहनी सेव करे नर राय ।
 गङ्गनायक गुणवो मन्दार, भव सागर उतारो पार ॥ ३ ॥
 अभयचन्द्र सेवो सहु संत, जेहना गुणनो नवि अंत ।
 पाले संयम साधु सुभाण, जेहनी महीपति मति आण ॥ ४ ॥
 अभयनन्दि प्रति कोमलकाय, जेहनी बचन भला सुखदाय ।
 साधु शिरोमणि कहीये एह, भविष्य नाम जपा सह तेह ॥ ५ ॥
 रत्नकीरति रूपे प्रति भलो, चन्द्रकिरण सम जस उजलो ।
 हूबख बंश तणो सिंगार, जेहना गुणनो नवि पार ॥ ६ ॥
 कुमुदचन्द्र गुरुवो चांदलो, रत्नकीरति पाटे गोर भलो ।
 मोढवंश उदयाचल रवि, जेहना बचन बखाने कवि ॥ ७ ॥
 अभयचन्द्र सेवो शुभमति, जेहनां चरण नमें तरपती ।
 बादि शिरोमणि कहीये एह, गुणसागर विद्यानो गेह ॥ ८ ॥
 अभयचन्द्र कुल अवर चन्द्र, उदयो पुन्य तस्वर कंद ।
 दीठे भविष्य मति आणद, बादो सहे गुरु श्री शुभचन्द्र ॥ ९ ॥
सम रवि, जेहना बचन बखाने कवि ।
वर जसवंत, जेहना पद सेवे मांहत ॥ १० ॥
 समरा.....गुरु राय, समरता सुख संपति दाय ।
 रत्नशशि सेवो नन्य काल, प्रणमे जिन सेवक श्रीराज ॥ ११ ॥

इति श्री गुर्विली समाप्त ।

बाहुबलीनी विनती—इसमें ऋषभदेव के द्वितीय पुत्र बाहुबली की स्तुति की गई है । विनती १२ पद्यों में पूर्ण होती है । रचना सामान्य है । पूरी विनती निम्न प्रकार है—

श्री जिनवर बदन उपनिमाय, पावन सुत्र सररवति प्रसाम पाय ।
 लहू वाञ्छितार्थ विद्या विबुध, जिनबाणी अनोपम होये सुद ॥ १ ॥
 भुजबलि गुण वर्णन तुझ पसाय, जीम हेयडले हरष आण पाय ।
 बृषभ नूप सुन्दर तनुज एह, धनु पाचसे पचीस उज देह ॥ २ ॥

बलवंत विलक्षण गुणनो गेह, पोयणपूरि नसरीये राजे एह ।
 सुखद सुभट नर नमित पाय, जेण जीत्यो..... ॥ ३ ॥
 मानभंग दीठो जव जेठ भ्रात, वैराग धरो वन माहे जात ।
 दीधे राजकाज महाबलने आज, प्रभु चाल्या आत्मशु करवा काज ॥ ४ ॥
 कैलासगिरि आदिनाथ वास, जे चारित्र्य लीधू मन उल्लास ।
 तप तापे ज्वालि माया जाल, क्षमा खडगधरी हणो क्रोध काल ॥ ५ ॥
 जीत्यो समाकेत पाजे लोभ वेरी, ज्ञानाहु सं मद गज राक्षो घेरी ।
 नव करता गत एक वर्ष सार, पछे कमहसी चरी मुगति नार ॥ ६ ॥
 जय बाहुबली देवाधिदेव, तुम सूर नर किन्नर करेय रोव ।
 तू पंचम काले प्रतप वीर, तू सकल सूरमा हे प्रवीण ॥ ७ ॥
 तोरे नामे भुजंग पुण्य माल, तोरे नामे सडे न पीसाव काल ।
 तोरे नामे अर्णव जावे पार, तू मन गाम कोथं पुरे..... ॥ ८ ॥
लेख बाधसिंह दूरे जाय, भुजवली तोरी नाम तणे पसाकय ।
 सुभ सागर तट मोहे नगर रम्य, रुडू नामे घनोपम दपण घन्य ॥ ९ ॥
 ताहीं सधपति हेमजी घमंवंत, धसे बलीक वंश हुं बड ससंग ।
 भुजवली मोहे तल गेह चंद, प्रभु पद पूजनां उपजे आनंद ॥ १० ॥
 श्री भूलक्षय माहत संत, जयो रत्नतीति मोर विद्यावंत ।
 तस पद उदयो पिछा समुद्र, बादीगज केसरी कुमुदचंद्र ॥ ११ ॥
 तस पाट पट्टोधर प्रमटो पुर, देखो वचन कल गया बादीपुर ।
 सूरि अश्वचंद्र उदयो दिनेस, कर जोडी ने सेवक (श्रीपाल) नामे सीस ॥ १२ ॥

धृत कस्तूरीजनी विनती—हंसपुरी में कमला नामक आशिका थी । वह प्रा-
 दिन पंचामृताभिषेक करती थी । एक रात्रि को उसकी स्वप्न आया कि
 आदिनाथ की प्रतिमा का घो से अभिषेक किया जावे तो सब सिद्धियां प्राप्त होगी
 प्राप्त होने पर प्रतिमा को घो से अभिषेक किया गया । इसके पश्चात् जिसने
 अभिषेक किया उसी के सब सिद्धियां प्राप्त हो गयी । इसी का श्रीपाल कवि
 अपनी इस विनती में उल्लेख किया है । रचना सात्वत है । विनती में
 पद्य हैं ।

श्रीपाल ने कुछ गीत भी लिखे हैं जिनमें आदिनाथ, परमेश्वर नेमिनाथ आ-
 का स्तवन किया गया है । सबसे अधिक गीत आदिनाथ के हैं जिनसे पता चल-
 है कि वे भ० ऋषभदेव के अधिक उपासक थे । एक ऋषभदेवभूषित में 'धुले वन

मझार" लिखा है जिससे पता चलता है कि वे संवत् १७४७ में ऋषभदेव की यात्रा पर सस्रध आये थे। संघ गूरत से चला था जिसके प्रमुख थे भ० रत्नचन्द्र। यह संघ अखई एवं अवाई ने चलाया था जो पहिले में ही संचपति कहलाते थे। इसमें २० पद्य हैं।

इस प्रकार पं० श्रीपाल की साहित्यिक सेवाएं अत्यधिक उल्लेखनीय एवं चिरस्मरणीय हैं।

२३. ब्रह्म जयसागर

ब्रह्म जयसागर भट्टारक रत्नकीर्ति के प्रमुख शिष्यों में से थे। ये ब्रह्मचारी थे और जीवन पर्यन्त इसी पद पर रहने हुए अपना आत्म विकास करते रहे। जयसागर अपने गुरु के समान ही साहित्यागमना में लगे रहते थे। उन्होंने या तो भट्टारक रत्नकीर्ति के सम्बन्ध में पद लिखे हैं या फिर छोटी छोटी अन्य कृतियाँ लिखी हैं। उनकी अब तक किसी बड़ी रचना की प्राप्ति नहीं हो सकी है।

जयसागर के जीवन के सम्बन्ध में अभी कोई विशेष जानकारी प्राप्त नहीं हो सकी है लेकिन इन्होंने अपनी सभी रचनाओं में भट्टारक रत्नकीर्ति का ही उल्लेख किया है इसलिये ऐसा जान पड़ता है कि वे रत्नकीर्ति के समय में ही स्वर्ग-वासी हो गये थे। रत्नकीर्ति संवत् १६५६ तक भट्टारक पद पर रहे इसलिये ब्रह्म जयसागर को भी हम इससे आगे नहीं ले जा सकते। गुजरात का धोधा नगर इनकी साहित्यिक सेवाओं का केन्द्र था। वैसे वे भी भट्टारक रत्नकीर्ति के साथ रहने वाले पंडित थे। जयसागर की अब तक निम्न रचनायें उपलब्ध हो चुकी हैं—

- (१) भूतडी गीत
- (२) मल्लिदासकी बेल
- (३) संघ नीत
- (४) विद्यानन्दिगीत
- (५) सांकटहर-पाप्रबंश जिनगीत
- (६) धेशपाल नीत

अ(७) प्रभाति

धेशपालगीत

१. बेल की पुरी प्रा ^{जीविना पूरा गीत}
२. पुरा पद आगे दिथा ^{नीत}

(११) यशोवर्धनी

(१२) पंच कल्याणक गीत

उक्त रचनाओं का सामान्य परिचय निम्न प्रकार है—

(१) चूनड़ी गीत

इसका दूसरा नाम चारित्र चूनड़ी भी दिया हुआ है। राजमती नेमिनाथ से चारित्र चूनड़ी ओढ़ने के लिये मांग रही है। नेमि गिरजा के भूषण है। वहाँ ब्रह्म जीवों का निवास है। चारों ओर सम्पत्तक रूपी हरियाली है। पीला रंग बहुत सुन्दर लगता है जिस पर देवता भी मोहित हो जाते हैं। मूल गुणों का स्वच्छ रंग बन गया है। जिनवाणी का उसमें रस दिया है। तब से वह चूनड़ी सूखती है। उससे रंग चटकता है छूटता नहीं। पांच महाव्रत कर्मों के समान रंग लाने वाले हैं। पांच समितियों से नहीं मिटने वाला नीला वर्ण चढ़ जाता है। चारोसी लाख जो उत्तर गूण है उससे वह चुनरी सुन्दर लगती है। तीन मूर्तियाँ से वह चूनड़ी नीली, पीली से आकाशक होकर बन गई मोह रही है। तब प्रकार की चूनड़ी को ओढ़कर राजसुख स्वर्ग चली गयी जहाँ वह स्वर्ग के सुख भोग रही है। इस प्रकार की चारित्र चूनड़ी जो भी ओढ़ेगा उसे मन वांछित सुखों की प्राप्ति होगी और अन्त में संसार सागर को पार करेगा।

चूनड़ी में १६ पद्य हैं। ब्रह्म जयसागर ने इसमें रत्नकीर्ति को स्मरण किया है : उसका अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है—^१

सूरि रत्नकीरति जयकारी, शुभ धर्म शशि गुण धारी ।
नर नारी चूनड़ी गावे, ब्रह्म जयसागर कहे भावे ॥ १६ ॥

२. संधपति श्री मल्लिदासजी बेल

यह एक ऐतिहासिक कृति है जिसमें मल्लिदास द्वारा आयोजित पंचकल्याणक प्रतिष्ठा का वर्णन किया गया है। पंचकल्याण प्रतिष्ठा बलसाह नगर में हुई थी। वे हूबहू ब्रह्म के शिरोधार्य थे। उनकी पत्नि का नाम राजबाई था। मल्लिदास का पुत्र मोहनदे का पति था। वह राजा धेरिक के समान जिन भक्ति में ओतप्रोत था। प्रतिदिन अपार सम्पत्ति का दान करता रहता था। मट्टारक रत्न वह भक्त था इसलिये उन्हीं के उद्देश से उनमें पंचकल्याणक प्रतिष्ठा नेमिनाथ प्र

१. चूनड़ी की पूरी प्रति आगे दी गयी है।

के हैं जिसे पता चल
रूपभदेवगुगीत में "धूले वन

संगसिर शुक्ला ५ के दिन कुंकुम पत्रिका लिखी गयी। विभिन्न नगरों में स्वयं पंडितों की भेजा गया। रत्नकीर्ति अपने विशाल संघ के साथ वहां गये। प्रतिष्ठा की सभी विधियाँ-अंकुरारोपण, वास्तुविधान, नंदीगाठ, होम आदि सम्पन्न किये गये। जल-यात्रा की गयी जिसमें स्त्रियाँ संगलगीत गाती हुई चलने लगी। राजबाई के हार का ठिकाना नहीं रहा। अंत में कलशाभिषेक के पश्चात् प्रतिष्ठा महोत्सव सम्पन्न हुआ। माघ शुक्ला ११ के दिन भ. रत्नकीर्ति ने मल्लिदास के तिलक किया तथा पंच महाव्रत अंगीकार कराये गये। उसका नाम जितचन्द्र रखा गया।

बेल लघु रचना अवश्य है फिर भी तत्कालीन धार्मिक समाज का अच्छा चित्र उपस्थित करता है। बेल का अन्तिम पाठ निम्न प्रकार है—^१

मन आछति फल पाय, ज्यो ए संवपति श्री मल्लिदास ।
ब्रह्म जयसागर इम कहैए, सोभागैए पीहोता आ सके ॥

३. संघगीत

भट्टारक रत्नकीर्ति ने अपने संघ के साथ शयूजय एवं गिरिमार तीर्थों की यात्रा की थी। संघ में मुनि अधिक यावक आदिका चारों ही थे। रत्नकीर्ति सबके प्रमुख थे। तेजबाई संघ की संचालिका थी। संगसिर सुदी पंचमी के दिन भागेज गोपाल एवं उसकी पत्नि वेजलदे को तिलक करके सम्मानित किया गया। रत्नकीर्ति पालकी में विराजते थे। गीत छोटा सा है लेकिन तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था पर अच्छा प्रकाश डालता है।

४. विद्यामन्दि पद

इस पद में मूलसंघ के भट्टारक देवेन्द्र कीर्ति के शिष्य भट्टारक विद्यामन्दि का स्तवन किया गया है। विद्यामन्दि ने गुजरात में धर्म की बड़ी प्रभावना की थी। वे भट्टारक होते हुए भी दिगम्बर रहते थे तथा कामदेव पर विजय प्राप्त की थी। बोरवाड वंश में उत्पन्न हरिराज उनके पिता का नाम था तथा चापु माता का नाम था।^२

५. प्रभाति

जयसागर ने अपनी प्रभाति गीत में भट्टारक रत्नकीर्ति का गुणानुवाद

१. बेल की पूरी प्रति आगे दी गयी है
२. पूरा पद आगे विधा गया है।

किया है तथा जन जन को रत्नकीर्ति की पूजा, भक्ति करने की प्रेरणा दी गयी है। उस समय प्रातः काल श्रावक गण भट्टारकों के दर्शन करते थे तथा उपदेश सुनकर अपने जीवन को सौभाग्यशाली मानते थे। भट्टारकों के शिष्य जाता में उनका प्रचर भी किया करते थे।

६. संकटहर पार्व जिनगीत

हांसोट नगर में पार्वनाथ स्वामी का मन्दिर था। उसी का इस गीत में स्तवन किया गया है। उसे शकट हर पार्वनाथ के रूप में स्मरण किया गया है। मन्दिर में प्रतिदिन उत्सव विधान होते रहते थे तथा सभी भक्त अपनी मनोकामना के लिये प्रार्थना किया करते थे।

७. क्षेत्रपाल गीत

धोषा नगर के दिगम्बर जैन मन्दिर में क्षेत्रपाल विराजमान थे। उन्हीं के स्तवन में यह गीत लिखा गया है। कवि ने क्षेत्रपाल को सम्यग्दर्शित एवं जिन शासन का रक्षक कहा है।

८. भट्टारक रत्नकीर्तिना पूजा गीत

कवि के समय में भट्टारकों का इतना अधिक प्रभाव था कि उनकी भी अष्टप्रकारी पूजा होती थी। य. जयसागर ने प्रस्तुत गीत में इसी के लिये आह्वान किया है।

९. चौदई गीत

इसीमें कवि ने भट्टारक पद्मनाभ-भा. देवदकीर्ति से लेकर भट्टारक रत्नकीर्ति तक के भट्टारकों का उल्लेख किया है। गीत ऐतिहासिक वृत्ति है।

१०. नैमिश्वर गीत

नैमिनाथ पर कवि के दो गीत उपलब्ध हुए हैं। गीत सामान्य हैं।

११. यशोधर गीत

यशोधर के जीवन पर जैन कवियों ने सभी भाषाओं में काव्य लिखे हैं। कवि ने भी इस गीत में राजा यशोधर के जीव. का अति संक्षिप्त वर्णन किया है।

१२. संस्कृतमारुत गीत

यह कवि की सबसे बड़ी रचना है जिसमें शान्तिनाथ स्वामी का गर्भ कल्याणधर

णक, जन्म, तप, ज्ञान और निर्वाण कल्याणकों का वर्णन किया गया है। कल्याणक गीत की रचना धोधानगर में चन्द्रभु चंर्यालय में की गई थी। इसमें पांच कल्याणकों की पांच छालें हैं।

१४. कविवर गणेश

गणेश कवि भट्टारक रत्नकीर्ति का प्रमुख शिष्य एवं प्रशंसक थे। इन्होंने अपने गुरु एवं ग्राह्यपदाता के सम्बन्ध में जिन्हें गीत लिखे हैं उतने दूसरे कवियों ने बहुत कम लिखे हैं। गणेश कवि के सभी गीत आने पीछे इतिहास लिये हुए हैं। ये कभी विहार के समय के, कभी थापा संघों का नेतृत्व करते समय के, कभी जनता से भट्टारक रत्नकीर्ति का स्वागत करने हेतु प्रेरणा देने के उद्देश्य से लिखे गये हैं। गणेश कवि बहुत सुनंस्कृत भाषा में रत्नकीर्ति की प्रशंसा करता है। इस प्रकार के गीतों की संख्या १२-१३ होगी। इन गीतों में गणेश कवि भक्तिभाव से रत्नकीर्ति भट्टारक का गुणानुश्रव करता है। इन गीतों से भट्टारक के माता पिता का नाम, ब्रह्म का नाम, जन्म स्थान का नाम, भट्टारक पद प्राप्त करने का स्थान, सरीर की सुन्दरता, कमनीयता, अंग-वस्त्रों की बन बट आदि के सम्बन्ध में विस्तृत वर्णन किया गया है। इसी तरह का एक पद देखिये—

रोग केदार गडो

साभल सजनी सेहे गोर सोहेरे ।

रत्नकीर्ति सूरि जनमन मोहे रे ॥

अभयनन्द पद कंज उदयो सूर रे, कुमति तिमिर हर विद्या पूर रे ॥१॥

हुं वड बंश त्रिबुध विछरत रे, मरत सेहेवलदे देरीरास तत रे ।

कुंभर कलानिधि कोमल काय रे, पद पूजो प्रेमे पातक पलाय रे ॥२॥

श्री मूलसंघ महिमा विधान रे, सरसति गछ गोर गोयम समान रे ।

अरध शशि समा सोहे शुभ भाल रे, वदन कमल शुभ नयन विश ज रे ॥३॥

वजन दाडिम सम रसना रसाल रे, अधर बिबीफल विजिन प्रवाल रे ।

कठ कंठू सम रेखाश्रव सजे रे, कर किसलय सम नत्र छवि छाजे रे ॥४॥

हृदय विसाल शर मंत्र गति चाल रे, गच्छपति गुरयो रंभीर गुरामाल रे ।

पंच महासत्त धर दया प्रतिपाल रे, पंच सन्निधि त्रय गुपति गुणाल रे ॥५॥

उदयो अवति अभयकुमार रे, दिगम्बर दर्शन तणौ सजगार रे ।

सयल प्रवल बल जग जीतो पार रे, भील मोभागी रुद्र उदार रे ॥६॥

कनक वरण तन सुरूप रे, महि तसे माने मोटा बहु भूप रे ।
 विनय विवेकी नर पशुधान रे, अमर महीरुह सम आपे दान रे ॥७॥
 जग जस निर्मल अमल सरीर रे, गिरिवर समधार जलधी गंभीर रे ।
 तुलसी ठंडे मुल सांभरे नेह रे, अकलक निकलंक गोवरधन जेहरे ॥८॥
 अभेनन्द पाटे पटोधर एह रे, सुगुण सलूणो बंजु मु' सनेह रे ।
 धर्म भूषण धन सूरिमंत्र आपारे, गणेश कहे गोर गछपति बाप्या रे ॥९॥

उक्त गीत में रत्नकीर्ति के सम्बन्ध में कितना खुलकर लिखा है पाठक उसका आस्वादन कर सकेंगे । कवि ने उनकी प्रत्येक बात पर प्रकाश डाला है यहाँ तक कि उसके स्वभाव की चर्चा कर डाली है । एसी तरह के कम अथवा अधिक रूप में और गीतों में प्रकाश डाला गया है । जो पूर्णतः सत्य घटनाओं के आधार पर ही आधारित हैं ।

कवि के दो गीत नेवावा के गीत के नाम से विदित हैं । इसने संवत् १६४३ में भट्टारक रत्नकीर्ति से दीक्षा धारण की थी । गणेश कवि ने इस घटना को भी छन्दो-बद्ध किया है ।

एक प्रशस्ति में गणेश कवि ने भट्टारक रत्नकीर्ति के गुणानुवाद को शिव सुख का साधन माना है । पूरी प्रशस्ति निम्न प्रकार है—

गुप्रभाति नमो देव जिएनन्द ।

रत्नकीर्ति मुरी सेवो आनन्द ॥

सबल प्रवल जेणे काम-हरावणो, जानणा गोरसाहि एतीये बध्नाव्यो ।

बागवादनी बरने बसे एहने, एहनी उपमा कहीसे नहने ॥२॥

गछपति गिरवो गुण गभीर, शील सनाह धरे मन धीर ॥३॥

जे नरनारी ए गोर गीत गासे, गणेश कहे ते शिव सुख पासे ॥४॥

एक दूसरे गीत में गणेश कवि ने रत्नकीर्ति की अनेक उपमाओं से प्रशंसा की है ।

कला बहोत्तरि कोडामणो रे, कमल बदन करुणाल रे ।

गच्छ नायक गुण आगजो रे, रत्नकीर्ति विनुध विशाल रे ॥

आवो रे भासिनी गज गामिनी रे, स्वामीजी वाणी विख्यात रे ॥

अभयनन्द पदकंज दिनकर रे, धन एहना मातने तात रे ।

मान भूकाव्या मिथ्यातिथ्या रे, हाथिया ते बादी भजनी सोह ।
 मूलसंघ मुनि माहि सरस्वती गच्छ माहि लोहरे ॥३॥
 चारित्र्य रंग सोहे खडो रे, समकित सुमति सोहंत रे ।
 भागवादिनी मुखे खडो रे, ह्यडला भविक जन मोहंत रे ॥४॥
 मान सरोवर सोहे हंससुं रे, तारा माहि सोहे जिम चन्द रे ।
 रत्नकीर्ति सोहे सीलसूं रे, मुंदडी नगीना केरा वृन्द रे ।
 जितमत जाणे जासि युगतसुं रे, जालणापुर प्रसिद्ध रे ।
 संघवी सोला आसवा मानी रे, गणेश कहे पाट सिद्ध रे ॥६॥

भट्टारक रत्नकीर्ति के गुणगुवाद के प्रतिरिक्त भट्टारक कुमुदचन्द्र की प्रशंसा में लिखा हुआ एक गीत मिलता है जिसका नाम गूढ स्तुति है । संवत् १६५६ में बारडोली नगर में कुमुदचन्द्र को भट्टारक पद पर अभिषिक्त किया गया था प्रस्तुत गीत में उसी का उल्लेख किया गया है । कुमुदचन्द्र मोडवंश के आशंक थे उनके पिता का नाम सदाफल एवं माता का नाम पदमाबाई था । वे दर्शन ज्ञान एवं चारित्र्य से सम्पन्न थे । पूरी स्तुति निम्न प्रकार है—

माई रे मन मोहंत मुनिवर सरस्वती गच्छ सोहंत रे ।
 कुमुदचन्द्र भट्टारक उदयो भविष्य मन मोहंत रे ॥माई॥१॥
 गुण गम्भीर गरज गच्छ नायक बायक कडा रसाल रे ।
 रत्नकीर्ति गोर पाटि पटोघर मानदे भला भूपाल रे ॥माई॥२॥
 संघपति श्री कहानजी भाइयो भल वीर रत्न जयवंत रे ।
 करे प्रतिष्ठा पांठ महोत्सव गो थाणे गुणवंत रे ॥माई॥३॥
 वित्त विनसे उलट अरे धन्य मल्लिदारा ।
 कुमुदचन्द्र गच्छ नायक भाण्या, गोपाल पुढवी आस रे ॥माई॥४॥
 संवत् सोल छपन्ने, वेगाखे, प्रगट पटोघर भाण्या रे ।
 रत्नकीर्ति गोर बारडोली वर, सूर मन्त्र शुभ भाण्या रे ॥माई॥५॥
 मूलसंघ प्रगट मणि माहंत, सरसति गच्छ सोहावे रे ।
 कुमुदचन्द्र भट्टारक आगति वादि को धादे न आखे रे ॥६॥
 मोडवंश शृंगार शिरोमणि, साह सदाफल ताव रे ।
 जायो यतिवर जुग जयवंतो पदमाबाई सोहात रे ॥ ॥७॥
 शोल तणो रंग अंग अनोपम दर्शन ज्ञान चारित्र्य रे ॥ ॥८॥

अभयनन्दि गोर पाट पट्टोधर, रत्नकीर्ति मुनिन्द ३ ।

तस पाटि सोहे कुमुदचन्द्र गोर, गणेश कहे आनंद रे ॥ ॥९॥

इस प्रकार गणेश कवि ने भट्टारकों के सम्बन्ध में जो गीत, प्रभृति लिखी है वह इतिहास की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण है ।

लेकिन गणेश कवि के सम्बन्ध में इन गीतों से कोई जानकारी नहीं मिलती । यह अवश्य है कि उन्होंने कुमुदचन्द्र का पट्टोसव देखा था तथा कुछ समय तक जीवित भी रहे थे । क्योंकि यदि अत्रिक समय तक जीवित रहते तो उनको सम्बन्ध में और भी गीत लिखते ।

५५. सुमतिसागर

ये भट्टारक अभयनन्दि के शिष्य थे । अपने गुरु भट्टारक अभयनन्दि के साथ रहते थे । उनके बिहार के समय जब साधारण को भट्टारकजी के प्रति भक्ति-भाषना प्रगट करने की प्रेरणा दिया करते थे । भट्टारक अभयनन्दि के पश्चात् जब रत्नकीर्ति भट्टारक बने तो वे रत्नकीर्ति के प्रिय शिष्य बन गये । वे गुरु भाई होने के कारण रत्नकीर्ति इनका बहुत सम्मान करने थे । इन्होंने रत्नकीर्ति की प्रशंसा में भी गीत लिखे हैं । इनकी अब तक जो कृतिया उपलब्ध हुई हैं उनके नाम निम्न प्रकार हैं—

१. हरियाली-दो
२. साबर्मी गीत
३. नेमिगीत
४. गणधर विनती
५. रत्नकीर्ति गीत
६. नेमिनाथ द्वादशमासा
७. अग्न्य गीत

१. हरियाली

कवि ने हरियाली के नाम से दो गीत लिखे हैं । इनमें मानव के जन्म के सम्बन्ध में तथ्य लिखे गये हैं । मनुष्य का चारों ओर हरियाली ही हरियाली दिखती है उसमें वह अपना सब कुछ भूल जाता है जो उचित नहीं । इसी तथ्य को कवि ने अपने दोनों गीतों में निबद्ध किया है । गीतों में भट्टारक अभयनन्दि के नाम का उल्लेख किया है इससे ये उन्हीं के समय के लिखे हुए गीत लगते हैं ।

२. साधर्म्य गीत

यह श्री सम्बोधनात्मक गीत है : जिसमें १० पद्यों हैं : इसे सम्भवन्दि बट्टारक के समय लिखा गया था । गीत में संसार की भ्रमानकता पर प्रकाश डाला गया है ।

३. नेमि गीत

राजुन नेमि के अभाव में अपने आपको कैसी समझती हैं इसी का गीत में वर्णन किया गया है । गीत अच्छा है । इसीलिये यहां उसे दिया जा रहा है—

नेमि आत्मा राजिमति घर काया छे सम्बन्ध करे ।
 गरि परिता डूब गयर ने मिम सहिषे, कु वियोगन रे ।।
 नारि भणे गृणि मुझ नाथक, तुम मुझ बनो संयोग न रे ।
 एक भेक थई लीर नीर तिम लीजे ॥ लीजो सारो भोगन रे ।
 तुझ बिन मुख न निदा मारी तुम बिन न हिय संयोगन रे ।
 तुम बिन रजे एकला भाई, किमे दुखिया गियोगन रे ।
 ह छे नारी गुरुवन्तीजी, नेमि कामु कीजे जायन रे ।
 रुक्मला सयलि जेनुराई, नाथ नहीं मुझ लखन रे ।
 जिम बिना प्रतिमा देहरो जी, मुग बिना रूप न सोभे रे ।
 जिम बिना परिमल फूल न सोभे, सरोवर कमल बिहडन रे ।
 धर्म दया बिना कदा न सोभे ज्ञान बिहूणो जीवन रे ।
 किरा बिना जेम भुनिवर दोखे, दुखिया फिरे संसारन रे ।
 दान बिना जिम लखनी मिनि, पात्र बिना जिम दानन रे ।
 वीर बिना भोजन नहि सोभे, कला बिहूणो बोधन रे ।
 विवेक बिना जिय नर नानी भाई, नवि सोभे बहु मध्यन रे ।
 तेह बिना जिम प्रीति न सोभे, निगहूं तुझ बिना नाथन रे ।
 जलवर जेन बिन टलवले जी, तिमहूं तुझ बिना पंछिय रे ।
 एक बिस गुरुवन्त प्रीतजी, ते अन्न छडियन छडे रे ।
 गरखे सरिणु गेल विने, कस्तार तु का खंडे रे ।
 पुत्र बिना नहि संपके जी, दम बोले राजुल माडिय रे ।।१॥
 घन्तर मुझ श्री नवि करियेजी, तुम्ह बिन मुझ नवि कोइम रे ।
 तुम्ह बिन को नर महीतल दोमे, नवि दीखे मुझ जो मन रे ।
 ते नारि किम मानस जी, करि सधला नर एक तालन रे ।
 श्री सम्भवन्दि वादी पंचायण, सुमतिसागर इस बोलन रे ।

गीत

रत्नकीर्ति की प्रशंसा में कवि द्वारा निबद्ध दो गीत उपलब्ध हुए हैं। एक गीत में संवत् १६२० में वैशाख सुदी तृतीया के दिन पट्ट स्थापना का उल्लेख किया है। इसलिये गीत उसके बाद के लिखे हुए मान्य पड़ते हैं। दोनों गीतों में से एक गीत में रत्नकीर्ति के सम्बन्ध में अच्छा प्रकाश डाला गया है इसलिये उसे यहां दिया जा रहा है—

गीत राम-धन्यासी

श्री जिनवर चरण कमल वर मधुकर गुण गण मणि भण्डार जी ।
 भव्य कुमुद वन रंजन दिनकर, करुणा रस जी रे, करुणा रस आगार जी ।
 अभयनन्दि महोदय दिन मणि भविक कमल जी रे, भविक कमल मन रंजे जी ।
 रत्नकीर्ति सुरि वादि गिरोमणि, परवादी मद गजे जी ॥ ॥१॥
 पंच महाव्रत पंच सुमति प्रथा, गुपति गृह गोर सोहे जी ।
 दुख भोक भय रोग निवार, वाणिह त्रिभुवन मोहे जी ॥ ॥२॥
 धनि धनि हुं बड बसे एह, कलि काल गणवर जापा जी ।
 मेहेजलदे देवदास सुनन्दन, रत्नकीर्ति सूरि राया जी ॥ ॥३॥
 वक्षण देश विचार विलक्षण जालणापुर अगिसारां जी ।
 संघपति पाक साह विख्यात संघवरि रुपाई उदार जी ॥ ॥४॥
 ते बहें कूबे कुंघर उपमा संघवी, आसवा प्रति गुणमाल जी ।
 संघवी रामाजी अंगे शुभ लक्षण, वधेरवाल सुनिशान जी ॥ ॥५॥
 संवत् सोलसा विस संवच्छर नेशाख शुद्धि जीज सार जी ।
 अभयनन्दि गोर वादि धान्या रोहिणी नक्षत्र शनिवार जी ॥ ॥६॥
 आगम काव्य पुराण सुनक्षण, तर्क न्यास गुरु जाणे जी ।
 छन्द नाटिक विगल सिद्धान्त, पृथक पृथक वखाणे जी ॥ ॥७॥
 कनक कालि गोभिन तस मात्र, भधुर समान सुवाणि जी ।
 मदन भाग मदन पंचानन, भारती मच्छ सम्मान जी ॥ ॥८॥
 श्री अभयनन्दि सूरि यह धुरंधर सकलसंघ जयकार जी ।
 सुमतिसागर बस पाय प्रणमें निमल संयम धारी जी ॥ ॥९॥

४. नेमिनाथ का द्वादश मासा

इसमें नेमि के विरह में राजुव के बारह महिने कैसे व्यतीत होते हैं इसका वर्णन किया जाता है। इसमें १३ पद्य हैं जिनमें एक-एक महिने के विरह का वर्णन मिलता है। अन्तिम १३वें पद्य में प्रशस्ति दी हुई है जो निम्न प्रकार है—

श्री लक्ष्मीचन्द्र मुनीसर अभिचन्द्र पीठ गु सार ।
तस पाटे चारित्र चतुर जाणु अभिनन्दि गुणधार ।
बहु प्रकारिइ पूजो श्री जिन माणिक देवी सुमंत ।
श्री सुमतिसागर दोठव जिनवर नेमि जय गुणवन्त ॥
रूप सोभागिण वन्दन जइये ॥

५६. वामोदर

वामोदर भट्टारकीय पंडित थे । इन्होंने भट्टारक रत्नकीर्ति से लेकर भट्टारक अभयचन्द्र तक का समय देखा था । इसलिये तीनों ही भट्टारकों के सम्बन्ध में इन्होंने गीत लिखे हैं । इसके अतिरिक्त "संघवी नागजी" गीत भी लिखा है । अभयचन्द्र के प्रति इनकी अधिक भक्ति थी । इनके द्वारा लिखा हुआ एक गीत देखिये—

राग धन्यासी

मादि जिणंद नमी करी प्रणमी सह गोर पाय ।
अभयचन्द्र गुण गायेशु माहरे हैडले हरष न माय ।
सहिली सहे गोर गाइये रे गौर कुमुदचन्द्र ने भाण ।
श्री अभयचन्द्र चतुर-सुजाण..... । २ ।
अभयनन्दी नवी गीतम ए गोर प्रगट्यो शील तरणो सिणगार ।
वादी सिमिरहर दिनकर, सरस्वती गच्छ साधार । ३ ।
हूँबड वंश भृंगार निरोमणि श्रीपाल साधन मात ।
बारडोली नयरि उछव कीधो महोछव अन्न अवार ।
संघवी नागजी प्रति आणंधा, हेमजी हरष अपार । ४ ।
संघवी कुंअरजी कुल मण्डन भेषजी महिमावंत ।
रूपजी मालजी मनोहार, सह सज्जन मन मोहंत ५ ।
संघवी भीमजी भावस्यु सुत जीवा मने उल्हास ।
संघवी जीवराज उलट धणो, पहोती छे मन सणी दास । ६ ।
संवत सोल पच्यासीये फागुण सुदि एकादशी सोमवार ।
नेमिचन्द्र मुर मंत्रज जाप्यो, वरतयो जयकार । ७ ।
उत्तर वक्षण पूरव पश्चिम माने सहे गोर घाण ।
तिलक करे श्री अभयचन्द्र गोर, वचन कर्या प्रमाण । ८ ।

रत्नकीर्ति पाटे कुमुदचन्द्र गोर, बहुजन दे आशीष ।
 तस पाटि श्री अभयचन्द्र गोर प्रतपो कोटि बरीष । ९ ।
 संघ सहूर्ने ए मति बाहलो, धर्मसागरस्युं नेह ।
 कहे दामोदर सेवो सज्जन, बांछित कण छं मेह । १० ।

प्रस्तुत गीत को पण्डित श्रीपाल के पुत्र अखई के पठनार्थ लिखा गया था
 ऐसा भी उल्लेख मिला है ।

५७. कल्याणसागर

कल्याणसागर भट्टारकीय पंडित थे तथा भट्टारक रत्नकीर्ति के संघ में
 रहते थे । इनके अब तक चार गीत मिले हैं जिनके नाम हैं क्षेत्रपाल गीत, नेमिजिन
 गीत, गीत एवं पद ।

५८. आणंदसागर

वे भट्टारक शुभचन्द्र के संघ में रहते थे । इनके द्वारा लिखे हुए तीन गीत
 मिले हैं और वे सभी शुभचन्द्र की प्रशंसा में लिखे गये हैं ।

५९. विद्यासागर

विद्यासागर ने अपनी चन्द्रप्रभनी विनती में अपना परिचय देते हुए लिखा है
 कि वे भट्टारक शुभचन्द्र के शिष्य थे । वे बलात्कारगण एवं सरस्वती गच्छ के श्राप
 थे । चन्द्रप्रभ विनती को इन्होंने संवत् १७२४ में समाप्त किया था । इनकी अब तक
 निम्न रचनाएँ उपलब्ध हो चुकी हैं—

१. सोलह स्वप्न
२. जिन जन्म महोत्सव
३. सप्तव्यसन सर्वध्या
४. दशैताष्टांग
५. विद्यापहारस्तोत्र भाषा
६. भूपालस्तोत्र भाषा
७. रविग्रत कथा
८. पद्मावतीनी विनती
९. चन्द्रप्रभनी विनती

सोलह स्वप्न

सोलह स्वप्न सप्त कृति है जिसमें तीर्थंकर की माता को आदे वाले सोलह स्वप्नों के बारे में वर्णन दिया हुआ है। जिन अन्त महोरसव १२ पद्यों की कृति है। पद्मावतीनी विनती में पद्मावतीदेवी का स्तवन है जो १० छप्पय छन्दों में पूर्ण होती है। इसी तरह चन्द्रप्रभविनती १८ पद्यों की रचना है। कवि ने इसके अन्त में अपने परिचय निम्न प्रकार दिया है—

मूलसंघ नभचन्द्र सम अभयचन्द्र, तस पाटे भूषण हवा सौम्यचन्द्र ।
तेह तेह पि वाणि बदे उदार, प्रभू विद्यासागर तराणे भायो पार ।
शुभ संवत् सत्तर चौबीस समे, नभ भास बदि सप्तमी भौम दिने ।
कर जोखी ने विनती एह कहे, कहू जीवन धन सुख तेह लेहे ॥८॥

कवि की रचित कथा अच्छी कृति है जो ३६ पद्यों में पूर्ण होती है। भाषा गुजराती प्रभावित है। काव्य रचना का एकमात्र उद्देश्य कथा कहना है। एक पद्य देखिये—

पुत्र कहे माता सुणो वत ए नहि सार ।
खरच नहि जिही धन तगु ते जाणो भासार ।
एहवा वचने बहु कहि वत निद्या किधि ।
जाणे पाप जंसांजलि षट पुत्रे पिधि

६०. ब्रह्मधर्म रचि

भट्टारक लक्ष्मीचन्द्र की परम्परा में दो अभयचन्द्र भट्टारक हुए। एक अभयचन्द्र [सं १४४८] अभयनन्दि के गुरु थे तथा दूसरे अभयचन्द्र भट्टारक कुमुदचन्द्र के शिष्य थे। दूसरे अभयचन्द्र का पूर्व पृष्ठों में परिचय दिया जा चुका है किन्तु ब्रह्म धर्मरचि प्रथम अभयचन्द्र के शिष्य थे। जिनका समय १६वीं शताब्दि का दूसरा चरण था। इनकी अब तक ९ कृतियाँ उपलब्ध हो चुकी हैं। जिनमें सुकुमालस्वामिनी रास^१ सबसे बड़ी रचना है। इसमें विभिन्न छन्दों में सुकुमाल स्वामी का चरित्र वर्णित है। यह एक प्रबन्ध काव्य है। यद्यपि काव्य सर्गों में विभक्त नहीं है लेकिन विभिन्न भास छन्दों में विभक्त होने के कारण सर्गों में विभक्त नहीं होना खटकता नहीं है। रास की भाषा एवं वर्णन शैली अच्छी है। भाषा की दृष्टि से रचना गुजराती प्रभावित राजस्थानी भाषा में मिलता है।

१. रास की एक प्रति महाश्वीर ग्रन्थ अकावनी के संग्रह में है।

ते देखि भयभीत हवी, नागश्री कहे तात ।
 कवण पातिग एणे कीया, परिपरि पामंइ छे धात । १ ।
 तब ब्राह्मण कहे सुन्दरी सुणो तहूँ मो एणी बात ।
 जिम आनंद बहु उपजे जग मांहे छे विख्यात । २ ।

रास की रचना घोघानगर के चन्द्रप्रभा चैत्यालय में प्रारम्भ की गयी थी और उसी नगर के आदिनाथ चैत्यालय में पूर्ण हुई थी । कवि ने अपना परिचय निम्न प्रकार दिया है—

श्रीमूलसंघ महिमा निलो हो, सरस्वती गच्छ सणगार ।
 बलात्कार गण निर्मलो हो, श्री पद्मनन्दि भवतार रे जी ॥ २३ ॥
 तेह पाटि गुरु गुणनिलो हो, श्री देवेन्द्रकीर्ति दातार ।
 श्री विद्यानन्दि विद्यानिलो हो, तस पट्टोद्धर सार रे जी ॥ २४ ॥
 श्री मल्लभूषण महिमानिलो हो, तेह कुल कमल विकास ।
 भास्कर सम पट तेह तणो हो, श्री लक्ष्मीचन्द्रवास रे जी ॥ २५ ॥
 तस गच्छपति जगि जाणियो हो, गीतस सम अवतार ।
 श्री अभयचन्द्र वखाणीये हो, जान तणे भंडार रे जीवडा ॥ २६ ॥
 तास शिष्य भणि रुबडो हो, रास कियो मे सार ।
 सुकुमाल नो भावइ जट्ठो हो, सुणता पुण्य अपार रे जी ॥ २७ ॥
 क्याति पूजानि नवि कीय हो, नवि कीयु कविताभिमान ।
 कर्मक्षय कारणइ कीयु हो, पामवा बलि रुंडू जान रे जी ॥ २८ ॥
 स्वर पदाक्षर व्यंजन हीनो हो, सह कीयु होयि परमादि ।
 साधु सम्यो सोधि लैना हो, समितवि करजो प्रादि रे जी ॥ २९ ॥
 श्री घोघानगर सोहामणू हो, श्री संघव से दातार ।
 चैत्यलां दीइ भामणां हो, महोत्सव दिन दिन सार रे जी ॥ ३० ॥

कवि की ग्रन्थ कृतियों के नाम निम्न प्रकार है—

१. पीहरसासखा गीत
२. वणियडा गीत
३. मीणारे गीत
४. अरहंत गीत
५. जिनवर वीनती
६. आदिजिन विनती
७. पद एवं गीत

इस प्रकार कवि की सभी लघु रचनायें हैं तथा सामान्य शैली में निबद्ध है। पीहर सासरा गीत रूपात्मक गीत है। जो बहुत सुन्दर है तथा मानव स्वभाव को प्रकट करने वाला है इसलिये पूरा गीत पाठकों के रसास्वादन के लिये यहाँ दिया जा रहा है—

सन्मति शिव पति प्रणामीनि, भजी बली भगवती भाव रे ।
 सासर पीहर भले गायस्युं, जेह गातां पातिग जाय रे ।
 संसार सासर माँहि दोहिलू, सोहिलू नहीय लगार रे ।
 शिवपुर पीहर सास्वतु, जिहा नहीं सुखनो पार रे ॥ १ ॥
 मोह सासरो मदि मलय तो, माया रे सासुडी कलंछ रे ।
 कुमत नणंदडी सखि नित दये, नमी तेहना मागी पट पीठरे ॥ २ ॥
 संयम पिता हमारे धति भलो, दया रे माता मजसार रे ।
 धर्म बांधव दश शोभता, सुमति बहेन भवतार रे ॥ ३ ॥
 मदन महाभट नाहलो, रति बधूस्यूं कीडे अज्ञान रे ।
 क्रोध जेठ करे पेखणा, राग द्वेष देवर मोडि मान रे ॥ ४ ॥
 सयल कुटंब तप अत तणो, सह्यकारी सबे परिवार रे ।
 शील आभरण अंगि उपता, पुण्य फले सुख शौंडार रे ॥ ५ ॥
 असंयम कुटंब अलसा मणू, धामणु दीरो बहु रौद्र रे ।
 पाप पदारथ सासरुं नहीं, एक घडी सुख निद्र रे ॥ ६ ॥
 सखी एहवा पीहर अलजई, तहां रे जावानूँ बहु कोड रे ।
 देवना दाढा किमनी गमू, कहींह होसे तेहनो मोड रे ॥ ७ ॥
 संसार सारहे मून्हे नबि गमे, भमि मत पीहर मजसारि रे ।
 विविध वेष घरी दुख सहिया, भमि भमि अनंत संसार रे ॥ ८ ॥
 देवगुरु अमयचन्द्र सेवता, संसार साहारा होसे अंत रे ।
 सुगति पीहर प्राणि पामसद, कहे ब्रह्मरुचि संत रे ॥ ९ ॥

ब्रह्मरुचि ने अमयचन्द्र के गुरु कुमुदचन्द्र एवं दादागुरु जानभूषण का उल्लेख भी नहीं किया है इसलिये ऐसा लगता है कि इनका उदय भट्टारक कुमुदचन्द्र के पश्चात् हुआ होगा ।

६१. भाचार्य चन्द्रकीर्ति

भ. रत्नकीर्ति ने साहित्य-निर्माण का जो वातावरण बनाया था तथा अपने शिष्य-प्रशिष्यों का इस ओर कार्य करने के लिए प्रोत्साहित किया था, इसी के फल-स्वरूप ब्रह्म-जयसागर, कुमुदचन्द्र, चन्द्रकीर्ति, संयमसागर, गणेश और धर्म-सागर जैसे प्रसिद्ध सन्त, साहित्य-रचना की ओर प्रवृत्त हुए। "भा. चन्द्रकीर्ति" भ. रत्नकीर्ति के प्रिय शिष्यों में से थे। ये मेधावी एवं योग्यतम शिष्य थे तथा अपने गुरु के प्रत्येक कार्यों में सहयोग देते थे।

"चन्द्रकीर्ति" के गुजरात एवं राजस्थान प्रदेश प्रमुख क्षेत्र थे। कभी-कभी वे अपने गुरु के साथ और कभी स्वतन्त्र रूप से इन प्रदेशों में बिहार करते थे। जैसे बारडोली, भडौच, डूंगरपुर, सागवाड़ा आदि नगर इनके साहित्य निर्माण के स्थान थे। अब तक इनकी निम्न कृतियाँ उपलब्ध हुई हैं—

१. सोलहकारण रास
२. लक्ष्मणाराध्यान,
३. चारित्र-चूनड़ी,
४. चौरासी लाख जीवजोनि वीनती।

उक्त रचनाओं के अतिरिक्त इनके कुछ हिन्दी पद भी उपलब्ध हुए हैं।

१. सोलहकारण रास

यह कवि की लघु कृति है। इसमें सोलहकारण रास का महात्म्य बतलाया है। ४६ पद्यों वाले इस रास में राग-गोडी देशी, दूहा, राग-देशास्य त्रोटक, चाल, राग-बन्यासी आदि विभिन्न छन्दों का प्रयोग हुआ है। कवि ने रचनाकाल का उल्लेख तो नहीं किया है, किन्तु रचना-स्थान "भडौच" का अवश्य निदिष्ट किया है। "भडौच" नगर में जो शांतिनाथ का मन्दिर था वही इस रचना का समाप्ति-स्थान था। रास के अन्त में कवि ने अपना एवं अपने पूर्व गुरुओं का स्मरण किया है। अन्तिम दो पद निम्न प्रकार हैं—

श्री भय्यच नगरे सोहामणू श्री शांतिनाथ जिनराय रे ।
 प्रासादे रचना रचि, श्री 'चन्द्रकीरति' गुण गायरे ॥ ४४ ॥
 ए वल फल गिरना जो जो, श्री जीवन्धर जिनराय जी ।
 भविष्य तिहां जइ भावज्यो, पातिग दुरे पालाय रे ॥ ४५ ॥

2. जयकुमार आख्यान

यह कवि का सबसे बड़ा काव्य है जो ४ सर्गों में विभक्त है। जयकुमार प्रथम तीर्थंकर भ. ऋषभदेव के पुत्र सम्राट भरत के सेनाध्यक्ष थे। इन्हीं जय कुमार का इसमें पूरा चरित्र वर्णित है। आख्यान बीर-रस प्रधान है। इसकी रचना बारडोली नगर के चंद्रप्रभा चैत्यालय में संवत् १६१५ की चैत्र शुक्ला दशमी के दिन समाप्त हुई थी।

“जयकुमार” को सम्राट भरत सेनाध्यक्ष पद पर नियुक्त करके शांति पूर्वक जीवन बिताने लगे। जयकुमार ने अपने युद्ध-कौशल से सारे साम्राज्य पर अखण्ड शासन स्थापित किया। वे मौन्दर्य के खजाने थे। एक बार वाराणसी के राजा “अकम्पन” ने अपनी पुत्री “सुलोचना” के विवाह के लिए स्वयम्बर का आयोजन किया। स्वयम्बर में जयकुमार भी सम्मिलित हुए। इसी स्वयम्बर में “सम्राट भरत” के एक राजकुमार “अर्ककीर्ति” भी गये थे, लेकिन जब सुलोचना ने जयकुमार के गले में माला पहना दी, तो वे अत्यन्त क्रोधित हुए। अर्ककीर्ति एवं जयकुमार में युद्ध हुआ और अन्त में जयकुमार की विजय के पश्चात् जयकुमार का सुलोचना के साथ विवाह हो गया।

इस “आख्यान” के प्रथम अधिकांश में जयकुमार-सुलोचना-विवाह का वर्णन है। दूसरे और तीसरे अधिकांश में जयकुमार के पूर्व भवों का वर्णन और अंतुर्थ एवं अन्तिम अधिकांश में जयकुमार के निर्वाण-प्राप्ति का वर्णन किया गया है।

“आख्यान” में बीर-रस, शृंगार-रस एवं शांति रस का प्राधान्य है। इसकी भाषा राजस्थानी डिंगल है। यद्यपि रचना-स्थान बारडोली नगर है, लेकिन गुजराती शब्दों का बहुत ही कम प्रयोग हुआ है। इससे कवि का राजस्थानी प्रेम झलकता है।

“सुलोचना” स्वयम्बर में वरमाला हाथ में लेकर जब आती है, तो उस समय उसकी कितनी सुन्दरता थी, इसका कवि के शब्दों में ही अवलोकन कीजिए—

जाणीए सोल कला शशि, मुखचन्द्र सोभासी कहूँ ।
अधर बिद्रुम राजताए, दन्त मुक्ताफल लहूँ ॥
कमल पत्र विशाल नेत्रा, नाशिका सुक चंच ।
अष्टमी चन्द्रज भाल सोहे, बेणी नाग प्रपंच ॥
सुन्दरी देखी तेह राजा, चितवे मन मांहि ।
ए सुन्दरी गूर सुंदरी, किन्दरी किम केहू वाय ॥

सुलोचना एक एक राजकुमार के पास जाती और फिर आगे चल देती । उस समय वहाँ उपस्थित राजकुमारों के हृदय में क्या-क्या कल्पनाएँ उठ रही थी— इसको भी देखिए—

एक हंसता एक खीजे, एक रंग करे नवा ।
 एक जाणे मुस वरसे, प्रेम घरता खु जवा ॥
 एक कहे जो नहीं वरें, तो अम्यो तपवन जायसुं ।
 एक कहतो पुण्य पाये, एह बलभ वासुं ॥
 एक कहे जो आबयातो, बिमासण सह परहरो ।
 पुन्य फल ने बातणोए, ठाम सुभ हैपडे घरै ॥

लेकिन जब सुलोचना ने अकंकीति के गले में धरमारत नहीं डाली, तो जयकुमार अकंकीति में युद्ध भाडक उठा । इसी प्रसंग में वर्णित युद्ध का दृश्य भी देखिए—

मलां कटक विकट कबहुं सुभट सूं,
 धरि धीर हमीर हठ विकट सूं ।
 करी कोप कूटे बूटे सरबहुं,
 वक्र तो समर खडग सूं के सह ॥
 मयो गम गोला गणनांगणे,
 अंगो अंग आवे वीर इम भणें ।
 मोहो मांहि सूं के मोटा महीपती,
 चोट खोट न आवे डझमरती ॥
 बयो बवा करी बेहदूँ डसूँ,
 कोपे करलां कूटे अखड सूं ।
 धरी धरी धर डोली नाखता,
 कोपि कडकडी खाजम राखता ॥
 हस्ती हस्ती संघाते आथंडे,
 रयो रथ सूभट सह इम भडे ।
 हय हथार व जव छजयो,
 नीसाण नादें जग गजजयो ॥

कवि ने अन्त में जो अपना वर्णन किया है, वह निम्न प्रकार है—

श्री मूलसंघ सरस्वती गच्छे रे, भुनीवर श्री पदमनन्द रे ।
 देवेन्द्रकीरति विद्यानंदी जयो रे, मल्लीभूषण पुन्य कंद रे ॥
 श्री लक्ष्मीचन्द्र पाटे थापयारे, अभय सुचन्द्र मुनीन्द्र रे ।
 तस कुल कमलें रवि समोर, अभयनन्दी नमै नरचन्द्र रे ॥
 तेह तणे पाटें सोहावयो रे, श्री रत्नकीरति सुगुण भंडार रे ।
 ताम शीव सुरी गुणें मंडयो रे, चन्द्रकीरति कहे सार रे ।
 एक मनां एह भणें सांगले रे, लखे भलु एह आख्यान रे ॥
 मन रे वांछति फल ते लहे रे, नव भवें लहे बहु मान रे ।
 संवत् सोल पंचावनें रे, उजाली दशमी चैत्र मास रे ॥
 बारडोली नयरे रचना रची रे, चन्द्रप्रभ सुभ आवास रे ।
 नित्य नित्य केवली जे जपे रे, जय-जयनाम प्रसीधरे ॥
 गणधर आदिनाथ केर डोरे, एकत्तरमो बहु रिष रे ॥
 विस्तार आदि पुराण पांडवे भणोरे, एह संक्षेपे कही सार रे ।
 भणे सुणे भवि ते सुख लहे रे, चन्द्रकीरति कहे सार रे ।

समय :

कवि ने इसे संवत् १६५५ में समाप्त किया था । इसे यदि अन्तिम रचना भी मानी जावे तो उसका समय संवत् १६६० तक का निश्चित होता है । कवि ने अपने गुरु के रूप में "रत्नकीर्ति" एवं "कुमुदचन्द्र" दोनों का ही नामोल्लेख किया है, संवत् १६६० तक तो रत्नकीर्ति के पश्चात् कुमुदचन्द्र भी भट्टारक हो गए थे, इसलिये यह भी निश्चित सा है कि कवि ने रत्नकीर्ति से ही दीक्षा ली थी और उनकी मृत्यु के पश्चात् वे सांघ से प्रायः भलग ही रहने लगे थे । ऐसी अवस्था में कवि का समय संवत् १६०० से १६६० तक माना जा सकता है ।

चारित्र्य चूनड़ी

कवि की तीसरी रचना चारित्र्य चूनड़ी है जिसके रूप में भट्टारक रत्नकीर्ति के चारित्र्य की प्रशंसा की है । चूनड़ी में विभिन्न रूपकों का प्रयोग हुआ है । चूनड़ी निम्न प्रकार है—

श्री जिनपति पद कंज नभी रे, भजी भारती अवतार रे ।

चारित्र्य पछेडी भले गायेस्युं रे, श्री गुरु सुख दातार रे ।

चतुर चारित्र पछेडली रे, सोहे श्री गुरु अंगि रे ।
 सूरी श्री रत्नकीरती सोहे रे, मोहे महिमंडल रंग रे ।
 श्री जितागम सूत्र भीषनी रे, १५५ अक्षगुण बाड़ी एह रे ।
 संयम सरोवरे धोई जेरे, पुरातन पले पाप जे हरे ॥
 श्री मुखवाणी हरखा करी रे, तेह तणो दीधो पास रे ।
 प्राणम फटकी रंग दोढ करी रे, अध्यात्म अनोपम तीसरे ॥
 ध्यान कछाई रंग उकालीजे रे, तप तेल दीधे ए भूर रे ।
 समकित चोल रंग गह गयो रे, पुण्य पल्लव सुख सुख पूर रे ।
 त्रिमल कमल पंच द्रत तणां रे, पान पंच सुमति नां फुलां रे ।
 त्रय्य गुपति रेखा सोभती रे, धरती विविध परिनेह रे ।
 सील समीह फरती कुलडी रे, मूलगुण मणि गुण छींट रे ।
 उत्तर चोरासी लख्य बेलडी रे, जोये रुडी ग्यान नी प्रीत रे ।
 सुन्दर चारित्र पछेलडी रे, सोहे रत्नकीरति मुनींद रे ।
 चन्द्रकीरति सूरी वर कहे रे, चारित्र पछेडी सुख वृंद रे ॥

इति चारित्र चुनडी गीत समाप्त

कवि ने भट्टारक कुमुदचन्द्र पर भी पद लिखे हैं जिसमें कुमुदचन्द्र के गुणों का बखान किया गया है । एक पद देखिए—

राग धन्धासी

वंदो कुमुदचन्द्र सूरी भविष्य

सरस बखान मनोहरवाणी, सेवे सदा पद गुणियण ॥ १ ॥
 पंच महाव्रत पंच सुमति, त्रय्य गुपति वर मंडल ।
 पंचाचार प्रवीण परम गुरु, मथित मदन मद संजन ॥ २ ॥
 शास्त्र विचार विराजित नायक, विकट वादी मद अंजन ।
 चन्द्रकीर्ति कहे शोभित सद्गुरु, सकल सभा मन रंजन ॥ ३ ॥

चन्द्रकीर्ति द्वारा निबद्ध चौरासी लाख जीवजोनी बिनती भी मिलती है ।

६२. संयमसागर

ये भट्टारक कुमुदचन्द्र के शिष्य थे । ये ब्रह्मचारी थे । संघ में रह कर अपने गुरु की साहित्य निर्माण में योग देना तथा बिहार के समय भट्टारक कुमुदचन्द्र

के गुणानुवाद करना इनका प्रमुख कार्य था। वे स्वयं भी कवि थे। छोटे-छोटे गीत लिखा करते थे। अब तक इनके निम्न गीत मिल चुके हैं।

१. कुमुदचन्द्र गीत
२. पार्वनाथ गीत
३. शीतलनाथ गीत
४. नेमिगीत
५. गुर्वावली गीत
६. शांतिनाथनी विनती
७. बलिभद्रनी विनती
८. लघु गीत

उक्त सभी गीत छोटे छोटे हैं। लेकिन इतिहास लेखन में सभी गीत उपयोगी हैं। यहाँ एक गीत जिसमें कुमुदचन्द्र की विशेषताओं का अर्थों में किया गया है दिया जा रहा है—

आवो साहेलडी रे सहू मिलि संगे ।
 बांदो गुरु कुमुदचन्द्र ने मति रंगि ॥
 छन्द आगम अलंकारनो जाण, बार चितामणि प्रमुख प्रमाण ।
 तेरे प्रकार ए चारित्र सोहे, दीठडे भविष्य जन मन मोहे ।
 साहू सदाफल जेहनो तात, धन जनम्यो पदसां बाई मात ।
 सरस्वती गरुछ तणो सिंगार, बेगस्यु जीतिमो दुधर भार ।
 महीयले मोढवंशी सु बिख्यात, हाथ जोड़ाविया बादी संघात ।
 जे सरनारी ए गोर गुण गावे, संयमसागर कहे ते सुखी पाय ॥

६३. धर्मचन्द्र

ये भट्टारक रत्नकीर्ति के संघ में रहते थे। छोटे छोटे गीत लिखने में ये भी रुचि लेते थे। आपका एक गीत मिला है जिसमें भट्टारक परम्परा, प्रतिष्ठाकारकों की प्रतिष्ठा आदि के सम्बन्ध में लिखा गया है। रचना सामान्य है।

६४. राघव

ये भी भट्टारक रत्नकीर्ति के संघ में रहते थे। विद्वान् थे। कभी-कभी

छाटे छोटे गीत लिख दिया करते थे। इन्होंने अपने एक गीत में खान मलिक द्वारा भट्टारक रत्नकीर्ति का सम्मन किया गया था, ऐसा उल्लेख किया गया है।

श्री अभयनन्द पाटि पटोधर, रत्नकीरति गोर बंदो जी।
 बंदे सुख लक्ष्मी बहु नामो, तो जन्मना पाप निकन्दो जी।
 बेठा मिह्रासन सभा मनरंजन,.....हा अधिकु.....सजे जी।
 आंगम छन्द प्रभाण ए व्याकरण भलूहरी वसतिहो बाजे जी।

लक्षणा वतीस सकल कला अंगि बहुस्तति, खान मलिक दिये मान जी।

धन्य ए घोषा नयर बखाणू, हूँ बड वंश सुजाण जी।
 श्री रत्नकीरति चरण नमीने, भविष्य करे बखाण जी।
 धन्य सहेजलदे मात बखाणु, देवदास सुत रतन जी।
 कर जोड़ी ने राधव वीनवे, जीव दया शुभ मन जी।
 गोरने जीव दया शुभ मन जी ॥

६५. मेघसागर

मेघसागर ब्रह्मचारी थे तथा भट्टारक कुमुदचन्द्र एवं अभयचन्द्र के संध में रहते थे। इन्हें भी छोटे छोटे गीत लिखने में आनन्द आता था। संवत् १६८५ में जब अभयचन्द्र को भट्टारक पद पर अभिषिक्त किया गया था तब ये वहीं थे। उन्होंने उसका एक गीत में वर्णन भी किया है। पूरा गीत यहां दिया जा रहा है—

गुरुगीत—राग मल्हार

सकल जिनेश्वर प्रणमीने, सारदा नखूँ बली पाय।
 कुमुदचन्द्र पाटि गाईए, अभयचन्द्र गुरु राय रे।
 आबो सुन्दरी तम्हे सहु मिली, जिन मन्दिर भञ्जार रे ॥आबो॥१॥
 मूलसंधे गुरु जाणिये, सरस्वती गछे जेह रे।
 तेह तणा गुण वर्णवूँ, धरी अधिक सनेह रे ॥आबो॥२॥
 सूरि कुमुदचन्द्र पाटि अभिनवो गीतम अवतार रे।
 चरित्र पाले निर्मला, धरे पंच आचार रे ॥आबो॥३॥
 पंच महाव्रत उजला, पंच समिति सुखवार रे।
 धन्य गुणति ने बल कर, चरित्र तेर प्रकार रे ॥आबो॥४॥

बारडोली नयर सोहामगुं, चंद्रप्रभ जिनधाम रे ।
 पाटि महोछव तिहा हवो, सरसां संधना काम रे ॥आवो॥५॥
 संवत सोल पच्चासीई, फायुण सुदि एकादशी सोभवार रे ।
 कुमुदचन्द्र पाटि थापिया, अभयचन्द्र गुरु सार रे ॥आवो॥६॥
 तग तेजो दिनकर समो, मिथ्यामत कीधो दूरि रे ।
 भय्य जीवने प्रतिबोधवा, हीठे आणंद पूर रे ॥आवो॥७॥
 श्री अभयचन्द्र गुण गाइये, घरी हरष अपार रे ।
 मेघसागर ब्रह्म इम कहै, सकल संघ जयकार रे ॥आवो॥८॥

६६. धर्मसागर

ये भट्टारक अभयचन्द्र द्वितीय के संघ में ब्रह्मचारी थे तथा भट्टारक के प्रिय शिष्यों में से थे । वे अपने गुरु के साथ रहते और बिहार के अक्सर पर उनका विभिन्न गीतों के द्वारा प्रशंसा एवं स्तवन किया करते । नेमिनाथ एवं राजुल भी इनके प्रिय थे इसलिये उनके सम्बन्ध में भी इन्होंने कितने ही गीत लिखे हैं । अब तक इनके निम्न गीत प्राप्त हो चुके हैं ।

१. नेमि गीत
२. नेमीश्वर गीत
३. लाल पछेडी गीत
४. भक्कलडा गीत
५. गुरु गीत
६. विभिन्न गीत

धर्मसागर ने नेमि राजुल के सम्बन्ध में अपने पूर्व गुरुओं के मार्ग का अनुसरण किया और राजुल के सौन्दर्य एवं उसकी विरह वेदना का व्यक्त करने में उनसे भी बाजी मरने का प्रयास किया । उनके द्वारा निबद्ध एक नेमीश्वर गीत देखिये—

सखिय सहू मिलि बीनवे, वर नेमि कुमार ।
 तोरण थी पाठा बल्या, करीस्थो रे विचार ॥ १ ॥
 राजीमती प्रति सुन्दरी, गुणनो नहीं पार ।
 इन्द्राणी नहीं अनुसरे, जेह नूं रूप लगार ॥ २ ॥

बेसी बिलास सोहामणी, जीत्यो प्रथम फण्ड ।
 भाल कला अति सपट्टी, अरघो जस्यो चंद ॥ ३ ॥
 भाँखडली कज पाखडी, काली अणियाणी ।
 कोन तणा शर हारिया, जेह में सु नोहावो ॥ ४ ॥
 घानन हसित कमल जस्युं, नाक सरस उत्तंग ।
 घणूअ करीस्युं बख्ताणीये, सूका चंच सुचंग ॥ ५ ॥
 अरुण अधर सम उपता जेहवी पर वाली ।
 बचन मधुर जांणी करी, कोमल थई काली ॥ ६ ॥
 कंठे कंबु हराबीयो हैपई हरे चित ।
 बाहु लता अति सहकती, कर मन मोहत ॥ ७ ॥
 भधर अनोपम पातलू, जेहवू पोमण पोत ।
 हरी लंकी करि आसिये, अर रंभ समान ॥ ८ ॥
 पान्हीस उखी अति रातडी प्रांगलडी तेहवी ।
 सर्व सुलक्षण सुन्दरी, नहीं मलसे एहवी ॥ ९ ॥
 रहो लाल पाछा चलो, कछू बचन ते मानो ।
 हास बिलास करो तम्हे, अति घूण मा ताणि ॥ १० ॥
 एह बचन मान्यु नहीं, लीधो संयम भार ।
 तप करीस्यां सुख पामिया, सज्जन सुखकार ॥ ११ ॥
 कुमुदचन्द्र पद चांदलो, अभयचन्द्र उदार ।
 धर्मसागर कहे नेम जी, सहने जय जय कार ॥ १२ ॥

इस प्रकार कवि ने राजसूय की विरह गत भावनाओं को अपने गीतों में संजो कर हिन्दी जगत में एक नयी सामग्री प्रस्तुत की है ।

धर्म सागर ने भट्टारक अभयचन्द्र का भी खूब गुणानुवाद किया है । एक गीत में तो भट्टारक जी लाल पिछेवडी धारण करने पर कितने सुन्दर लगते थे इसका भी वर्णन किया गया है और लिखा है कि “लाल पिछेवडी अभयचन्द्र सोहे, निरखतां भविकयनां मन मोहे” । भट्टारक अभयचन्द्र की प्रशंसा में लिखा है कि इनका दश देहली दरबार तक व्याप्त था तथा वहाँ इनकी प्रशंसा होती थी ।

दिल्ली रे सिंहासन केरा राजियो रे, राजियो यश त्रिभुवन माहि रे ।
बादि तिमिरहर दिनकर रे, सुरतर सरस्वती गच्छे रे ॥

अभयचन्द्र की प्रशंसा में लिखा एक और गीत देखिये जिसमें कवि ने अभयचन्द्र की विद्वता एवं ज्ञान की खूब कर प्रशंसा की है—

आधो रे भामिनी गजवर गामिनी, अंदला अभयचन्द्र मिली मृगनयनी ।
मृगताफलनी घाल भरीजे, गछनाथक अभयचन्द्र बघाबीजे ॥ २ ॥
कुंकुम चंदन भरीय कचोली, प्रेमे पद पूजो मोरना सहू भली ॥ ३ ॥
हूँबड अंशे श्रीपाल साह तात, जनम्यो रुडी रतन कोडमदे मात ॥ ४ ॥
लघुयणे लीधो महाव्रत भार, मन यश करी जीत्यो दुद्धर मार ॥ ५ ॥
तर्क नाटक आगम अलंकार, अनेक शास्त्र भण्णा मनोहार ॥ ६ ॥
भट्टारक पद एहमे स्थाजे, जेहनो यश जगमो वास गाजे ॥ ७ ॥
श्री मूलसंधे उदयो महिमा निधान, दासक जन करे जेह गुणगान ॥ ८ ॥
कुमुदचन्द्र पाटि जयकारी, धर्मसागर कहे गाउ नर नारी ॥ ९ ॥

६७. गोपालदास

गोपालदास की दो छोटी रचनायें यादुरासो तथा प्रमादीगीत जयपुर के ठोलियों के मंदिर के शास्त्र भण्डार के १७वें गुटके में संग्रहीत हैं। गुटके के लेखनकाल के आधार पर कवि १७वीं शताब्दी या इससे भी पूर्व के विद्वान रहते थे। यादुरासो में भगवान नेमिनाथ के वन चले जाने के पश्चात् राजुल की विरहावस्था का वर्णन है जो उन्हें वापिस लाने के सपने में है। इसमें २४ पद्य हैं। प्रमादीगीत एक उपदेशात्मकगीत है जिसमें आलस्य त्याग कर आत्महित करने के लिये कहा गया है। इनके अतिरिक्त इनके कुछ गीत भी मिलते हैं।

६८. पांडे हेमराज

प्राचीन हिन्दी गद्य पद्य लेखकों में हेमराज का नाम उल्लेखनीय है। इनका समय सत्रहवीं शताब्दी था तथा ये पांडे रूपचन्द के शिष्य थे। इन्होंने प्राकृत एवं संस्कृत भाषा के ग्रंथों का हिन्दी गद्य में अनुवाद करके हिन्दी के प्रचार में महत्वपूर्ण योग दिया था। इनकी अब तक १२ रचनायें प्राप्त हो चुकी हैं जिनमें नयचक्र

भाषा, प्रवचनसार भाषा, कर्मकाण्ड भाषा, पञ्चास्तिकाय भाषा, परमात्मप्रकाश भाषा आदि प्रमुख हैं। प्रवचन सार भी इन्होंने १७०५ में तथा पञ्चास्तिकाय भाषा को १७२४ में समाप्त किया था। अभी तीन रचनायें और मिली हैं जिनके नाम दोहा-शतक, जखड़ी तथा गीत हैं। रचनाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि कवि का हिन्दी गद्य एवं पद्य दोनों में ही एक सा ही परिवार था। भाव एवं भाषा की दृष्टि से इनकी सभी रचनायें अच्छी हैं। दोहा शतक, जखड़ी एवं हिन्दी पद्य अभी तक अप्रकाशित हैं।

नेमिनाथ फाग

श्री जिन युग धन जाणिय, वखारणीये बारिण विख्यात ।
 सारदा वरदा स्वामिनी, भामिनी भारती भात ॥ १ ॥
 विमल विद्या गुरु पूजिई, बूझिये ज्ञान अनन्त ।
 मुगति तणां फल पाईई, गाइए राजुल कंत ॥ २ ॥
 यादव कुल तरणो मण्डप, खण्डन पापनो अंश ।
 अवतरणो अवनि अनोपम उपमना अधिकवर्तश ॥ ३ ॥
 सुन्दर शिवादेवी नन्दन, वन्दन त्रिभुवन तेह ।
 समुद्र विजय धन तात, विख्यात वसुधा एह ॥ ४ ॥
 कुंभर कछ्छावन्त, महन्त कहंव अपार ।
 राज काज मनि आणिय, जाणिय करे मोरारि ॥ ५ ॥
 जोड पारथ एह तरु, अहातरु माने मन्त ।
 पन्नग सेजि पोढिय, कम्बू धनुष धरे धन्त ॥ ६ ॥
 मल्ल युद्ध जो ए करे, बहु परिप्राक्रमी होय ।
 पारखे प्राक्रमे पुरों, सूरों ए समो नही कोय ॥ ७ ॥
 पाणिग्रहण करी पांडु, देखाडु विपरीत ।
 परणो प्रभू कहे प्रेमे, इस मनोहेरा रीत ॥ ८ ॥
 सिषवी सुन्दरी सामले, आमले पाडवा बात ।
 खडी खली भीलवा बालिय, भालिय नेमने हाथि ॥ ९ ॥
 जुगल कमले करी कामिनी, स्वामिनी छांडे देह ।
 पाणिग्रहण पर प्रेम रे, नेम धरो मनि नेह ॥ १० ॥
 बल छल कल करी, मोलव्यो भोले नेमिकुमार ।
 उग्रसेन केरी कुंवरी, राजुल रूप अपार ॥ ११ ॥

दूहा

राजुल का सौन्दर्य

चन्द्र बदनी मृग लोचनी मोचनी खंजन मीन ।
 बासग जीव्यो वेणुइं, श्रेणिय मधुकर दीन ॥ १२ ॥
 युगल गल दीये सशि, उपमा नाशा कीर ।
 अपार विभूष सम उन्नता, बन्तनू निर्मल नीर ॥ १३ ॥

ढाल

चिबुक कमल पर षटपद, आनन्द करे सुषापान ।
 ग्रीवा सुन्दर सोभती, कंजु कपोतने वान ॥ १४ ॥
 कोमल कमल कलश वे उपरि मोती सोहे ।
 जाणै कमल केरी बेलड़ी, बेलड़ी बांहोडी सोहि ॥ १५ ॥
 कनक कजोपम सोभलु, नाभि गम्भीर विसैस ।
 जाणै विधाताइ आगुलौ बालिय रूपनी रेख ॥ १६ ॥
 कटि हरिगति गज जीतियां, पूरिया बनभा वास ।
 जंघाइ जीतिय कदलिय, अंगुलिय पद्म पलास ॥ १७ ॥
 आभरण अंग अनोपम, भूषण शरीर सोहंत ।
 कवि कहेस्युं बखानीये राजुल रूप अनन्त ॥ १८ ॥
 उग्रसेन को कुंभरि सुन्दरी सुलक्षण अंग ।
 साधव बन्धव नेमतो, जीवाह मेलो मनरंग ॥ १९ ॥

दूहा

नेमिनाथ का विवाह

बेहू धरि सुभ पर प्रेमस्यू, अही अण मिलिया अनेक ।
 खरचे वित्त नित चितस्मृं वीहवा बाफ विवेक ॥ २० ॥
 करी सगाई सुर मिलि यदुपति हलधर कहान ।
 इन्द्र नरिन्द्र गयन्द चढी, ते पणि आख्या जान ॥ २१ ॥

ढाल

जान मान माहि मोटा, महीपति मलिया अनन्त ।
 एकेक पाहि अशिकां धरा, ईश्वर उभया कत ॥ २२ ॥
 देई निसाण सजाण चतुर चढियो रथ सोहि ।
 किरिट कुण्डल केरी कानि, शंक्या रवि सशि सोहे ॥ २३ ॥
 आवया मण्डप दूकड़ा कूकड़ा मृग तरा वृन्द ।
 देखी बल्यो तत खेचरे देव दयां तरा कंद ॥ २४ ॥

सांभली सारथि बात विस्मृत भसम्भवं आज ।
तह्ये कोई कारण जाण्यो रे, ए आण्या कोण काजि ॥ २५ ॥

द्वेहा

उपसेन राई आणीआ पंखी पशू अनेक ।
गोरव बेला मारसे, करस्ये तह्य विवेक ॥ २६ ॥
बात धातनी सांभली, अन्तर पडियो आस ।
धिग संसार बीह्या कियो ए पमु नेस्यो पास ॥ २७ ॥

हाल

नेमि वंशस्थ

पास छोडावो एहना देहना कांकरो घात ।
जांखी बात में एह तणी विवाह तणी नहीं बात ॥ २८ ॥
पाछो चालो रथ सारथि, सांसो न करस्यो सोस ।
उपनी तुषा अति जल तणी, न समे दूधे तथावस ॥ २९ ॥
विषय भोगवे अग्यानी, जानो न भोगवे तेह ।
भूता तन्तु बांधे मशिका नवि बांधे करि देह ॥ ३० ॥
इन्द्रिय सुख शुभ तब लगें, मुगति न जाणो खेल ।
दीये स्वाद नहीं जब लगे, तब लगे उत्तम तेल ॥ ३१ ॥
विवाह बात निवार्ह, भाव सदन महंत ।
सुध मने तप साधू, आराधुं सिद्ध महंत ॥ ३२ ॥

द्वेहा

आजिये आबी इम कहो सखीस्यो करे भूंगार ।
तोरण थी पाछो बह्यो, यहुपति नेमिकुमार ॥ ३३ ॥
सांभली अवरो सुन्दरी, मनि धरी एक बात ।
चकित थई तब भति गई, कारण कहो मुक्त घात ॥ ३४ ॥

हाल

राजुल का विलाप :

मात तात सह देखता, राजुल थई दिग मूढ ।
बात वारती सीधणी, कर्मतणी गति गूढ ॥ ३५ ॥
आभरण भूषण छोड़तो मोड़ती कंकण हाथ ।
मन्दर हेलू बहेलिय, ह्वेलिय सहियर साथ ॥ ३६ ॥
राखो रे रथ तम्हे समरथ, हसारण करे बहु लोक ।
लक्षण कोण स सप्तना, माहतना वचन सुफोक ॥ ३७ ॥

कां जाये वन ह्लाहला, कला कठिन कां थाय ।
 सांभली वीनती साहरी, ताहरी कोमल काय ॥ ३८ ॥
 छए रति प्रारति अति घणी, वरसा लेरे विख्यात ।
 नाथ बात नो हे सोहिली, सोहिली शियालानी राति ॥ ३९ ॥
 सीयाले जीत पडे, पडे अति निर्मल हीम ।
 हरी करी चरि भव भूके, बूके तापस नीम ॥ ४० ॥
 माह उमाह अति आवयो, महियल माधव राय ।
 पंच बाण ग्रहण हाथि ले, साधे मदन सहाय ॥ ४१ ॥
 उष्ण कालि खल सरिखो, निरखो हंस कठोर ।
 कोमल लनि लू लागस्ये, बागस्ये बायु निठोर ॥ ४२ ॥

दूहा

अपराध पाषे का परिहरो, दया करो देव दयाल ।
 जलचर जल बिना टलवले, बिलवले राजुल बाल ॥ ४३ ॥
 मैं जाण्युह तुं मुझने, मिलस्ये भंगो भंगि ।
 उसट उपनो अति घणो, रंग मां काकरो भंग ॥ ४४ ॥

काता

राजुल का नेमि से निवेदन :

भंग काकरि प्रिय भोगनो, भोगवो लोग विख्यात ।
 माहरो करग्रह करस्ये, करस्ये को जीवनो घात ॥ ४५ ॥
 प्रारथी ने पाप लागू, मांगो भया करो मुझ ।
 एक रथणी रहो पास रे, दास थारुं खू तुझ ॥ ४६ ॥
 हरिहर ब्रह्मा इन्द्र रे, चन्द्र नरेन्द्र न नारि
 परण्या दानव देवता, सेवता सहू संसारि ॥ ४७ ॥
 सुर नर हरि हर परण्या, पशूनो न करस्यो तेणैमार ।
 राजुल सांभलि वीनती, सोल्यो नेमिकुमार ॥ ४८ ॥
 अकेका भद्र ने सगपण, भल पण हिंसा न होय ।
 सुगति सुधारसढोलिय, पीये हलाहल कोय । ४९ ॥
 किहां थी आव्युं एवढूँ डाहापण देव दयाल ।
 परण्या विण का परहरो बोले रायुल बाल ॥ ५० ॥
 किम रहूँ दुख एकली, किम मानें मुझ मल ।
 रजनीपति दहे रजनीय, वासरपति दहे दध ॥ ५१ ॥

दूहा

स्यामादि शशि काडीयो, वास्यो भतिषय सेस ।
सूर भली मेरु वरांसीयो, वासुदेव बिसेस ॥ ५२ ॥
ते निधि बांही की काडीयो, विरहिणी केरो काल ।
शीतल शशि ते सहूँ कहे, विरहा दधानल भास ॥ ५३ ॥

ढाल

झाल मेहेले परकी करुं, धरु क मालि बेशि ।
भव मांहि भव करुं, ननका मन करे परबेस ॥ ५४ ॥
एम विलवन्ती जूबती, वीनती करे पीयू पासि ।
चतुर चिन्ता करे माहुरीय, ताहरी रायुल दासि ॥ ५५ ॥
सांभलि सुन्दरि सीख, सीखामसु अहम तणि ।
सूँ जाणें ए सार संसार, असार अनेक ॥ ५६ ॥
तन धन गृह सुख भोगव्यां, ए भव मांहि अपार ।
नरके जाये जीव एकलो, एकलो स्वर्ग दुआर ॥ ५७ ॥
देवता दानव मानव तेहु तणा घणा कररया भोग ।
तोहे जीव नृपति न पांसीयो, मानव भदनी सो जोग ॥ ५८ ॥
उपनी तृषा अति नीरनी, क्षीरधिनें कीयो पान ।
तृपति न पास्यो आत्मा, तृण जल कोण समान ॥ ५९ ॥
तात भात सहू देखतां, जीव जाये निरधार ।
धर्म बिना कोई जीवनें, नबि तारे संसार ॥ ६० ॥
रायुल मन मनाविय, आखी चढ्यो गिरिनारि ।
वार भेष तप याचरे, याचरे पंचाचार ॥ ६१ ॥
सुकुमालो परिसा सहे, सहसा बन मभारि ।
पनर प्रमाद दूरें करे भील सहस भठार ॥ ६२ ॥
ध्यान बले कर्म क्षय करी, अनुग्रहो केवल जान ।
लोकालोक प्रकाशक भासक तत्त्व निधान ॥ ६३ ॥
रायुले तो परतो करी, मनघर रही वेराग ।
भूषण अंगना मूंकिय, शरीर सोहाग ॥ ६४ ॥
भव्य जीव प्रतिबोधिय, कीषो शिवपुर वास ।
तब बले स्थीनिग छेदिय, रायुल स्वर्ग निवास ॥ ६५ ॥

उदधि सुता सुत गोर नमी, प्रणमी अभेचन्द पाय !
 कांतिगो मोते तरिण, प्रसन्नचित्त गच्छति राग ॥ ६६ ॥
 सेह पद पंकज मन धरी; रत्नकीरति गुण गांय ।
 गाये सूर्यो ए मांहत, वसन्त रिते सुखि थाय ॥ ६७ ॥

दूहा

नेमि विलास उत्हासस्यु, जे गास्ये नरनारि ।
 रत्नगीरति सूरिवर कहें, लहे सोख्य अपार ॥ ६८ ॥
 हांसोड मांहि रचना रची; काग राग केदार ।
 श्री जिन जुग धन जांणीये; सारदा वर दाजार ॥ ६९ ॥
 इति श्री रत्नकीर्ति विरचित नेमिनाथ काग समाप्त ।^१

(२) बारहमासा

ज्येष्ठ मास—

राग आसावरी

आ ज्येष्ठ मासे जग जलहर नोउमहारे ।
 काई बाय रे बाय विरही किम रहे रे ॥
 आए रते आरत उपजे अंग रे ।
 अनंग रे सन्तापे दुख केहे नें कहे रे ॥ १ ॥

भोडक—

केहने कहे किम रहे कामिनी आरति अमाल ।
 चारु चन्दन चीर चिते, माल जांणे व्याल ॥
 कपूर केसर केति कुंकम केवडा उपाय ।
 कमल दल छांटणा वन रिपु जांणे बाय ॥
 भावे नहीं भोजन भूषण करण केरा भाय ।
 परीनगमे पान नीकों रलि करें कर भाय ॥
 गिरिनामि केरो गिरितपे, सखि ज्येष्ठ मास विशेष ।
 दुःसह दीन दोहिला लागे कोमला सलेषि ॥ २ ॥

आषाढ मास—

आश्वर आषाढ आश्वयो ए पेर रे ।
 काँई धरे रे नाह नही हूँ किम रहूँ रे ॥
 आ जल थल मही अल मेहभूँ मंडारण रे ।
 सजाँण रे न सम्भारे दुख केहने कहूँ रे ॥
 आगढ अडे गगने मोहे रो अपार रे ।
 काँई धार रे न खंचे उन्नत माहालो रे ॥
 आजिम जिम तिम रीति मरासु माहाले रे ।
 काँई साले तिम तिम नेमनो नेहलोरे ॥ ३ ॥

जोटक—

तिम तिम नाहनो नेह साले आषाढि मरास ।
 दादुर बोले प्राण तोले वरसाले विशाल ॥
 दिवस अंधारी रातडी बलि चाट चाटे नीर ।
 बापीयडो पीउ पीउ बोले किम धरुँ मन धीर ॥
 तर तणी साखा करे भाषा साबजां सोंहुत ।
 रितुकाल भोर कला करी, मयूरी मन मोहंत ॥
 आज सखी अगल आव्यो उन्हई ने मेह ।
 भव भवक भवके दीजली किम सहें कोमल देह -
 आपो परा पीउ ने पासे, करे कामिनी लाड ।
 किम रहूँ हूँ एकली रे आश्वयो आषाढ ॥ ४ ॥

सावन मास---

आषाढ अनुक्रमे आश्वण मास रे ।
 काँई मास रे आस कहूँ हूँ तम तणी रे ॥
 आ अनुचरी जाँणी आश्वयो एक बार रे ।
 आधार रे नेमि जिन धम त्रिभुवन धरणी रे ॥ ५ ॥

जोटक—

त्रिभुवन धरणी तम तणी जाँणी आश्वयो एक बार ।
 पछे नो हे अवसर अह्य तणी, जोवन नो आगार ॥
 अवसर चूकी आपणो पछे कस्यो उधे अन्द ।
 तिम तुझ बिना निज नाथ मुझने सोहोये न आनन्द ॥
 मालती मकरंद चूको, कस्युँ करे करी रे ।
 मानसर मराल चूको, किम धरे मन धीर ॥
 असवर गये सजजन मिले पछे किम टले दुख देह ।

प्रापोगणै अबसर चुको बरससेरयुं मेह,
करुणा कर कृपा करो जी दयाबंत दयाल ।
आमला सूंको सामला श्रावण करो संभाल ॥ ६ ॥

भाद्रपद मास —

भाद्रवडे भरि जलधल महीयल मेष रे ।
मैं बर रे नेमि जिम हुम बिना किम रहूं रे ॥
आ हरी अ भूमि परि इंद गोप आनन्द रे ।
आनन्द रे सोभा तेहनी सी कहूं रे ॥
ज्यम ज्यम जलहार बरसे बहुरंग रे ।
अंग रे अनंग दहे सुरिण सहचरी रे ॥
आ दीनयदने वचन बहु भाषे हम ।
अपराध पाखे का पीछ परहरी रे ॥ ७ ॥

श्रोतक—

परहरी का अपराध पाखे वचक भाषे हम ।
दिवस दोहिले नीगमु रे रयबी जावे किम ॥
आनन्द करती दुख धरती रङली चकवइ राति ।
उदय भाये एकठां तोराननी सी बात ॥
सुरिण सखि मरु काई न सुभे धूजे काम शरीर ।
निज नाथ केरो नेह साले नयन टलया नीर ॥
एमे कुरंग कुरंगीणी तरंगीणी ने तीर ।
हाव भाव खिलास निरखी नयन टलया नीर ॥
अवनीय उपरि अंब पूरा पूरया सुरनाथ ।
भादवं भरतार पाखि सेजतलाई ताप ॥ ८ ॥

आश्वनि मास—

आ आसो आसा नेमि जिएंद रे ।
काई चंद रे उदयो अवनी नीर भलो रे ॥
आ उज्जल तृण जल अंबुज आकाश रे ।
भास रे सरद सजनी सोह जलो रे ॥
सधया सुत बिनसो कल शृंगार रे ।
मुगति नो हार हृदय मुक्त दहे रे ॥

आ रे नाथ साथ ले को कहे बस्यो रे ।
नयस्यो रे काजल सखि मुक्त नवि रहे रे ॥ ९ ॥

श्लोक—

नवि रहे काजल नयस्यो माहरे प्राणता हरे प्रेम ।
जडुपति केरां किरणबाले शरट कालि एम ॥
उह्या भरी किम रह्यो हूं धरी वली करी तुमस्युं प्रीति ॥
बाही ने वन माहि जायें लोक मांसी रीत ॥
सुखि स्वामी सामल तुम बिना नवि रहे माहुरं मन्त्र ।
कठिन थई ने कां रह्यो रे वचन साहुरं घन्त ॥
मंदिरमा में नवि लहू जे कइयो पशुआ सोर ।
ते देखि नीठोर थयोरे आसो नाहू निठोर ॥ १० ॥

कार्तिक मास —

आह किम रहे कामिनी कातीय मास रे ।
काई दास रे जाणी देव दया करी रे ॥
आ तुम बिना नवि गमे तातने मात रे ।
आज रे काई काज रे ए कुन सरे सुखि महि रे ॥ ११ ॥

श्लोक

सुखि सही सुं काज सारे न संभारे नाथ ।
मुक्त कनक कुंडल किपूर कंकण नहीं भावे हाथ ॥
मुक्त राखडीनी आखडी पद कछि कडलां दूरि ।
तिलक अंग नवि करूं न यह मांग सिद्धर ॥
भोटी भोटी मोरलि मोती दहे मुक्त अंग ।
पूचरी खमकार नेउर चुनडी ना रंग ॥
आचरण भूषण अंग दूषण एक सखा नहीं आस ।
किम रहे कामिनी एकलीरे आहू काती भास ॥ १२ ॥

मंगसिर मास—

आ भागसिरे मन बल विह्वल धाये रे ।
भाय रे राय नेमी जिन कारणे रे ॥
आ जिम मृग मृगी चकित भुकी जूयो रे ।
लोयणे लोपे ह्ये बारणे रे ॥

आ तुझ बिना दीन मुख दोहिला जाये रे ।
 काँई जाये रे जूषति योवन दोहिलूँ रे ॥
 आ पीहर तो दीन पांच तो प्रेम रे ।
 काँई नेम रे सासरडे सहूँ सोहिलूँ रे ॥ १३ ॥

चोटक —

साहेलू स्वामि राज साहरूँ माहर तो नहीं कर्म ।
 चोर भव में भाल भेहेत्यां बोला मोसा मर्म ॥
 कोडहुँ तु एक मुझने एटली तां भास ।
 करस्युँ लीला नाथ साथे काँकरीनी रास ॥
 भास पूरो माहरी एटली तां खंति ।
 अति धरूँ न ताशिये जी जूयो विमासी चिन्त ॥
 पाणिग्रहण नहीं कही पछे ता कहेस्यो धर्म ।
 काला तेदसा कामणी रे ए में जाण्यो मर्म ॥
 किम भव आस्ये एह माहरो क्षण वरसां सो धाय ।
 मागशिर गयो मुझ दोहिलो रे जूयो यादव राय ॥ १४ ॥

पीव मास—

आ पोयें पोषन सोरंग सीयाले रे ।
 ए शीत कालि काँपीड परिहरो ॥
 आ शीत बाये उत्तर तो वाय रे ।
 कांये रे कपे प्रभु मुझ परिकरो रे ॥
 आताषपडे ही मह लिही माले रे ।
 काँई डालें रे तंखी जुगल बे सोरहे रे ॥
 आ किल किले केलि करे सुन्दर शाखारे ।
 काँई भाषा रे भावता वचन ते तां कहेरे ॥ १५ ॥

चोटक —

भाषा कहे शाखा रहे बलि सहि अंगे शीत ।
 प्रीत प्रोढी पंखि पेखी आवयो जी मित मित ॥
 करयो चित माहरी ताहरी दास दयाल ।
 बिसे वले वचन ता एम कहे किम रहे राजुल बाल ॥
 आपो पणो नरनारि मंदिर करे सुन्दर राज ।
 हूँ नेमि बिन एकली अनुदिन किम सरे मुझ काज ॥

मुक्त नयन थी निज नाह गयो रे रह्यो अंग शोष ।
कृपा करो मुक्त मन धरो किम रह्यो पीउडा पोष ॥ १६ ॥

माघ मास —

आ पोष महा मुक्त दोहिले दिन राति रे ।
काई मात रे जीवन यदुपति किस सह्य रे ॥
आ जिम जिम पडे वन अति घन छाई रे ।
आधार रे उभो गिरि मां किम सह्य रे ॥
आ एरते महीपति चाप चडावी रे ।
काई आधी रे हेमन्त रित उभो रह्यो रे ॥
आ तो जीवुं जो जइने जादव चालो रे ।
हिमालो रे सरस सीयालो बही गयो रे ॥ १७ ॥

त्रोटक—

नेह गयो निज नाथ केरो आ भवे आधार ।
सुणि धरणी वीनती धरणी तह्य तरणी राजुल नारि ॥
आपणी जाणी प्रेम आणी आवयो एक वार ।
पाछा बले यो तेह पगे रे जो ना वे विचार ॥
न कहं रे नाथ माहरा प्राणे तमसु श्रीति ।
साहीन राखुं स्वामी तह्य नै नेह भरहो निश्चित ॥
तेह भणी त्रिभुवन धरणी वीनती सुणो मुक्त सोय ।
माह गासि पीउ पासि पुण्य विना नवि होय ॥ १८ ॥

फागुण मास—

आ पीउ विना आवयो फू फूडने फाग रे ।
काई रामरे वसंत विरहो आल वे रे ॥
आ कुंकम केसर छांटिया अंग रे ।
काई रंग रे पदमिनी प्रिय चित बाल रे ॥
आ केलू फूलिया झूलिया जाय रे ।
काई माथ रे माधव मधुकर रणभरणे रे ॥
आ मोगरी मन्दार सालती ना छोड रे ।
काई कोउ रे कानन बीमे गुण धरणी रे ॥ १९ ॥

प्रोटक—

गुरु घरों बोलसरी बेलि जासू अनारिग ।
 पाडल परिमल कमल निर्मल कसेर केतकी संग ॥
 सहकार सुन्दर भोरीया बपोरीया ने रंग ।
 एलची रह्या अनेक वन श्रीफल संग ॥
 ते वन भा बलीय संवाये गाये गीत सनेह ।
 कागण मारे पीड विना होली दहे मुझ देह ॥ २० ॥

चैत्र मास—

आ मुझ देहे दुख दहे चैत्र नो मित्र रे ।
 काई कंत रे माहुंत माहरे परहरी रे ॥
 आ कोकिला कूजे सोरवर पालरे ।
 काई बोले रे बोल सखी मुझ सूडला रे ॥
 आ बली वन बसता सारसडां विरुवात रे
 विरुवात रे मात न लागे रुझडला रे ॥ २१ ॥

प्रोटक—

रुडा न लागे वन वेरी ह्याला ने वियोग ।
 तिलक अंजन परहस्या दूरी कर्या सह भोग ॥
 चालया चिहुं दिसे पंथि प्रेमे ताप तडका कीव ।
 किम रहूं हूं एकली तजीनीदश ने दीध ॥
 उषा काशि ए उन्हाले काम सहे मुझ तन ।
 कठिन थई नैका जाये किम दहे माहुर मन ॥
 सोह सहसने आठ आंगे सारंग घरने साथि ।
 एक का बलवा मणि ए मन कीजे निज नाथ ॥
 मास पोस हूं नीमभूं बलिनीमगू षट् मास ।
 जनमारो किम निमभूं रे चैत्र मि रहो पामि ॥ २२ ॥

वैशाख मास—

आ वैशाखे शाखा भोरि रसाल रे ।
 विशाल रे फाल उन्हाले जल घसी रे ॥
 आ मेडिइ मंदिर सुन्दर सोहावे रे ।
 काई आचेरे गायथा पंथी घर भरि रे ॥
 आ मंदिर आव्या स्वामी सोहावा रे ।
 सघाव्या रे पशू तरां करणा करी रे ॥

आ उनमद मनसिज मान नीवारि रे ।

संभारी रे मुगति मानिनी करि धरी रे ॥ २३ ॥

त्रोटक—

करि धरि वैराग्य बाहली चासयो गिरिनारि ।

बार मास परीसा सहे किम रहे रायुल नारि ॥

निज मन्न ने तां तप सम्बोधी प्रतीबोधी रायुल राज ।

मुगति पुरी गयो नाथ नेमि जिन करी आसम काज ॥

श्रीश्रभेचन्द्र उदार अनुक्रमे अभेनन्दआनन्द ।

तस चरण गामी कहे यतिवर रत्नकीर्ति मुनिव ॥

प्रेम भांणी एह बाणी गासे द्वादश भास ।

तेह तरणी श्री नेमि जिनवर बहू पूरे मन आस ॥

साथर सट बोधा गुणाले चैत्यालयचन्द्र ।

तिहुं रही रचना रचीं रे बार मान आनन्द ॥ २४ ॥

इति श्री म. रत्नकीर्ति विरचिता बारहमासा समाप्त ।

५६ एवं गीत

राग मल्हार :

(१)

सखी री सावनि चटाई सतावे ॥
रिभिभिभि बूँद बहरिया बरसत, नेमि नेरे नहि आये ॥ १ ॥
कूँजत कीर कोकिला बोलत, पपीया वचन न भावे ।
दादुर भोर घोर घन गरजत इन्द्रधनुष ढरावे ॥ २ ॥
लेख लिखू री गुपति वचन को, जदुपति कुजु सुनावे ।
रतनकीरति प्रभु अब निठोर भयो, छपनो वचन बिसरावे ॥ ३ ॥

राग न नारायण :

(२)

नेम तुम कैसे चले गिरिनारि ।
कैसे विराम धरयो मन मोहन, प्रीति बिसारि हमारी ॥ १ ॥
सारंग देखी सिधारे सारंगकुं, सारंग नयनि लिहारी ॥
उनपे तत मंत मोहत हे वैसे नेम हमारी ॥ २ ॥
करो रे संधार सावरे सुन्दर, चरण कमल पर बारी ।
रतनकीरति प्रभु तुम बिन राजुल, बिरहानलहु जारी ॥ ३ ॥

राग कंनडो :

(३)

कारण कोउ पीया को न जाने ॥ टेक ॥
मन मोहन मंडप ते बोहरे पसु फोकार बहाने ॥ १ ॥
मोपे चूक पड़ी नहीं पल रति भ्रात तात के लाने ।
अपने हर की आली बरजी सजन रहे सब छाने ॥ २ ॥
आये बोहोत दीबाजे राजे सारंग मय धूनी ताने ।
रतनकीरति प्रभु छोरी राजुल, मुगति बभू बिरमाने ॥ ३ ॥

राग कंनडो :

(४)

सुदसर्ण नाम के मैं बारि ॥
तुम बिन कैसे रहू दिन रयणी, मदन संतावे भारी ॥ १ ॥
जाबो मनाबो आनो गृह मेरे यो कहे अभिका रानी ॥ २ ॥
रतनकीरति प्रभु भये जु बिरागी, सिध रहे जीया धाई ॥ ३ ॥

राग कल्याण चर्चरी :

(५)

राजुल गेहे नेमी भाय ।

हरि वदनी के मन भाय, हरि को तिलक हरि सोहाय ॥ १ ॥

कबरी को रंग हरी, ताके संगे सोहे हरी,

ता टंक हरि दोउ श्रवनि ॥ २ ॥

हरि सम दो नयन सोहे, हरिलता रंग अधर सोहे,

हरिसुतासुत राजित द्विज चिबुक भवनि ॥ ३ ॥

हरि सम दो मृनाल राजित इसी राजु बार,

देही को रंग हरि विशार हरी गवनी ॥ ४ ॥

सकर हरि अंग करी, हरि निरखती प्रेम भरी,

तत नन नन नीर तत प्रभु भवनी ॥ ५ ॥

हरि के कुहरि कुपेखि, हरिलंकी कुं देषी,

रत्नकीरति प्रभु देगे हरि जवनी ॥ ६ ॥

राग केवारी :

(६)

राम । सतावे रे मोहि शवन ॥

वस मुख दरस देखें डरती हूँ, वेगो करो तुम भावन ॥ १ ॥

निमेष पलक छिनु होत धरिषमो कोई सुनादो जावन ।

सारंगधर सों इतनो कह्यो, अब तो गयो है भावन ॥ २ ॥

करुनासिधू निशाचर लागत, मेरे तन कुं डरवन ।

रत्नकीरति प्रभु वेंगे मिलो किन, मेरे जीया के भावन ॥ ३ ॥

राग केवारी :

(७)

अबगरी करज्यों न माने मेरी ।

आ अनीत नीत काहे कुं करतरी,

अति मीन मृग खंजन धोरो ॥ १ ॥

कनक कदली हरि कपोत कंबु,

अरु कुंभ कमल करी वीरो ॥

सारंग उरग अनेक संग मिलि,

देत उरानो वेरो ॥ २ ॥

चंदगहन होवत राका निशि,

रे हे चिया निज रोह नेरो ॥

रत्नकीरति कहेया तुं कलकी,

राह गहत हे अनेरो ॥ ३ ॥

राग केदारो

(८)

नेम तुम आखो धरिय धरे ।

एक रयनि रही प्रात पिघारे, बोहोरी चारित धरे ॥ १ ॥ नेम ॥

समृद्ध विजयनन्दन नृप तुंही बिन मनमथ मोही न रे ।

चन्दन चीर चारु इन्दुमे दाहत अंग धरे ॥ २ ॥ नेम ॥

मिलसती धारि चल मन मोहन उज्जल गिरि जा चरे ।

रतनकीरति कहे मुगति सिघारे अपनो काज करे ॥ ३ ॥ नेम ॥

राग केनारो

(९)

राम कहे अवर जया मोही भारी ॥

दश कमल सुं शीतल सीता शङ्कत देख धारी ॥ १ ॥

नयन कमल गुगल कर पदुमिनी गयन के हंसु अपारी ।

रतनकीरति राम पीरतजु पलक जुग अनुबारी ॥ २ ॥

राग केदारो

(१०)

दशानन, बीनती कहत होइ दास ।

तोही विरहानर जरत या तन, मन मोहु आउ दास ॥ १ ॥

सूरतो सपन दश च्यार निवारे ते तोही अंग निवास ।

चन्द बदन कुं अधर सुधा कुं स्पन्दित केलास ॥ २ ॥

लावनि काम दृषा श्रीकांते रंभा रूप के पास ।

गज गभभी जु हर द्वीगन कुं अनुषं भमे कंबु पास ॥ ३ ॥

कठिन री हो कहा करत कठियाई या मोही पूरन आस ।

रतनकीरति कहे सीया कारण काहे नसावत सास ॥ ४ ॥

राग केदारो

(११)

वरज्यो न माने नयन निठोर ।

सुमिरि सुमिरी गूढ भये सजल घन,

उमंगी चले मति फोर ॥ १ ॥ वरज्यो ॥

अंचल अपल रहत नहीं रोके,

न मानत जु निहोर ॥

नित उठि चाहत गिरि को भारन,

जेही विधि चन्द्र ज्यो ॥ २ ॥ वरज्यो ॥

तन मन धन योवन नहीं भावत ।

रजनी न भावत मोर ॥

रत्नकीरति प्रभु बंगे मिलो ।

तुम मेरे मन के जोर ॥ ३ ॥

राग केवारी :

(१२)

भीलते कहा कर्यो यदुनाथ ।

एही रुक्मणि सत्यभामा छीरकत मिली सबु साथ ॥ १ ॥

छीरकते बदन छपात इतलत, व्याहान को दीयो हाथ ।

रत्नकीरति प्रभु कैसे सीधारे मुगति बधू के पाय ॥ २ ॥

राग केवारी :

(१३)

सरद की रमनि सुन्दर सोहात ।

राका शशशर जारत था तन, जनक सुता बिन भ्रात ॥ १ ॥

जब याके गुन आवत जीया में, वारिज बारी बहात ।

दिल बिदर की जानत सीआ, गुपत मते की बात ॥ २ ॥

या बिन या तन सहो न जावत, दुःसह मदन को घात ।

रत्नकीरति कहैं बिहू सीता के, रघुपति रह्यो न जात ॥ ३ ॥

राग केवारी :

(१४)

सुन्दरी सकल सिमार करे गोरी ।

कनक बदन कंचुकी कसी तनि, पेनीले आदि नर पटोरी ॥ १ ॥

नीरखती नेह भरि नेमतो साहकुं रष बेले आयेंसंग हलधर जोरी ।

रत्नकीरति प्रभु निरखी सारंग वेग दे गिरी गये मान मरोरी ॥ २ ॥ सुन्दरी ॥

राग सावरी :

(१५)

सारंग उपर सारंग साहे सारंग व्यासार जी ।

ते तल पर सारंग एक सुन्दर एबी राजुवनार ॥

तरणी तेजे मोहे जी ॥ १ ॥

सारंग सारंग हरी मोहे सारंग माहे ।

सारंग मुकी सारंग पति ने जोवे ॥ तर० ॥ २ ॥

सारंग करीने सारंग बैठो कोटे सारंग समान जी ।

सारंग उपर श्री सारंग उतरी सारंग सु करे मन ॥ तर० ॥ ३ ॥

सारंग श्रवणो शामली बाले नेम दयाल जी ।

सहु सारंग केरो ने हीतकर घाल्यो रथ गुणाल ॥ स० ॥ ४ ॥

सारंग नी बारी सारंग सधाव्यो सारंग गज ए रहावे जी ।

अभयनन्द पद पञ्चक प्रणमी रत्नकीरति गुण गावे ॥ ५ ॥

राग सारंगी :

(१६)

सुण रे नेमि सामसीया साहेब, क्यों बन छोरी जाय ।

कुण काहुने रक्ष्यो क्योंन जाणो काहे न रथ फेरायरे ॥

जीवन जीवन सुण मेरी अरदास, हुं होउंगी तोरी दास ।

तु पूरण मोरी आस मोरी आस रे ॥ जी ॥ १ ॥

तात भ्रात अब मात न मोरी, तेरी चेरी होई आउ ।

सेवते देव ते दया न होये सो सीध बख्यो पास रे ॥ जी ॥ २ ॥

यु बील बील ते दया न आवे, काहावे क्यों कृपावंत ।

रत्नकीरति प्रभु परम दयालु, पास छो राजंतु रे ॥ जी ॥ ३ ॥

राग सारंग :

(१७)

सारंग सजी सारंग पर आवे ।

सारंग बदनी, सारंग सदनी, सारंग रागनी गावे ॥ १ ॥

सारंग सम शीर की बनाई, सारंग अपनो लजावो ।

या छबी अधिक आपोरी दुकारो सारंग सबद सुनावे ॥ २ ॥

सारंग लंकी सारंग थे, सारंग अंग न भावे ।

सारंग छोरति सारंग संग दो रति रत्नकीरति गुण गावे ॥ ३ ॥

श्री राग :

(१८)

श्री राग गावत सुर किनरी ॥

करत येई येई नेम कि आगि, सुधांग सुगीत देवत ममरी ॥ १ ॥

ताल पखावज वेणू नौकि बाजत, पृथक पृथक बनावत सुन्दरी ।

सारंग आगि सारंग तावत देखत सुन्दरी धवल बरी ॥ २ ॥

रथ बँडो शिवया मुत आवे, बघावे मानिनी मोती भरी ॥

रत्नकीरति प्रभु त्रिभुवन बंदित सोहे ताकि राम हरी ॥ ३ ॥

राग असावरी :

(१६)

आजू भलि आये नेम नो सावरी ॥
 चंद्रवदनी भृग नयणी हिलि मिलि ।
 या विधि गावत राम असावरी ॥ १ ॥
 भोन सूरत सूरत बनी सुन्दर ।
 पुरंदर पाछे करत नो छावरी ॥
 जय जय शब्द आनन्द चन्द सूर संग ।
 या विधि आये जंग हलधर भावरी ॥ २ ॥
 किरीट कुण्डल छवि रवि ससि सोहून ।
 मोहन आये मण्डप पावरी ॥
 रत्नकीरति प्रभु पसूय देखी फिरे ।
 राजीमती सुवती भई बावरी ॥ ३ ॥

राग असावरी :

(२०)

बली बन्धोका न करज्यो अपनो ॥
 चरन परी परी कहं री नोछावरी ।
 लघु वय कहां तप जपनो ॥ १ ॥
 रह्यो न परत छिनु निमेष पलक घरी ।
 सोवत देखत सपनो ॥
 वाच सांच सम्भारो अपनो ।
 रत्नकीरति प्रभु चयनो ॥ २ ॥

राग केवारी :

(२१)

कह्यो मण्डन कहं कंजरा नेन भरुं,
 होउ रे केरागन नेम की चेरी ॥
 सीस न मंजन देउं मांग मोती न लेउं ।
 अब पोर हूं तेरे गुननी बेरी ॥ १ ॥
 काई सुं बोल्यो न भावे, जीया में जु एसी आवे ।
 नहीं गमे तात मात न मेरी ।
 आली को कह्यो न करे बावरी सी होई फिरे ।
 चकित कुरंगिनी युं सर धेरी ॥ २ ॥

नीठर न होई ए लाल, बलिहुं नेन विसाल ।
 केसेरी तस दयाल भसे भलेरी ॥
 रतनकीरति प्रभु तुम बिना राजुल ।
 यों उदास ग्रहे क्यु रहे रीं ॥ ३ ॥

राग केवारी :

(२२)

सुनो मेरी सयनी धन्य या खनीरे ।
 पीयू धरि आवे तो ग्रीव सुख पावे रे ॥ १ ॥
 सुनि रे विधाता चन्द सन्तापी रे,
 बिरहिनी बध ये सपेद हुआ पापी रे ॥ २ ॥
 सुन रे मनमथ बतियां एक मुझरे,
 पथिक बधू वध ये देहे हानि मुझरे ॥ ३ ॥
 सुन रे जलधर करत कहा गाजरे,
 मे एक भई तुझत न तमजू न लाज रे ॥ ४ ॥
 सुन रे मेरे मीतां गोद बिठाउ रे,
 सारंग बचन ये दुख गमाउ रे ॥ ५ ॥
 सुनो मेरा कंता नहीं मुझ दोसरे,
 में क्या कीला इतना कहा रोस रे ॥ ६ ॥
 शशधर कर सम चन्दन तन लाया रे,
 कमर कदरीधर दुख न गमाया रे ॥ ७ ॥
 बियोग हुआसन दहे मुझ देहरे,
 बीनती चरन परी कहां धरी नेहरे ॥ ८ ॥
 रे मन बिजोगे भोजन न आवे रे,
 उदक हालाहुल राग न सुहावे रे ॥ ९ ॥
 पीउ आवन की को देवे बघाई रे,
 रतन मोतिन का हार देउ भाइ रे ॥ १० ॥
 रतनकीरति पीया तोरन जब आया रे,
 सजनी सबे मिलि गुन गाया रे ॥ ११ ॥

राग वेशाख :

(२३)

रथडो नीहालतीरे, पूछति सहे सावन नी बाट ।
 कहो रे कंत नेरे, मुझ नेमें हेले ते स्यामाटि ॥

कर नरेरा नेम जीरे, नीठोर न थाईये ना होला नाट ।
 बेगें चलो बाहलां वनिता कहे, सो गिरनार नो घाट ॥ १ ॥
 सांभलि सामला रे, आमला मे हलो मुभस्यु कंत ।
 भीलतांस्यु कह्यु रे महंतता वचन होये महंत ॥
 किम परणोवा अवीया रे, किनर सुर सोहंत ।
 हवे मेहली वन जातां बाहला, सोभासी जर हंत ॥ २ ॥
 भुरिण राजमती रे युवती मुभ मन एतां वात ।
 मुभ जोतांथ कारे, जिनधर्म जग मांहि बाव विख्यात ॥
 एकेका भवने नातर रे अन्तर स्यां बांधवा मात तात ।
 ते माटह अहो तहो सेवीये रतनकीरति नो नाथ ॥ ३ ॥

(२४)

सखी को मिलाओ नेम नरिदा ।

ता बिन तन मन योवन रजतहे चारु चन्दन अरु चन्दा ॥ १ ॥
 कानन भुवन मेरे जीया लागत, दुःसह सदन को फन्दा ।
 तात मात अरु सजनी रजनी, वे अति दुःख को कंदा ॥ २ ॥
 तुमतो संकर सुख के दाता करम अति काए मंदा ।
 रतनकीरति प्रभु परम दयालु सेवत अमर वरिदा ॥ ३ ॥

(२५)

सखी री नेम न जानी पीर ॥

बहोत दिवाजे आये मेरे घरि, संग लेई हलधर धीर ॥ १ ॥
 नेम मुख निरखी हरषीधनसूँ अब तो होइ मनधीर ।
 तामे पसूय पुकार सुनी करी गयो गिरिवर के तीर ॥ २ ॥
 चन्ध बदनी पोकारती झारती मण्डन हार उर धीर ।
 रतनकीरति प्रभु भये वैरागी राजकुल चित किमो धीर ॥ ३ ॥

राग भसावरी :

(२६)

आजो रे राखि सामलियो, बाहलो रथ परि रुडो भावे रे ।
 अनेक इन्द्र अनंग अनोपम उपम एहनी न आवेरे ॥ १ ॥
 कमल वदन कमलदल लोचन, मुक चंची सभ नासारे ।
 भस्तक भुमट उगट चन्दन तन कोटि मूरजि प्रकाशां रे ॥ २ ॥

कुण्डल अलक तिलक शुभ सोभा, अधर विद्रुम सम सोहे रे ।
 दंत श्रेणि मुकुताफल मानूँ मीठडे वचन मन मोहे रे ॥ ३ ॥
 बाहु सकोमल सजनी एहनी, केहनी उपमा दीजे रे ।
 गज गति वाले मण्डप आवे, भामिनी भामणां सीजे रे ॥ ४ ॥
 हरिहर हृदयर साथे आवे, भावे रूपही जान रे ।
 सारंग नयनी सारंग वयनी गाये मनोहर गान रे ॥ ५ ॥
 रथ आगलि अप्सरा आरांढे छवे नाटिक नाचे रे ।
 रतनकीरति प्रभु निरखी निरखी त्याहा राजी मन राखे रे ॥ ६ ॥

राग असाउरी :

(२७)

गोखि चडी जू ए रापुल राणी नेमि कुमर वर आवे ।
 इग्न सुरंग नचावता कांड अपछर मंगल भावे रे ॥ १ ॥
 सही सोहासणि सुन्दरी तहने पहरो नव सर हार रे ।
 तेह ने उठो नवरंग घाट रे रथ बेसीने आवे छे ।
 माहरो जीवन जगदाधार ॥ २ ॥
 काई गाजंते ने बाजंते माहरो पीउ परगोवा आवे ।
 राजुल हेडे हरषन्ती काई सलिस्यु रुडु भावे रे ॥ ३ ॥
 काई तोरण आव्यां नेमि स्वामी, काई दीणे पणुनो पुकार रे ।
 रथवासी गिरिनारि गयो रतनकीरति नो आधार रे ॥ ४ ॥

राग सारंग :

(२८)

नेमि गीत

ललना समुद्र विजय सुत सामरे, यदुपति नेम कुमार हो ।
 ललना शिवा देखी तन धन युग केहे अनोपम अवनि उदार हो ॥ १ ॥
 ललना मस्तक मुकट कनक जरयो, रवि शशि कुण्डल कान हों ।
 ललना नव शिख सोभा कहो वरणुं,
 जब चडियो हे व्याहान रे ॥ २ ॥
 ललना इंद नरिंद गयंद घरी गावत सर सबमार हो ।
 ललना नाचत सुखी अंगना, नो सत जी सिंगार हो ॥ ३ ॥
 ललना पंच रंग पहेंनी पटोरी, गोरी राजुल गात हो ।
 ललना चन्द बदनी मृग लोचनी; त्रिपुंक बिन्दु सोहात हो ॥ ४ ॥

ललदा भनिता तंक धवन दोड शिर ए खरी अमूल हो ।
ललना कबरी शेष लजामणि नाशा खुंक स्युं हो रहो ॥ ५ ॥
ललना वसन अनार अनोपम अवर अस्त परवार हो ।

सीधा सारंग सोहबनी उर बबि भुगता हार हो ॥ ६ ॥

ललना नाभि मण्डल कटि केसरी गजगति लाज्यो मरार हो ।
ललना जानूकदरी पद बीछ्ये नूपुर कुणि तर सार हो ॥ ७ ॥

ललना अंग अंग छवि फबि कहा वरणु राजित राजुल वार हो ।
उग्रसेन के मण्डपे ले रही वर कर मार हो ॥ ८ ॥

ललना आयो नीसान बजावते हरि हलधर सब साथ हो ।
ललना सारंग देखे दामरी, सब बोत्यो यदुनाथ हो ॥ ९ ॥

ललना सुणि सारथि कहे सामरो पसू बांधे बुण काज हो ।
ललना एति भोजन राजा करे, तुम कारन ए भाज हो ॥ १० ॥

ललना जीव दमारु सामरो जान्यो अथिर संसार हो ।
ललना रथ केरी गिरिनार चरे, वाई राजुल नारि हो ॥ ११ ॥

ललना सुनतो साह मुझ कीनती, में दुलनी तुम पास हो ।
ललना कहं नो द्यावरी साम रे, या मुझ पूरे आस रे ॥ १२ ॥

ललना रत्नकीर्ति प्रभु शउं कहे एको अहे अमान हो ।
ललना सम्बोधी शिलरी गये हरे जीजीया धरी ध्यान हो ॥ १३ ॥

राग भल्हार :

(२६)

सुणि सखि राजुल कहे, हेडे हरथ न माय लाल रे ।
रथ बैठो सोहामणी जीवन यादवराय लाल रे ।
मस्तग मुगट सोहामणी अवणें कुण्डल सार लाल रे ।
मुख सोभा सोहामणी, कांति तणो नहीं पार लाल रे ॥ १ ॥
गज गमनी मृग लोचनी, रागुल रूप अपार लाल रे ।
रत्न जडित बाहे वेहणा, कंठि एकावल हार माल रे ॥
रथ बैठाने निरखिमुं, सारिण ने तो पास लाल रे ।
वचन सूणी रथ चालियो, पूरयो गिरिनारि वास लाल रे ॥
सखि कहे रागुल सुणो, नेम गयो गिरिनारि लाल रे ।
श्री अभयनन्दि पद प्रणामीने, रत्नकीर्ति कहे सार लाल रे ॥

राग रामधौ :

(३०)

सशधर वदन सोहमणी रे, गज गांमिनी गुण माल रे ॥

हरिलंकी मृग लोचनी रे, सुधा सम वचन रसाल रे ॥

रायुल रति सम वीनवे रे, जीवन जिन यदुराय रे ।

सुणि सुणि जिन यदुराय रे, चरि चन्दन चन्द नवि गये रे ॥

नवि गये तात ते माय रे ॥ १ ॥

वशन दाडिम बीज शोभता रे, चम्पक वरण सेहि देह रे ।

अघर बिद्रुम सम राजता रे, धरती नाथस्यु बहु नेह रे ॥ २ ॥

कौर कोकिल बोल्यो नवि गमेरे, नोव गूथ्यो गमे केश कलाप रे ।

नवि गये राग अलाप रे, नवशत करण ते नवि गमे रे ॥ ३ ॥

अन्न उदक मित्रा नोष गये, नवि गम सजनी निसी खरे ।

हास्य विनोद सह परिहसो रे, भ्रमृत भोजन लागे बिष रे ॥ ४ ॥

विरह दवानल हूं वली रे, तुं तो त्रिभुवन तारण नाथ रे ॥

बलि बलि पाय पड़ी विनबू रे, मुन्हे राखो तुम्हारे पास रे ॥ ५ ॥

भोग भव भ्रमण कारण धरू रे, सुणि सुणि रायुल नारि रे ।

ते किम ज्ञानवंत प्राचर रे, तुं तो ताहरे हृदय विचारि रे ॥ ६ ॥

प्रतिबोधी सामलिये सुन्दरी रे, जइ लीखो गिरिनारि वास रे ॥

रतनकीरति प्रभु मुणनिलो रे, पूरो पूरो मुक्त मन आस रे ॥ ७ ॥

राग परजाउ गीत :

(३१)

नेम जी दयालुडारे, तुं तो यादव कुल सिखागार रे ।

जग जीवन जगदाधार रे, तहो करो ह्यारी सार रे ॥

स्वामि अड वडिया आधार ॥ १ ॥

हूं तो हुंती मंदिर राज रे, मैं तो हरितुं न जाण्यु काज रे ।

तुं तो आको अधिक दिबाज रे, हम जातां तुम्हनें लागु लाज रे ॥ २ ॥

कोरो लायो तुम्ह मर्म रे, जे परणो बेसो कर्म रे ।

ते न जणि संसार नो शर्म रे, हवे कोरा क्षत्रिय धर्म ॥ ३ ॥

मन्हें हससे सजनी नो साथ रे, केहेस्ये हनेली गयो किम नाथ रे ।

हूं किम रहूं अनाथ रे, तहमे देयो अन्तर हाथ ॥ ४ ॥

तुं तो सकल साखय आनंद रे, तुं तो कतणा तरवर कंद रे ।

तुम्ह दीठडे मुज आसुंद रे, कहे रतनकीरति मुणिद रे ॥ ५ ॥

राग श्री राग :

(३२)

बंदेहं जनता शरणं ॥

दशरथ नंदन दुरित निकंदन, राम नाम शिव मुख करनं ॥ १ ॥
अकल अनंत अनादि भविकल, रहित जनम जरा मरन ।
अलख निरंजन बुध मनरंजन, सेवक जन अभयत हसनं ॥ २ ॥
कामरूप करुणा रस पूरित, सुर नर नायक नुत धरनं ।
रत्नकीरति कहे सेवो सुन्दर भव उदधि तारन तरनं ॥ ३ ॥

राग श्री राग :

(३३)

कमल वदन करुणा निलयं ॥

शिव पद दायक नरवर नायक राम नाम रघुकुल तिलयं ॥ १ ॥
मधुकर सम शुभ अलक मनोहर, देह दीप्ति अक्ष तिमिर हरं ।
कजदल लोचन भवभय मोचन, सेवक जन संतोष करं ॥ २ ॥
अघर विद्रुम सम रक्त विराजित, दिवजवर पंक्ति मीषितक कलनं ।
शीता मनसिज ताप निवारण दीधु बाहु रिपु मद डलनं ॥ ३ ॥
अमर खचर कर नायक सेवित चरण कमल युगल विमलं ।
रत्नकीरति कहे शिवपदगामी कर्म कलंक रहित अमलं ॥ ४ ॥

(३४)

आवो सोहासणि सुन्दरी बृंद रे, पूजिये प्रथम जिणंद रे ।
जिम टले जनम मरण दुख दंद रे, पामीये परन आनन्द रे ॥ १ ॥
नाभि महीपति कुल सिगागार रे, कखडला मरेबी मल्हार रे ।
युगला धर्म निवारण ठार रे, करयो बहु प्राणी उपगार रे ॥ २ ॥
अप्य भुवन केरो राय रे, सुरनर सेवे जेहना पाय रे ।
सोहे हेम वरण सम काय रे, दरशन दीठे पाप पलाय रे ॥ ३ ॥
एक शतय नीलजंस रूप रे, विघटजू दीठु त्वहारे रूप रे ।
मन धरीयो बेराग अनूपरे, जे तारे भव कूप रे ॥ ४ ॥

श्री राग :

(३५)

श्रीराग गावत सारंग धरी ॥

नाचती नीलजंसा रिषभ के आगे ।

सरीगमपधु-निब-पम-गरी ॥ १ ॥

मूर्च्छितराग न बंधानउ धेखउउ हू-गान ।

ठेया ठेवन के जू तार मान मृदंग करी ॥

धुनीत धधरी बाजे देखत संवर लाजे,

नोसत श्रीराग सोहे सुन्दरी ॥ २ ॥

संगीत रंगीत रूप निरखीन बसो भूप,

जय जय जय जिन आनंद भरी ॥

नीलजंसा बिहाटी पेखी करी कहना,

रतनकीरति प्रभु देखी करी ॥ ३ ॥

राग वसंत :

(३६)

पार्ष्व गीत

बगारसी नगरी नो राजा, अश्वसेन गुराधार ।

बामादेवी राणी ए अनम्यो, पार्ष्वनाथ भवतार ॥

विमल वसंत फूल लेई पूजो, श्री संकट हर जिन पास ।

दर्शन धूरितअघ निवारो, पड़ोचे मन नी आस ॥ १ ॥

नव कार जगनत जिनवर राय, इंद्रनील भणि काय ।

इंद्र नरेन्द्र नित्य नमो पाय, समरे संकट जाय ॥ २ ॥

मदन गहन दहत दावानल, क्रोधसर्प मुपगु ।

मान मत्त मातंग केसरी, भव्य जीव ने सगु ॥ ३ ॥

मिथ्यातम नाशन तू सूर्य सम, लोभ दवानल मेह ।

दुर्धर कमठ बैरी मद सूकी, पाय नम्यो तुझ तेह ॥ ४ ॥

धरणेन्द्र पदमावती करे सेव, भव्य कमलवर भान ।

संसार आवागमन निवारो, हुं तुम्ह मागूं मान ॥ ५ ॥

श्री हासोट नगर सोभा कर, संकलसंध जयकार ।

रतनकीरति सूरि अनुदिन प्रणामें, श्री जिन पास उदार ॥ ६ ॥

अथ बलमद्र नी धोनति :

(३७)

प्रणमी नेमी जीनेन्द्र, सारदा गुरा गरा मंडरीये ।

गीतम स्वामीय पाय वंदन करुं भव खंडरीये ॥

सोरठ देश विशाल इंद्र नरेन्द्र मनोहर ए ।

सोभावंत अपार नर नारि तिहा सुंदर ए ॥

नगर द्वारिका राय रूपकला गुण वारिधि ए ।
 कामिनी रूप विसाल रोहिणी नाम सुखोमीये ए ॥
 साली क्षेत्र वर में चन्द्र परमोद्दतीए ।
 ॥ २ ॥

स्वपन दीठा ते नार देव पट्टपरमुंगल ए ।
 भवतरीया बलदेव श्रीभोवन मोहन पर बल ए ॥
 देव की पुत्र उदार नारायण मंध वसुरणोए ।
 माहाराज वर तेह, वीण खंडना सुधर्म ए ॥ ३ ॥

पद्मनाभ बलभद्र चितवसा सुख पांभीए ।
 कीधा राज महंत भोगवे पुन्य वरवाणिये ए ॥
 धीयो द्वारिका नां सबे बांघव तव निसराए ।
 कर्म तारी रे नीरखेव आनवत दुख बीसराए ॥ ४ ॥

सर्व भवलयो राय तुंगी गिरवर सोमतोए ।
 कोड नवाणु सीध्द ते जे श्रीभोवन मोह तोए ॥
 श्री नारायण भंग वैराग पांभी धीर मन ।
 चारीत्र सीधू धन्य ध्यान ऐ स बन ॥ ५ ॥

राम नाम गुणवंत पूजता भव नासीये ए ।
 नामे रोग समूह नाग गजेंद्र सु नासीये ॥
 भूत पिसाच शाकनी डाकनी रोग हरे ॥ ६ ॥

लक्ष्मी नारि सुरूप पुत्र धुरवर नादीये ए ।
 सकल कला गुणवंत अभय नंदि गुण बांदीये ए ॥
 वीनति राम नरेन्द्र रत्नकीर्ति भरो भाव धरी ।
 स्वर्ग मोक्ष नर नारि लहे भरो जे सुभ मन करी ॥ ७ ॥

**भट्टारक रत्नकीर्ति
की
कृतियां**

श्री भरत-बाहुबली छन्द

मंगलाचरण :

स्तुत्वा श्रीनाभेम सुरनरखचरालि राखिपदकमलं ।
 रौद्रोपद्रवशमनं वक्ष्ये छंदोति रमणीयंक ॥ १ ॥
 पराखिवि पद आदीश्वर केरा । जेह नामे कूटें भवफेरा ।
 ब्रह्मासुता समरुं भतिदाता । गुणगणमंडित जग बिस्वाता ॥ २ ॥
 बंदवि गुरु भिद्यानंदि सूरि । जेहनी कीर्ति रही भरपूरी ।
 तस पद कमल दिवाकर जाणुं । मल्लिभूषण गुरु गुण बखानुं ॥ ३ ॥
 तस पट्टें पट्टोधर पण्डित । लक्ष्मीचन्द्र महाजिण मण्डित ।
 अभयचन्द्र गुरु शीतल वायक । सेहेर वंश मंडन सुखदायक ॥ ४ ॥
 अभयनंदि समरुं मनमाहि । भयभूता बलगाढे बाहि ।
 तेह तणि पट्टे गुणभूषण । बंदवि रत्नकीरति गत दूषण ॥ ५ ॥
 भरत महीपति कृत महीरक्षण । बाहुबली बलवंत विषक्षण ।
 तेह तणि करसुं नव छंद । साभलता भणता आणंद ॥ ६ ॥
 देश मनोहर कोशल सोहे । निरखतां सुरनर मन मोहे ।
 ते माहि राजे अति सुन्दर । आकेता नगरी नव मन्दिर ॥ ७ ॥

महाराजा ऋषभदेव का शासन :

राज्य करे तिहां वृषभ महाभुज । सुख सुखमा जितहुसि तनवानुज ।
 जुगलाधर्म निवारण स्वामी । भव भय भंजन शिवनद गामी ॥ ८ ॥
 अंग सुरंग अनूपम राजे । रूप सुखें रतिपति लाजे ।
 कवक कालि सम काय कलाधर । धनुष पांचसे उच्च मनोहर ॥ ९ ॥
 ज्ञान त्रण्य शोभे अति जेहनें । कोण कला उपदेशे तेहनें ।
 कल्पवृक्ष क्षय जाता जाणी । जेणें सब संतोष्या प्राणी ॥ १० ॥
 जैनधर्म जेणें उपदेश्यो । जीव जन्तु कोई नखि रेस्यो ।
 दीनदयाल दयानो सागर । भाववभंजन धूरि गुणाकर ॥ ११ ॥

रानी यशोमति का वर्णन :

गजगांमिनी कामिनी कृशभंगी । नयन हराबी बालकुरंगी ।
 सारद चारु मुधाकर वदनी । कुंद कुसुमसम उज्जल रदमी ॥ १२ ॥

बज्रुल बेरणी बीणा बाणी । रूपरसं जीती रति राणी ।
 अक्षर अनुपम विद्रुम राता । नलवट केसर तिलक विभाता ॥ १३ ॥
 नासा सरल सधर कुच सारा । मंजुल रुचि भुक्ताफल हारा ।
 कदली सार सुकोमल जंघा । कटि तट लंक लजावित सिंघा ॥ १४ ॥
 प्रथम यशोमति अति अशिरामा । बीजी रम्य सुनन्दा भामा ।
 मात जसोमति जे जाया सुत । भरत आदि सो ब्राह्मी संयुत ॥ १५ ॥
 जनम्यो वीर सुनन्दा मायें । बाहुबली सुन्दरी तनुजायें ।
 सहु परियण सुं राज्य करंता । हास विलास विशेष बहता ॥ १६ ॥
 आशी लाप पूरव संवच्छर । विविध विनोदेंव्योलाविस्तर ।
 एक समय नीलजस रूप । देवी मति चमक्यो दृष भूपं ॥ १७ ॥

अवध १६ गीतवय :

ऊढ्यो अति वैराग्य विचारी । छंडी लखि बहु अतिसारी ।
 राज्य तरुं आडंबर आप्युं । भरत महीपति नामज थाप्युं ॥ १८ ॥

भरत को राज देना :

पोतनपुरी भुजबली बेंसारया । अक्षर यथोचित तनुज बधारया ।
 च्यार हजार महीपति सार्थे । लीधो संयम त्रिभुवन नार्थे ॥ १९ ॥
 पंच महादठ पंच समितिसुं । पाले जिनपति अण्य गुपति सुं ।
 अति ऊजड भटवी म्हां रहेंता । होडें सबल परीसह सेहेंता ॥ २० ॥
 एक दिवस ते राज्य करंतो । बैठो भूप सभा सोहंतो ।
 त्यारें नण्य वषांमणी आवी । सांभलितां सहुनै मनै भावी ॥ २१ ॥
 वृषभानधनें केवलशाणं । प्रगट्युं चक्ररयण जिमभाणं ।
 पुत्र जन्म सांभलीयो नरपति । कीधो मंत्र सह मली शुभमति ॥ २२ ॥
 धर्म कर्म कीजे ते पेहेलु । जिम नवद्वित सोभे वेहेलुं ।
 त्यारें भूपति भावधरीनै । केवलबोध कल्याण करीनै ॥ २३ ॥
 चरच्युं चक्र कट्युं आडम्बर । पुत्र जन्म उच्छ्व करी सुन्दर ।
 मही साधन संचरीयो नायक । मलीया गजरथ तुरग सुपायक ॥ २४ ॥

भरत द्वारा दिविवजय :

पूछवि पंडित ज्योतिष जांणा । वर भंगल दिन कर्था पयाणा ।
 चाल्या अतुर महीपति मोटा । शूर सुभट अति चांगण चोटा ॥ २५ ॥

जीत्या जोर छल्लंड अखंडा । वेरी बहु कीधी बहुरंड्या ।
 दंड्या षंड्या गठपति गांठा । आठा नाहागजे उपराठा ॥ २६ ॥
 गिरि गह्वर जल थल खंखोल्या । व्यंतर विद्याधर भक्तभोल्या ।
 साठ हजार वरसधरे आव्यो । लच्छि सुसक्षर ललना लाव्यो ॥ २७ ॥
 दिन जोइ नगरी नेमंदा । चक्र न चरले सुर ठेसंता ।
 त्यारें वचन चवे ते चक्री । बोलाव्या भतिसागर मन्त्री ॥ २८ ॥
 कहो किम चक्र न पेसें पोले । ते मन्त्री बोल्या अध बोले ।
 स्वामी सांभलि वचन अभ्दारा । आण न मानें बन्धु तम्हारा ॥ २९ ॥
 तेम्हां बाहुबली बल पेये । कोन्हें नचि मन माहें लेये ।
 धीर वीर गम्भीर महाबल । वेरी गज केसरी भति बंशल ॥ ३० ॥
 निज तैजें तरणी पण भांप्यो । एह्दा वचन सुणीनें कंप्यो ।
 रोष बढ्यो राजा ते बोले । कोण महीपति म्हारे तोले ॥ ३१ ॥
 माहं मान उतारुं तेहनुं । रणरभलाबुं बहुदल एहनुं ।
 त्यारें ते मन्त्री सुविचारी । बोल्या भूपति नें हितकारी ॥ ३२ ॥
 रहो रहो स्वामी रीश न कीजे । तेहनुं पेहेलो लेख लखीजे ।
 ते लेई विचार चर जाये । वाटें कहीं खोटि नचि थाये ॥ ३३ ॥
 जेम तिहांजईनें वेहेलो आवे । जोईये साज पडूतर लावे ।
 एह विचार सभी मनें भाव्यो । आप्यो लेख सुदूत चलाव्यो ॥ ३४ ॥

बाहुबली के पास दूत भेजना :

चार्यो दूत गयो ते तरक्षण । भेट्या राजकुमार सुलक्षण ।
 आप्यो लेख सभा सहु बेठा । वांची वचन चवें ते रुठा ॥ ३५ ॥
 कहे रे चर तें किम पग धार्यो । त्यारें बोले बोल विचार्यो ।
 मानो आण महीपति केरी । आपें भूमि दली अधिकेरी ॥ ३६ ॥
 त्यारें दूत वचन कलमसीया । बलतां वचन चवे ते बलीया ।
 आण अम्हें तेहनी शिर बहीये । जेह थी भवसागर ऊतरीये ॥ ३७ ॥
 एहवुं कहि चढीभा कंलाशे । लीखो संयम स्वामी पासें ।
 त्यारे ते चर पाछो दलीयो । आबीनें राजा चितवीयो ॥ ३८ ॥
 स्वामी तेणें सुहु ऋद्धि छंडी । सेवा आदि जिनेश्वर मंडी ।
 एहवुं वचन सुणी तंह सीयो । मनमहि वेराग न बसीयो ॥ ३९ ॥

आर्या

कोहं केयं वसुधा, बभूवुरस्यां कियंत ईशगणाः ।
 तैः साक न गता सा, यास्यति कथं मयेति सह ॥ १ ॥ ४० ॥
 बोल्यो वचन बली वसुधापति । बाहुबलीनी सीज मनोगति ।
 चारु सो एक दूत चलावो । तेहनो आशय वेमें अणावो ॥ ४१ ॥
 त्यारें तारें मंत्र विचारी । दूत चलाव्यो बहुमति धारी ।
 चाल्यो दूत पयारें रेहेतो । बोड़े दिन पोयणपुरी पोहोतो ॥ ४२ ॥

पोदनपुर का बंभव :

दीठी सीम सवन करु साजित । बापी कूप तडाग विराजित ।
 कलकारंजो नल जल कुंडी । निर्मल नीर नदी अति ऊंडी ॥ ४३ ॥
 विकसित कमल अमल बल पंती । कोमल कुमुद समुज्जल कंठी ।
 वन वाडी आराम सुरंगा । अंब कदंब उदंबर दुंगा ॥ ४४ ॥
 करणां केतकी कमरुष केली । नवनारंगी नागर बेली ।
 अगर तगर तर तिद्रुक ताला । सरल सोपारी तरल लमाला ॥ ४५ ॥
 बदरी बकुल मदाभ बीजोरी । जाई जूही जंबु जंभीरी ।
 चंदन चंपक चाउर ऊंली । वर वामंती वटवर सोली ॥ ४६ ॥
 रायशरा जंबू सुविशाला । दाडिम दमसुो द्राक्ष रसाला ।
 फूल सुगुल्ल अमृल्ल गुलाबा । नीपनी वाली निबुक निशा ॥ ४७ ॥
 कण्ठर कामल लंत सुरंगी । नालीयरी दीपो अति चंगी ।
 पाडल पनश पयाश महाधन । लवली लीन लवंगलता घन ॥ ४८ ॥
 बोलें कोयल मोर कीगरा । होला हंस करें रवसार ।
 सारस सूडा चचु उषंगा । लावां लीतर चारु विहंगा ॥ ४९ ॥
 कोक चकोर कपोत सरावा । भमरा गुंजारव रस भावा ।
 कृसुम सुगन्ध सुवासित दिग्मुख । मंद मरुत उत्पादित अतिसुख ॥ ५० ॥
 दूत चलयो घन वन निरखंतो । पेठो पोल विषय हरखंतो ।
 दिठी ऊंची पोल पगारा । अति ऊंडी छाई जल फारा ॥ ५१ ॥
 कोशीलें मंडित बहुसारा । गोला तालन लागें पारा ।
 नगर भभार चलयो निरखंतो । मन सुं देवनगर लेखंतो ॥ ५२ ॥
 शिखर बद्ध जिग मंदिर दीडा । जाणें लोचन असीम पड्डा ।
 सुन्दर सत्तखणा आवासा । मृगनयणी मंडित सुबिलासा ॥ ५३ ॥

मेढी मण्डप बहुमत वारण । घरे घरे लेहेके मंगल तोरण ॥ ५४ ॥
 ते जोतो मनें धयो अचभित । आत्यो चर चहुदे अविलम्बित ।
 दीछी माणिक चोक मनोहर । ज्यारें पासैं विराजित गोपुर ॥ ५५ ॥
 मणिमोती हीरा मरुवाला । गाली बेल प्रगर अतिकला ।
 चोराशी चहुटां हटमाला । चित्र-विचित्र न भाक कमाला ॥ ५६ ॥
 कुंकुम कस्तूरी कपूर । पुष्पा चन्दन चमर सु चीरा ।
 मलमल लालम सज्ज रसेसर । बहु शकलात दुरंगीटसर ॥ ५७ ॥
 ने सह नगर तमासा जोतो । राज दुआर जइ घर पोहीतो ।
 पूछवि पील धणी गयगतीनें । अघर जइ मनीयो रत्निपतिनें ॥ ५८ ॥

बाहुबली की राज सभा :

त्यारें भूपति आप्यु मसन । कृशल प्रश्न कीधुं संभासन ।
 बोल्यो दूत वचन ते बलतुं । स्वामी सांभलीये कहुं चर तुं ॥ ५९ ॥
 आज कुशल सविशेषे तेहनें । तम्ह सरषा बांधव छे जेहनें ।
 तो पण तेहनें मलचा जईये । जेम जगमाहें मोटा थईये ॥ ६० ॥
 तम्ह थी ते बांधव परा मोटो । ते सुं मान धरो ते खोटो ।
 ते माटे सुं फोकट तांणो । ते छे त्रण्य दुषंडह राणो ॥ ६१ ॥
 सांभलि सब कहुं ते मांडी । मुंको रोब हईयानो छांडी ।
 सांध्यो विजयारध अतिमुन्दर । ध्रुजाव्या विद्याधर वितर ॥ ६२ ॥
 म्लेच्छराय मारी बश कीधां । तेह तरों शिर दण्ड जदीधां ।
 नेमि विनेमि नमाव्या चरणों । मागध वतुं न आव्या शरणों ॥ ६३ ॥
 तरल तरंग पयोनिधि तरीयो बाणें भूरि प्रभासविडरीयो ।
 गंगासिंधु नदी अति डोहोली । आपी भेट अनूपम बोहोली ॥ ६४ ॥
 उठ नदीयो हिमवतहराव्यो । नटुमालि निज सेव कराव्यो ।
 पुण रमतो वृषभाचल आभ्यो । जुगति करी तिहां नाम लिखाव्यो ॥ ६५ ॥
 लाठ मोठ कणाठ कस्या बस । मेदपाठ माह लीधा बस ।
 मानी मरहट्टा ऊजाड्या । सोगल सोर घषों पाड्या ॥ ६६ ॥
 मालव मागधनें मुलतानं । कन्नड द्राविड मोड्या जानं ।
 जाहल मलबारें सवराहं । कांसरूप नेपाल सलाहं ॥ ६७ ॥
 अंग बंग कंबोज सिलंगा । कुंकण केरल कीर कलिगा ।
 पंचाला बंगाला बम्बर । जालंधर गंधार सुगंजर ॥ ६८ ॥

पारस कुदजांगल आहीरं । कोशील काशी लकां तीरं ।
 रुम सुम हर मजहद कीषां । कच्छ वच्छ वर मुदा दीषा ॥ ६६ ॥
 भक्खर देश पड्या भंगाराणं । हलफलीया हेंलाहींदुआणा ।
 एवनादि बत्तीष हजार । देश मत्तावी आण अपारं ॥ ७० ॥
 बभणा सोल हजार मुगटधर । गाजे लक्ष चोराशी गयवर ।
 तस्समान रथ पाचक चल्ले । पाद प्रहारे भेदिनी हुल्ले ॥ ७१ ॥
 छुन्नुं सेहेसर माललिश्रंगी । कोड अठार तुरंग सुरंगी ।
 बें अडतालीश कोडि सुगामं । सुन्दरसर शोभित बरचामं ॥ ७२ ॥
 कर्वट खेट भटवक राजे । पत्तन द्रोण मुखादिक छाजे ।
 नवनिधान भनवच्छित्त पूरे । चउइ रयण दालिद्वि चूरे ॥ ७३ ॥
 जीशें लच्छि करी घरे दासी । कीति कलाक कुबंतनि दासी ।
 चक्रपति सु बंक न धश्ये । तेसुं मानधरी नवि रहीये ॥ ७४ ॥
 आन ख्यजी तस आण । वहीये भरत पहिपति पद अनुसरीये ।
 नहीं तर तस कोपानल चढस्ये । ताहारुं भुजबल दल मलस्ये ॥ ७५ ॥
 देणे विषय भंगारुं पडस्ये । सुन्दर पोयणायुर उजडस्ये ।
 भिते भीत पडि आथडस्ये । गढ़ पाडी में दानज करस्ये ॥ ७६ ॥
 मणिमोती हाटक लूटास्ये । बंदि पडचूं मारणस विषटास्ये ।
 नाशी नर देशांतर जास्ये । तीहारुं लोकह सारथ थास्ये ॥ ७७ ॥
 ते माटे डब-डब सहू सूको । भरतपतिनी सेवमं चूको ।
 एहवां दूत वचन बहु खोल्हो । तो एण मन माहि नवि डोल्हो ।
 रोस चढयो बोले रतिनायक । खोटुं दूत भवेंसुं वायक ॥ ७८ ॥

आर्या

पूज्योग्रजोऽभुवने रीत्यापि न मान्यते भवेति नृपः ।
 बाहुबलीत्यभिरूपैः संज्ञा संकथ्यते हि वृथा ॥ २ ॥ ७९ ॥

बाहुबली का उत्तर :

जे जनपद मुक्त आप्यो जिनवर । ते लीघो किम जाये नरवर ।
 अप्यलोक साहारे दशवर्ति । एहनें खण्ड छलण्डज घरती ॥ ८० ॥
 तो एहनी किम आणज मानुं । साहां मुहुं वेसारुं कानुं ।
 इन्द्र चन्द्र नागेन्द्र नमावुं । दानव देव दिनेश भमावुं ॥ ८१ ॥

मद भरता मय मय संसार । धसमसता भटयट हठ दास ।
 हणहणतां हयवर भकभोलु । रणसावर कल्लोलें रेखु ॥ ५२ ॥
 भूतपिशाच परेत हकार । व्यंतर विद्याधर चक्कार ।
 लडयडतां भडषड नच्चाडु । सुतो भमराणो जग्गाडु ॥ ५३ ॥
 भूखया राक्षस नें संतोष । क्षेतल्लो पेडे बल पोषु ।
 रोस चढयो रण अंगणें आडु । गडगडता गिरि चरते पाडु ॥ ५४ ॥
 मुकटवद्ध राजाने मारु । छत्रभंग करी नाद उतारु ।
 शाकेता नगरी उज्जाडु । भ्हारे को नवि आये आडु ॥ ५५ ॥
 विद्याधर बाजीगर माया । व्यंतर अन्तर चंचल छाया ।
 ए जीतें किम शूर बलारु । मुक्कमुं आणि भडे तो जांरु ॥ ५६ ॥
 चक्रे करी कुम्भारज कहीये । दण्ड धरे दरवानज लहीये ।
 यमवाहन गजवेशर बाजी । बाल रमति सरधी रथ राजी ॥ ५७ ॥
 पायक पूतलडां समभासे । ते सारु किम मझनें वासे ।
 आण बहुहुं तेहनी भाये । जे सुरगिरि अच्यो हरि हाये ॥ ५८ ॥
 ते विरा आण चहे जे केहनी । ता लाये जननी जग लहनी ।
 जा जा दूत जवानी करतो । एके बोल न बोले नर तो ॥ ५९ ॥
 घातो जाय धणी नें केहेजे । मुक्क पहलो रण आवी रहेजे ।
 नहीं ठर हुं आडु छुं बहेलो । चांपी भूमि पडुं तभ पहिलो ॥ ६० ॥
 वीर वचन साखुं हूं भाषूं । मुद्ध करी जमें नाम उ राखूं ।
 त्यारें दूत गयो शाकेतां । जाइ धीनवीयो भरत विनेता ॥ ६१ ॥

दूत का वापिस भरत के पास आकर निवेदन करना

बाहुबली तभ आण न मानें । तेहनां बोल न पोये पानें ।
 जो बली आतो दहेला जाऊ । नहीं तर बैठा गीत जगाऊं ॥ ६२ ॥
 ते सांभलो नें राजा रुठो । हावुं ढील कसी ते ऊठो ।
 साजो कटक शटक मुं चालो । बाहुबलीनी पडभड टालो ॥ ६३ ॥
 त्यारे सैन्य-सजाई कीधी । रण जावाने फेरी दीधी ।
 मदमाता मयमलमलयता । सिजतरल नेजा भलकंता ॥ ६४ ॥

सेना की तैयारी :

घम-घम घुघर वाला । गुम-गुम गुजंताल भभराला ।
 घण्टा टंका रव रणकन्ता । लकती डाल घण्टा लेहे कंता ॥ ६५ ॥

मग मगता मद जल मेहेकता । उत्तंगा अंजनगिरि वन्ता ।

हस्त खडग गहि कर कर भाला ।

दंतूशन मूशन सम चाला ॥ ६६ ॥

गुलगुलंत मद गलता धाता । सांदूरे कुम्भस्थल राता ।

चंचल चमरालाकुंडाला । उद्दंडा चंडा ऊडाला ॥ ६७ ॥

हिलि-हिलि कलित-कलित हे पारा ।

जलधलगामिकछी सारा ।

नीला पीला धवल तुरंगा । काला कविला शबल सुरंगा ॥ ६८ ॥

रणभरणा गल कंदल चंगा । रंम विरंग मनोरम मत्तंगा ।

आंकुड बांकुड आकड़ी आला ।

कसम सभाकी तलर डीआला ॥ ६९ ॥

ते उपरें चढी आठ कराला । मार मरह ढाढही आला ।

टाकचंदेलाने बहुआणा । सोलंकी राठोड़ सुराणा ॥ १०० ॥

दहिआडा भीनेबोडाणा । परमारा मोरी मकठाणा ।

रोमी मुगल भल्या मुलताना । धान मलिक साथे सुलताना ॥ १०१ ॥

हबशी हूड फरंगी फलका । चपल बलोच पलठाणा सुठलका ।

चाल्या कटक विकट अति केहरी । अंगा टोप शिल्ले सह पेहरी ॥ १०२ ॥

भास्या धचरषजोने पेटी । भरी आभार बील्ल भपेटी ।

कंट कस्यां अरडाता वाधर । तम्बू वाड तबेला पाधर ॥ १०३ ॥

भेसा भार भर्या अति भारी । शलकी मादकजावेफारी ।

चाल्या चित्तभूतारंहर । ताणें तरल तुरंगम रवभर ॥ १०४ ॥

देता डोट भपेटा पाला । छूटा भट छोट छोगाणा ।

दडेबडता दोंगां ठपेटाला । मारे गाल फटाकाठाला ॥ १०५ ॥

कडछ्या कुछाला मुछाला । भगभगता भात्या ते भाला ।

पेडा खज्ज गदा फरशी धर । चक्र चाप तोमर मुद्गर कर ॥ १०६ ॥

खपुआ छुरी कटारी मूशन । डीगां डांग च जाडे चंचल ।

होकर नाल हवाइ हाथे । बहु अन्धूक चलावी साथे ॥ १०७ ॥

विद्याधर निज्जंर मनोहारा । रचित विमान विनोद विहारा ।

देखी सैन्य पडगाडंवर । हरण्यो भरत धराटमणीवर ॥ १०८ ॥

चढीयो छत्रपति सुविलास । चोषा चमर ढले ते पास ।

कीधू कूज दमार्ग वाजे । नादे गड़गड़ अम्बर गाजे ॥ १०९ ॥

डम-डम जंगी डोल धसूके । सांभलतां कायर मुख सूके ।
 दो-दो महुल तवल नफेरी । भं भं भल्लरी भम्भा भेरी ॥ ११० ॥
 बाजे काहल ताल कशाल । पूरे शंस सुवश विशाल ।
 बोले भाट भटाइ गाडे । साधरीआ आगल थी काडे ॥ १११ ॥
 एहवि अधिक दिवाजे जाये । वोहोला दल पोहोवी नवि माये ।
 रनकटीआ आगल थी बाधर । कापी भाड करेले पाधर ॥ ११२ ॥
 ऊड अडारा मोटा पाडी । वांकी वाट समारेलाडी ।
 अंति अलगार करे ते मोटी । बाटें कहीथाये नवि खोटी ॥ ११३ ॥
 चौप करी चात्यां चक्रीबल । वेगे जई पोहोतां अतुली बल ।
 ते पहेलो आय्यो बाहुबली । दीवो चापि खड्यो रणभूतल ॥ ११४ ॥
 करयुं मुकाम रह्या ते रजनी । उग्यो दितकर चाली धजिनी ।
 त्यारे रणराजिअ ज बागां । सांभलतां कायर भन भागां ॥ ११५ ॥
 शूर सुभट रहवट खलभलीआ । वेहेलारण अंगरो जडमलीआ ।
 मांडयुं मुद्ध महीपति जहीआ । धीर वीर आगल थी बढीया ॥ ११६ ॥
 छूटेशरधोरणी रण साथे । काडि कटारी छीसे हाथे ।
 धामें धनुष चढावी पाला । अहमहमिकया न दीये टाला ॥ ११७ ॥
 भग भगता भाला भल भोके । भक भवतां लोदी मुखें ऊके ।
 छूटे नाल हवाई हेका । बन्धूके मारे बहु लोका ॥ ११८ ॥
 मोढे मुगर शिलहे सह फोडे । बंचल अथ चमर वर थोडे ।
 माचे वड बाजे रण तूटा । मुग्धर मारि करे चकचूरा ॥ ११९ ॥
 मदगेहे लागज शंकल शूडे । पाछल थी हाला पग गूडे ।
 धसतां धड नाखेते कटकी । भटकेशटकक ते कटकी ॥ १२० ॥
 नाना धाय पड्यो बहु प्राणी । दलबलता बहु मांगे पाणी ।
 हरण्या भूत पिशाच निशाचर । व्यंतर वेताला शंकाकुलर ॥ १२१ ॥
 रुंढगुंड रण भूमि कराला । रुधिर नदी दीशे विकराला ।
 नेजा तेज करंता मारे । तो पण नवि को जीते हारे ॥ १२२ ॥

आर्या

सदैवः समरं घोरं, कृतवन्तो वज्रिता भटाः सचिवैः ।
 कार्यं नृपतिनियोगं, विनापि कर्तुं युक्तमिति विचिन्त ॥ ३ ॥ ११३ ॥

त्यारें महिमति मन्त्री मलीआ ।

मन्त्रविचार विषय अतिकलीआ ।

ते सहु मन्त्र विचारो मोटा । जेहना ओल न थाये खोटा ॥ १२४ ॥

स्यान्हे क्षत्रिय भट संहारो । चारु एक विचार विचारो ।

ए बेहु चरम शरीरी राजे । एहनें नवि कांटो परा साजे ॥ १२५ ॥

ए सुन्दर नर संयम पामैं । कर्महणीनें शिवपद गामी ।

ते थी बात विचारो बेहेली । जेम भाजे सधलीए जे हेली ॥ १२६ ॥

परस्पर में तीन प्रकार के युद्ध करने का निर्णय :

अण्य युद्ध त्यारे सहु खेठा । नीर नेत्र मत्लाहव परठ्या ।

जे जीते ते राजा कह्ये । तेहनीं आण विनय सुं बहीये ॥ १२७ ॥

सहु विचार करीनें नरवर । शल्या सहु साथे मच्छर भर ।

दीठुं चारु सरोवर विमलं । भरीअं नीरह सित सित कमलं ॥ १२८ ॥

जलयुद्ध

अति गम्भीर तरल तरले हरि । पैंटा भूप अपर पट पेहेरी ।

भीले भूप भर्या बहु अटिं । माहो माहें रमें जल छाटे ॥ १२९ ॥

रमतां भरत तणायो रेलें । हारयो सहु जोतां जल बेलें ।

त्यारे बाहुबली दल हरस्युं । भरत कटक मन सठ अतिनिरण्युं ॥ १३० ॥

नेत्र युद्ध

नेत्र युद्ध करता परा हार्यो । बाहुबली महाबल जयकार्यो ॥ १३१ ॥

चाल्या मल्ल अखाडे बलीआ । सुरनर किन्नर जोवा मलीआ ।

काछ्या कच्छ कशीकड़ तांणी । बोले बांगड़ बोली बाणी ॥ १३२ ॥

मल्ल युद्ध

भुजा दण्ड मन मुंड समाना । ताडंता बंधोरे नाना ।

हो हो कार करि ते धायां । बच्छोबच्छ पड्या ते राया ॥ १३३ ॥

हक्कारे पव्वारे पाडे । बलगा बलग करी ते आडे ।

पग पडघा पोहो वीतल बाजे । कड़कडता तगवर ते भाजे ॥ १३४ ॥

नाठा वनवर आठा कायर । छूटा मय गल फूटा सायर ।

गड़गड़ता गिरिवर ते पडोआं । फूतकरंता फण्णपति डरीआं ॥ १३५ ॥

गढ़ गड़ गड़ीआ मंदिर पड़ीआ ।
 दिगन्तीव मक्या चलचलीआ ।
 जने खल भलीआ बालक छलीआ ।
 भय भीरु अबला कलमलीआ ॥ १३६ ॥

तो पण ते धरणी धबडूकें । लड़खड़ता पड़ता नवि चूकें ।
 भरत द्वारा चक्र फेंकना
 त्यारें बाहुबली नवि होत्यो । हलवेसैं चभी हींदोत्यो ॥ १३७ ॥
 देखी बाहुबली भट हसीओ ।
 भरत तरां भट अति कषमशीआ ।
 बल्लें रीश करी ने मुं'क्युं । चक्र बाहुबली करे दु'क्युं ॥ १३८ ॥
 मान भग दीठो नृप रागें । बाहुबली जहीयो बेरागें
 धिग धिग यह संसार असारं । कदली गर्भ समान विचारं ॥ १३९ ॥

बाहुबली का बेराग

विषय तरां मुन्न विग सम भांसैं ।
 तन धन यौवन दिन-दिन नासैं ।
 सज्जन सहु मलीआ निज कांसैं । सुं कीजे हय गय दर धांसैं ॥ १४० ॥
 घर श्रंथे पड़ीयो ते प्राणी । पाप अनन्त करे ते जाणी ।
 मेते मूढ पणुं सुं कीधुं । ज्येठा बंधवनें दूसा दीधुं ॥ १४१ ॥
 पहवो मनि बेराग धरीनें । भरतपती सुं अरन करीनें ।
 निज राजे महाबल बेसारयो ।

क्रोध लोभ मद मदन निबार्यो - ॥ १४२ ॥

छंडी ऋद्धि गयो जिन पासैं । लीधी संयम भव मय नासैं ।
 बरस एक मरणादा कीधी । अन्न उदकनी बाधा लीधी ॥ १४३ ॥

बाहुबली की तपस्था

प्रतिमा योग धर्यो मनमाहें । उभा रही आलंबित बाहें ।
 ध्यान धरे बहु जीव दया पर ।
 नवि बोले नवि चालें मुनिवर ॥ १४४ ॥
 आष न फरके रोभ न हरषें । वनसावज आबीने निरखें ।
 वनचर तनुऊ धसता दीसे । तो पण भुनि न चढ़े ने गीसैं ॥ १४५ ॥

नख मु'भिल्ल घसें ते भल्ली । देह चडीं नाना चिव बल्ली ।
 विष बिकराल भुजंग भयंकर । लक्षित गल कंदल अति सुन्दर ॥ १४६ ॥
 कान विषय माला ते कीचा । पंथीयडें बहुपरे दुख दीचा ।
 वरसाले बहु बीज मंत्रुके । तो पण ध्यान थकी नवि चूके ॥ १४७ ॥
 सघन घनाघन अम्बर गाजे । भंकावात मसेहेलो वाजे ।
 लांबी भड मांडीनें दरघे । दादुर जल देषीनें हरघे ॥ १४८ ॥
 माता मोर करे रंगगेलं । बापीपडो बोले पीड बोलं ।
 खलखल नीर बहेते कोतर । भरीयां वारि सरोवर दुस्तर ॥ १४९ ॥
 भर-भर बरसे रात अंधारी । भूरे विरही नर नवतारी ।
 जे रे हेतो वर चित्र अवाधें । ते ऊभो बाहेर चोभासें ॥ १५० ॥
 धूजे वनचर जाकी टावें । नीलुं वन न रहे हिम सावें ।
 नवि सूये बेसे दृढ मंदर । नवि ऊढ नवि णेहेर अम्बर ॥ १५१ ॥
 जे सूतो निर्णि ललनां मंगें । ते शीयाले सहे हिम अंगें ।
 जे पड रस नव भोजन करतो । ते वनवासी अनशन धरतो ॥ १५२ ॥
 अति उन्हाले लू बहु वाजे । तरस थकी नवि पाखो भाजे ।
 दाभे देह तपे रवि मस्तक । तो पण न चले बोल्युं पुस्तक ॥ १५३ ॥
 त्रण्य काल कीधुं तप दुर्द्धर । तो पण मान न थाये जज्जर ।
 वरस दिवस पूगाते जे ह्वे । आबी भरत नम्यो पदतेह्वे ॥ १५४ ॥
 जपे भरत विनय मनें आशी । धूको मान हईयासुं जांणी ।
 मुक्त राखा पोहोवीतल केता । हवा हसें नेंछे अण देता ॥ १५५ ॥
 तुं मुनि मण्डन मक्त मद खण्डन ।

जनमनरंजन भव भय नंजन ।

कर करुणा करुणाभय सागर ।

मुक्त अपराध क्षमो गुण आगर ॥ १५६ ॥

भन थी शल्य तजो मुनिनामक । जिम प्रगटें केवल सुखदायक ।

इम समाबी चोल्या नरवर । जग वेगें पोहोतो कोशलपुर ॥ १५७ ॥

बाहुबली को केवल ज्ञान होना

धरयुं ध्यान हवे मुनि ज्यांरे । केवल प्रकट भयुं ते त्यांरे ।

भाव घरी अवियण सम्योक्षे । कर्म कलंक कला न दिऊधे ॥ १५८ ॥

जय-जय भुजबलि नमित नरामर ।

सकल कलाधर मुगति बधूवर ।

रचना काल

संवत् सोलहमें सतसहे । ज्येष्ठ शुक्ल पक्षे तिथि छहें ॥ १५६ ॥

कविवर चारें घोषा नयरे । अति उत्तम मनोहर सुषरे ।

ग्रन्थम जिनवर ते प्रासादे । सांभलीये जिन गान सुसावे ।

रत्नकीरति पदवी गुण पूरे । रचिया छंद कुमुद शशि सूरें ॥ १६० ॥

कलदा

उत्कट विकट कठोर रोर गिरि भंजन सत्पति ।

विहृत कोह संदोह मोहतम अथ हरण रवि ।

विजित रूप रति भए चारु गुण रूप किनुत कवि ।

धनुष पांचसै पंचवीषा वर उच्च तनुध्वि ॥ १६१ ॥

संसार सरित्पति पार गत,

विबुध वृन्द वन्दित चरण ।

कहे कुमुदचन्द्र भुजबली जयो,

सकल संघ भंगल करण ॥ १६२ ॥

इति श्री बाहुबली छंद बेशकरी समाप्त

ऋषभ विवाहलो

समरवी सरसति श्री मुक्त शुभमति,
 करो वर बाणी पसाउ लोए ।
 प्रथम तीर्थकर प्रादि जिनेश्वर वरणावूँ तास विवाहलोए ॥
 जे नर नारिए भासए सारिए,
 सांभलसे मन नीरमलीए ।
 पांमसे सुख धरां वांछित मनतएां,
 भवि भवि नवल वलीए ॥ १ ॥

उलाहो—

वलीय धरगुसुं बलांणीए जाणीए भूतले नामए ।
 सरस सीम सीहमणि धन वन अनुपम गामए ॥
 झलहले नीर भर्यां सरोवर, कमल परिमल महे महे ।
 हुंस सारस रमें रंगे, नदी नीरमल जलबहे ॥ २ ॥

चाल

नाभिराजा एवं मरुदेवी राणी :

देश कोशल वर तिहां सुरपति पुर,
 सम मोहे नगर रलीयां मरगुंए ।
 कोशला सुन्दर सतखणा मन्दिर,
 सुरे वरबाणुं फरुं गढ़ तरगुंए ॥ ३ ॥
 माणिक्य चोकए चतुर सुलोकए,
 बहुंटा चोराणी जिह्वां नद नवांए ॥
 भोग पुरंदर नर रूपे रतिवर,
 कामिनि कंठे कोयलपिय ॥ ४ ॥
 राज रंगे करे महिपति नाभि राजा नय भलो ।
 चउदमो कुचकर सकल सुखकर जगत जाखें गुण निलो ।
 तस पटराणी कविबर-वाणी चतुर मरुदेवी भली ।
 अति मधु-वाणी नपरबाणी रति हरायि रसकली ॥ ५ ॥ चाल ॥

स्वप्न दर्शन :

एके समे सुन्दरी पाखली सखी शरवरी,

सोलसपन रुद्धा नीरखती ए ।

पहिलोए गजवर मदभर गिरिवर,

सरषो देखीने मनि हरषतीए ॥ ६ ॥

बीजे घुरंधर तबल चपलतर धवल नवल ते मनोहरए ।

सहज सोहामणो पामीए बीजले हरी बरए ॥ ७ ॥

हसित पदमासने जेठी हस्त पदने सोहए ।

सपन चौथे लाछि दीठी जगत जन मन मोहए ॥

लहिकति लांबी फूल माला भवर गुंजारव करे ।

पांचमें परिधल मनमगाटमें नाशिकाने सुख करे ॥ ८ ॥

छबेन रजनीकर अभीभर सुखकर सोल कलाकरे छाजतोष ।

कुमुद विकासए दश दिशा भासए, छड्डेव रजनी राजतोष ॥

उगतो दिनकर सकल तमोहर कमल सोहाकर सातमेंए ।

मख युगल जलमाहि रमें झल झलते अबलोकिनुं आठमोए ॥ ९ ॥

अंभ पुरण कलश तबमें सरोवर दशमें भर्युं ।

लहे लहे लहेरि नीर निरमल, कमल केशर पीजर्युं ॥

लोल जल कल्लोल गाजे, बारि राशी अग्यारमें ।

बर हेम धबीड रयणजीडनुं सिहासण ते बारमें ॥ १० ॥

देव विमानए बिष निधानए,

रचना मनोरम तेरमेए ।

नाग भुवन जन जोतां हरे तनु मन,

समणे सोहामणे चउदमेए ॥ ११ ॥

राशी रतन लणी पंच वरण गणी,

जगमग करतीए पनरमेए ।

अनल अधूमए तेजे धग धूमए,

ऊंच शिखार्ये दीने सोलमेए ॥ १२ ॥

मरुदेवी जागी प्रिय कह्ये गद्द सपन फल पुछूं बली ।

नरपति कहे तब पुत्र जिनवर हसें मनखें होती रली ॥

सांभली राणी सफल आणी मलयती थारकि गद्द ।

नाना विगोदे दिवस जाता न जाणें हरेपत यह ॥ १३ ॥

हवि मास आषाढ तराणे बीजो वदि पक्ष ।
 तिथि बीज मनोहर बार विराजित कक्ष ॥ १४ ॥
 चतुर्यो अहमिदर अक्षतरीयो जिनराज, ।
 मरुदेवी कृषि धन्य सफल दिन आज ॥ १५ ॥

देवियों द्वारा माता की सेवा—

इन्द्रादिक आम्हा कीधूं गर्म कल्याण ।
 मति थोडी साठ सुकरीये रे ते वत्साण ॥ १६ ॥
 गया हरि निज थानकी मूँकी छपन कुमारी ।
 जिन माय तराणी सेवा करवा मनोहारी ॥ १७ ॥
 एक नित नहरावे, एक पखाले पाय ।
 एक बीजणडे चटकावे सटके नांखे वाय ॥ १८ ॥
 एक बेणी समारे, नयणे काजल सारे ।
 एक पीयल काढे एक अमरी सणगारे ॥ १९ ॥
 एक चोसर गूथे, एक घाणे तंबोल ।
 एक पगत पीले, कुकंम सुंदरंग रोल ॥ २० ॥
 एक धाछा अंबर पंहरावे सुरनारी ।
 एक नलवटि केशर तिलक करे ते समारी ॥ २१ ॥
 एक खण अरी सो देखाडे जिनमाय ।
 एक बेणवजोडे एक सुकटि गाय ॥ २२ ॥
 एक नवरस नाटक नाचे ने नव रंगे ।
 एक बात कथारस कहे सकल सहेली संगे ॥ २३ ॥
 इम हसतां रमतां पूगते नवमास ।
 मधूमासे जनम्यां पहीती सहुती आस ॥ २४ ॥

बाल दो

इम एष देवताओं द्वारा जलान्निके :

आसन कपीयां इन्द्रनाए, जाणीयो जिन तराणे जनम ।

नमो नमो जय जिरौंद ॥ १ ॥

इन्द्र एरावता गजि चक्षुया ए ॥ सावि चाव्या सुरवृंद ॥ नमो० ॥ २ ॥

मरुदेवि भदिर आंगरोए, आवीया सकल सुरेन्द्र । नमो० ॥ ३ ॥

इन्द्र आदेश लेई सचीइए, गई जिन मातने पास । नमो० ॥ ४ ॥

आपीया जिन जी इन्द्राणीइए, आपीया इन्द्र तें हाथि । नमो० ॥ ५ ॥
 इन्द्रे उसंगे बैसारीयाए, चामर छत्र सोहत । नमो० ॥ ६ ॥
 आगीले अमर विलासनीय, नाचती धरीय आणद । नमो० ॥ ७ ॥
 धवल मंगल बहु मंगल गावतीय, बाजतां बाजिअ कोण्डि । नमो० ॥ ८ ॥
 मेरु सिद्धरे पधरावीयाए, कौधलुं जनम विधान । नमो० ॥ ९ ॥
 क्षीर सागर तरंगे जले भरयाए, कनक कलश सुविसाल । नमो० ॥ १० ॥
 जिन प्रभु उपरि ढालीयाए, नहवण करयुं मनरंगी ॥ नमो० ॥ ११ ॥
 जय जयकार अमर करे ए, दीधलू वृषभ जी नाम ॥ नमो० ॥ १२ ॥
 अमल अंबर मणि मण्डनेए, अचीये करो सरागार ॥ नमो० ॥ १३ ॥
 रूप अनूपम पेखतीए, नयण नृपति नवि थाय ॥ नमो० ॥ १४ ॥
 जन्म महोत्सव हरी करीए, हयडले हरष न माथ ॥ नमो० ॥ १५ ॥
 मेरु धकी ते पाछा बल्याए, आविया जिनपुरी चन्द्र ॥ नमो० ॥ १६ ॥
 जिन प्रभु जननी नें आपीयाए, स्तुति करी गया सुरराज ॥ नमो० ॥ १७ ॥
 जनम महोत्सव जिन तरंगेए, हरषीया सूरि कुमुदचन्द्र ॥ नमो० ॥ १८ ॥

ढाल तीन

बाल कीडा—

आधी रे जोबा जइये, सखि मछदेवी मलहार रे ।
 गुण सागर रलियामणे, ए विभुवन तारणहार रे ॥ १ ॥
 सो भूरज सो चांदलो, स्यो रतिराणी भरतारे रे ।
 सुर सर किअर मोही रह्या,
 काई रूप अनूपम सार रे ॥ २ ॥
 सोहामणि सुर सुन्दरी, जिन हरषधरी डुलरावे रे ।
 भामण्डलि भामिनी, काई गीत मनोहर गावेरे ॥ सो० ॥ ३ ॥
 रमत करावें रंगस्थुं, सुरनारि के सिखगारे रे ।
 दे आशीस ते रुझडी, तुं जय जय जगदाधारे रे ॥ सो० ॥ ४ ॥
 दिन दिन रूपे दीपतो, काई बीज तरंगे जिम चन्दरे ।
 सुर बालक साथे रमें, सह सज्जन मनि आणंदरे ॥ सो० ॥ ५ ॥
 सुन्दर पवन सोहामणां, वोले बादुयडो बाल रे ।
 रिम किमवाजे धूधरडी, पगे चाले बाल मरालरे ॥ सो० ॥ ६ ॥

जीन सेहेजे विद्या सीखीयी,

काई सकल कला गुण जाणोरे ।

योवन बेस विराजतां, काई तेजे जीत्यो भाण रे ॥ सो० ॥ ७ ॥

एक समें सुत देखीने, नाभि राजा करे विचार रे ।

रिषभ कुंवर परणावीयो,

जिन सफल थाये अवतार रे ॥ सो० ॥ ८ ॥

त्यारि दोल्यां नाभि नरेन्द्ररे, तेडीय मन्त्री आणंदरे ।

मक मनें एहो उमाहरे, कीजे रिषभ विवाहरे ॥ ९ ॥

जो जो कन्या सुगुण सुहपरे, इम कही रह्या भूप रे ।

सचन चर्वे परधान रे, सांभलो चतुर सुजाण रे ॥ १० ॥

कछ भहाकछ रायरे, जेहनूं जग जस गायरे ।

यशोमति सुनन्दा की सुन्दरता :

तस कुंभरी रूपे सोहेरे, जोतां जन मन मोहेरे ॥ ११ ॥

सुन्दर बेणी विशाल रे, अधर नाशि सम भाल रे ।

नयन कमल दल छाजेरे, मुख पूरण चन्द्र राजे रे ॥ १२ ॥

नाक सोहे तिलनु फूल रे, अधर सुरंग तणूं नहीं मूल रे ।

थन धन कनक कलश उत्तंग, उदरे राजे श्रीवली भंग रे ॥ १३ ॥

बाहुलता सांघी लेह केरे, हाथे रातडि रुडी भल केरे ।

कुल कदली सरखी चंगरे, पगपानी अलतानो रंग रे ॥ १४ ॥

रूपे रम्य हरांघी रे, जेहने तोले रति पगनाबे रे ।

प्रथम यशोमति नाम रे, बीजी सुनंदा गुण अभिराम रे ॥ १५ ॥

तेहने रिषभ कुंभर परणावोरे, मोकली मांणस नरत करावो रे ।

एह विचार सभा मन भाव्योरे, ततक्षण वाह दूत चलावो रे ॥ १६ ॥

तेणो जइ विनवीया राय रे, वात सांभलतां हरष न माय रे ।

हरष्यां अतिउर परिवार रे, सज्जन कीधो जय जम जयकार रे ॥ १७ ॥

कीधूं विवाह बचन प्रमाण रे, चरनें आप्पुं कुलट दान रे ।

बेहेलो दूत जइने भाव्योरे, पाणी प्रहरण बधामणी लाव्योरे ॥

जय जय रत्न कीरति मुनिन्द्ररे, पाठ कमल रवि कुमुदचन्द्र रे ॥ १८ ॥

पाँचवीं छाल

हवि साजन सहू नहींतरीआ आख्या परवारे परखरीया ।
इन्द्र आख्या तेध सप्त सता, सूर गुरुनै साथे हसता ॥ १ ॥

विवाह मण्डप :

आवी इन्द्राणी सूरनारी, करे हास विनोद ते भारी ।
चारु मण्डप जन मन मोहें, बहू मूल चन्दु रूखा सोहे ॥ २ ॥
टोडे तलीआ तोरणा ते लहे के, हेम बंध तेजें बहु भलके ।
वेदी वारु करीने समारी, चोरी चित्र महा मनोहारी ॥ ३ ॥
दीशे चारु मोर्तिनि माला नाना रवणनो आक भभाला ।
रभा रोपि मण्डपनै आगलि, पवने फरके ध्वज अ बलि ॥ ४ ॥
हवे जमणदार सांमल ज्यो,

चित देह उरघा लोमा करज्यो ।

पील्या चोपा कंचोले भरीया सकटं बासहु नोहुं वरीआ ॥ ५ ॥
आंगणे मण्डप सुविशाल, धेरि क्यार पासे पटशाल ।
तिहां चतुर सोहासणी नारी, मांड्यां बेसणां ते महु हारी ॥ ६ ॥
मोटा पाटला नहों डग डगता, सोहेते कीया बेपासे लगता ।
मांडी आडणी रूपा केरी, थाली बावन पलनीभुनेरी ॥ ७ ॥
सूक्यां रजत कंचोलां आणी, सोहे सखर सुनानी चलाणी ।
चारु धिनय करि तेडावीजे, चालो चालो असूरन कीजे ॥ ८ ॥
देव पूजीया प्रथम अंचोलीं, आठ्युं साजनुं सहूमली सोली ।
वर चित्र पीसाम्बर पेहेरी, हाथे भारी सोहे रूपेरी ॥ ९ ॥
पग धोई करीनि लगते, बेटुं साजनुं ते यथा पुगते ।
क्यार पीज भली परि बेठी, प्रीसवामि पश्मनि पेठी ॥ १० ॥

विविध प्रकार के स्वादिष्ट व्यंजन :

आप्यां हाथ परयालवा नीर, प्रीसे नारी नवल पेहेरी धीर ।
सांजां सांजा तांजा धी गसतां,
झीणो फीणी बोठा परिमलता ॥ ११ ॥
देखीहे समीहे इहु ह्रीसे, वेसणीये जलेबी प्रीसे ।
रदि लागे धेवरनै दीठा, कोलहापाक पसासा मीठां ॥ १२ ॥

दुध पाक चण्णा साकरीया, सारा सकरपारा कर करीया ।
 कोटा मोति अमोदक लावें, दलीया कसमसीआ भावें ॥ १३ ॥
 अति सुरवर से बरुआं सुन्दर, आरोगे भोग पुरन्दर ।
 ग्रीवे पापड़ मोटा तलीया, मुरी आला अति उजलिया ॥ १४ ॥
 सीरे सरसीये राई दीधी, मेलहे करी अथाए कीधी ।
 आप्यां केर काकड़ स्वाद लागें,

लिबू जमतां जीभ रस जागें ॥ १५ ॥

नीलू आतीला छम काव्या, सूंकी तेल मरी भ्रम काव्या ।
 घी सोड़ुं धणूं करी छोल्या, लांबी चीरी करीने भोल्या ॥ १६ ॥
 रुडो राइये वधारते दीघो, रसनाइ भल्यो रसलीधो ।
 भगी आदाल्हो लवधरी, जमतां फली लागे सारी ॥ १७ ॥
 वृताकनुं शाक समार्यूं, राई तुम धरे हहि वास्यूं ।
 लावे सेवनु माईं सटके, खांड खोना भरि भूके लेखे ॥ १८ ॥
 भांमां करतां नामें घी खलके, भर्या डाबरिया ते भलके ।
 मांडा मोटी मोठि श्रीर पोली,

जमे रसिया कबोली कबोली ॥ १९ ॥

तली केढमीये वांकटाल्यो, मन गमते बडे आक वाल्यो ।
 लापसीये मन ललचाये, धारी पूरीये नूपति न धायो ॥ २० ॥
 रायभोग कमोदनो क्रूर, जीरा साल सुगंधनो पूर ।
 चोखी दाल सूव परिनी सोहे, टून सरषी पीली मनमोहे ॥ २१ ॥
 वाह चाट राईत भतमतां, कढी माहि मरीचमचमतां ।
 पांका कूट जीरा सुं वधारयां,

बीजां शाक ते आगलू हास्यां ॥ २२ ॥

सथरां वंही वातली आलां, धोलुआ भोहि सवण जीरालां ।
 दुध कढी आंचलाणी भरीया, गले घट घट ते ऊत्तरीयां ॥ २३ ॥
 चवु लीषां पछे सह साये, मुख शुद्ध करी सली हाथें ।
 आव्या मांडवे साजनुं हसता, वारें वारें वषाण ते करता ॥ २४ ॥
 खेर सार सोपारी ते रंग, पानएलची सखर लविंग ।
 माहि मुंक्कू कपूरख रास, जिन आवे मोटे रुडो वास ॥
 पछे आड अनूएम कीधी, नाभि राजाये आग्यना दीधी ॥ २५ ॥

छठवीं छाल

जिन इन्द्राणीये नह्यारवीया, पछे कीधोरे बरनें सिरणारके
बर बार सोभतो ॥ १ ॥

आदिनाथ का श्रृंगार

माथे रेखूँव भर्यो भगो, रुहुं नलबटेरें सोहे तिलक अपार के ॥ २ ॥
आंखिरे काजल सारीआं, गालें कीधलुं रे रक्षानु इंधाण के ॥ ३ ॥
कान रे कुंडल झलकतां, तेजे जितीआरे पूरण शशि भाण के ॥ ४ ॥
काजु-प्रबंध विराजता, हृदये लहेक तोरे मणि मोतीनो हार के ॥ ५ ॥
हाथें बांधी सडी राखडी, आंगलीये रे घाल्या वेढये च्यार के ॥ ६ ॥
केडें कगीदोरो बेसतो, पगे झांझरे करे रण झणकार के ॥ ७ ॥
सेहे जे रूप सोहामणू, बलीये हस्थारे बहु भूषण सार के ॥ ८ ॥
रूपेरे त्रिभुवन मोहीऊं, हवे करीयेरे बनी धरुं सुं बख्ताण के ॥ ९ ॥
इंद्र अमरी मलुं साजनुं, आडि चांदलोरे करे सजन सुजाण के ॥ १० ॥
केशरनां कर्यां छांटणां, बली छाटेरे ते गुलाबनां नीर के ॥ ११ ॥
फोफल पान आये धणां, मरदनी यारे नाखे शीतल समीर के ॥ १२ ॥

सातवीं छाल

इंद्र अणाव्योरे घोडली सोहे ।

पंचवरण बार अंग ॥ रिषभ घोड़े चढ़े ॥ १ ॥

विवाह के लिए धोड़ी पर चढ़ना

जोवा मलीया छे आभुर तर बृन्द । रिषभ घोड़े चढ़े ॥ २ ॥
कनक पलाण विराजतुं, जेर अन्ध अनोपम तंग ॥ रिषभ ॥ ३ ॥
चोकड ले चित्त चोरीयुं, गेले रण झणकतो चंग ॥ ४ ॥
रंग विरंग सोलीं धरणी, जग मोहे ते वाग अमूल ॥ ५ ॥
रत्न जडयुं मधीआ रड्युं वचे झलके सुं नामा फूल ॥ ६ ॥
शीस भरीरे सोहासणि, सोहे सुन्दर श्रीफल हाथ ॥ ७ ॥
इन्द्र प्रभूकरि लीधला, घोड़े सटक चढ़्या जगनाथ ॥ ८ ॥
माथेरे छत्र विराजतुं, हरि ढाले चमर बेहु पास ॥ ९ ॥
लुंग उतारति वेहेनडी, सहु विचन गया ते नासि ॥ १० ॥

एरावण सण्णारियो, चाल्यो आगत भाक भमाल ॥ ११ ॥
 कोटेरे घटारण कति बाजे, धम धम धुधर माल ॥ १२ ॥
 अमर अमरी नाचे रंगसु, माहो माहि करे धणी केलि ॥ १३ ॥
 गंधर्व राग करे घण्टा, बाजे ताल-परबालज मृदंग ॥ १४ ॥
 बांशलि बेरा मनोहर बाजे नाना छन्द सुरंग ॥ १५ ॥
 ढोल दमां मारे गड़ गड़, रुडा सारणाइ नासाद ॥ १६ ॥
 बाजे पंच सबद ते सोहांमणा, आहे तबलन फेरीना नाद ॥ १७ ॥
 भूंगल मेरी मदन भेर, ते सांभलतां सुख थाय ॥ १८ ॥
 भाट भणो बीरदावली, र्यारि दान अनेक देवाये ॥ १९ ॥
 रंग किरंग वे साजनुं, तीहं सावे लांनो पार ॥ २० ॥
 इम उछव करळाते घण्टो, वर आधीयो तोरण बार ॥ २१ ॥
 दोखी उलट मन मों घरे, बहु भव्य कुमुदचन्द्र राय ॥ २२ ॥

आठवीं ढाल

विवाह

मोड हन्नाणीए बांधीयोए, नीमालीरे पोकीआ अरधीया देव ।
 साहेलीयेणों कीया आरधीया देव,

नाफ साही वर निरखीयोए ॥ १ ॥

घाट घाल्यो तत क्षेव, माहि दामाहि वेसारीए ॥ २ ॥

अन्तर गडधरं जाम, कन्या बेसारिए बीजटिए ॥ ३ ॥

लगन वेला थड नम, सकल आचार मुखें करयोए ॥ ४ ॥

काली गांठी सांवधान हस्ते मेला बह्वोए ॥ ५ ॥

कीधलां अवर विधान, देव बाजिअ ते बाजीयाए ।

फुलनी वृष्टि अपार गीत गाये सुन्दरी ए ॥ ६ ॥

सुर करे जय. जयकार, चोरीये रीति सहू कीधलीए ।

वरतीआं मंगल च्यार, वित्तम वारु कस्यो जुगतिसुं ए ॥ ७ ॥

आपोयां अढलिक दान, लोक व्यवहार ते सहू कर्खो ए ॥ ८ ॥

सज्जन दीधलां मान, अधिक आडम्बर आवीआ ए ॥ ९ ॥

बहुयर आपरो घेरि, मनना मनोरथ सहू फल्याए ॥ १० ॥

उछव थयो भलिपेरि, इन्द्र उछव करि घरि गयाए ॥ ११ ॥

मन माहि हरष न माय हास विनोद करे घणाए ॥ १२ ॥

राज्य करे जिन राय, साहेलीये कीया, अरधीया देव ॥ १३ ॥

नवीं छाल

आदिनाथ का परिवार

पाले अनूपन न्यायरे जोन्हा सेवे सुरनर पाय ।
 त्रिणि भुवन जस गायके, अभिनवो राजीयोरे ॥ १ ॥
 भोगवे मनोहर भोगरे, नाना विध सुख संयोग ।
 वन वन काहे छे सह लोग के, जगे जश गाजियोरे ॥ २ ॥
 यसोमतीये जाया पुत्ररे भरतादिक सो सुचित्र ।
 ब्राह्मी तनया पवीत्र के, जगमांहि जाणीयेरे ॥ ३ ॥
 बाहुबली बलवन्त रे, सुन्दरी बेहनें सोहंत ।
 जनम्यो सुनन्दाये संतके, रूप बरवाणीयेरे ॥ ४ ॥
 सेवे त्रिभुवन सर्व रे मन मांहि न धरे गर्व ।
 आशी लाख पूरब के, व्येल्या भोगसुं ए ॥ ५ ॥

चिन्तन एवं वैराग्य

एक समयते भूपरे, दीखी नीलजश रूप ।
 जाणी अशिर सरूप के, मन धर्युं योग स्युं रे जी ॥ ६ ॥
 धिग धिग एह संसार रे, बहु दुख तराये भण्डार ।
 जुठो मल्यो सह परिवार के, को केहुं नहीं रे ॥ ७ ॥
 राज्ये नहि भुभ काज रे, सुंकीजे सेना साज ।
 भोगे त्रपति न आज के, लग रोवनी सहारे ॥ ८ ॥
 क्षण क्षण छुटे पायरे, योवन राख्युं नवि जाय ।
 स्युं कीजे सहाराय के, तराये पदवी मलीरे ॥ ९ ॥
 कालें पडसे कायरे, नहि रासे बापने माय ।
 न यसें कोइ सहाय के, मरक जतां वली ॥ १० ॥
 नाना योनि भण्डार रे, समीयो भव धरी एक बार ।
 न लखो धर्म विचार के, लोभ न पर हर्यो रे ॥ ११ ॥
 नहीं पालो ब्रत आचार रे, जीव कीधा पाप अपार ।
 विषय वनुधो गमार के, हा हुतो फर्यो रे ॥ १२ ॥
 हंस धरी मन वैराग रे, कश्यो मोह तराये परित्याग ।
 कोसुं लाग न भाग उदासी जिन भयो रे ॥ १३ ॥
 भरत ने आप्युं राजरे, महिपतिनुं मुक्त्युं साज ।
 चरित्र लेवाले काज के, अखय बड़े भयारे ॥ १४ ॥

नस्वी हाल

तपस्या

चार हजार राजस्युं ए, माहंतहे लीधलो संयमचार ।

सुगुं सुन्दर, लीधलो संयमभार ॥ १ ॥

राज मुक्युं त्रण लोकनुए ॥ मा ॥ सफल कीधो भवतार ॥ सु ॥ २ ॥

आवीआ इन्द्र आणंद सुंए ॥ मा ॥ सुर करे जय जयकार ॥ सु ॥ ३ ॥

जय जग जीवन जग धरणीए ॥ मा ॥ जय भय सगर तार ॥ सु ॥ ४ ॥

प्रीजुं कल्याणक तपत तरुं ए ॥ मा ॥

करि गया हरि सुरलोग ॥ सु ॥ ५ ॥

संयम लेइ छमासनोए ॥ मा ॥ लीधलो स्वामीये योग ॥ सु ॥ ६ ॥

पारणें भायरें उतार्याए ॥ मा ॥ कोइ न जाणें आचार ॥ सु ॥ ७ ॥

इम करसां छह महीना गयाए ॥ मा ॥ नहीं मलें शुद्ध बाहार ॥ सु ॥ ८ ॥

एकदा बेचरी ने गयाए ॥ मा ॥ अयेसां राधने धामि ॥ सु ॥ ९ ॥

आहारनी प्रगति दीठी भली ए, तिहां रक्षां त्रिभुवन स्वामि ।

एक बरसें कर्युं पारणुं ए, ईश्वरस अभोय समान ॥ १० ॥

आहार

लेइ आहार जिनवरे कर्युं ए ॥ मा ॥ त्यजलुं अक्षयदान ॥ सु ॥ ११ ॥

श्री जिनवर पछे बने गया ए ॥ मा ॥ योग लीयो त्रणकाल ॥ सु ॥ १२ ॥

बार प्रकारे तप करे ए ॥ मा ॥ जिम आहारनुं यू गति दीठी ॥ १३ ॥

तिहां रक्षां त्रिभुवन स्वामी सू टल कर्म जंजाल ॥ १४ ॥

ध्यान घरे अति नीमलुए ॥ मा ॥ अचलमन मेरु समान ॥ सु ॥ १५ ॥

केवल्य प्राप्ति

घातीया कर्मनो क्षय करीए ॥ मा ॥ अपनुं केवल ज्ञान ॥ सु ॥ १६ ॥

समोसरण अमरें रक्ष्युं ए ॥ मा ॥ बार सभाने सोहंत ।

धर्म उपदेश दे उजलोए ॥ मा ॥ सुरनर चित मोहंत ॥ सु ॥ १७ ॥

निर्वाण

विहार करीनें संबोधोयाए ॥ मा ॥ अव्य प्राणी तणा वृं ॥ सु ॥ १८ ॥

अचल अष्टापदे जइ चढ्याए ॥ मा ॥ केवली आदि जिनेंद्र ॥ सु ॥ १९ ॥

तिहां जई स्वामीये टालीयुंए ॥ आकता कर्म तु नाम ॥ सु ॥ २० ॥

निर्वाण कल्याणक सुर कहंए ॥ मा ॥ पामीया मुगति वर ठाम ॥ सु ॥ २१ ॥

रत्ननाकाल एवं रत्नना स्थान :

संवत् सोल अष्टयोतरे ए ॥ मा ॥ मास आषाढ़ धनसार ॥ २२ ॥
 उजली बीजरलीयां भरीए ॥ मा ॥ अतिभलोते शशिवार ॥ सु ॥ २३ ॥
 लक्ष्मीचन्द्र पाटें निरमलाए ॥ मा ॥ अभयचन्द्र मुनिराम ॥ सु ॥ २४ ॥
 तस पदे अभयनन्दि गुरुए ॥ मा ॥ रत्नकीरति सुभकाय ॥ सु ॥ २५ ॥
 कुमुदचन्द्रे मत उजलेए ॥ धीधरा नगर भक्तारि ॥ सु ॥ २६ ॥
 शिवभ विवाहलो कीधलोए ॥ मा ॥ सीखसेजे नर नारि ॥ सु ॥ २७ ॥
 तेहने घरें आखंदह स्येए ॥ मा ॥ पोहोचसे मनतरी आभ ॥ २८ ॥
 स्वर्ग तणार सुख भोगविए ॥ मा ॥ पामसे मुगति विलास ॥ सु ॥ २९ ॥

इति ऋषभ विवाहलो समाप्त ।

नेमिनाथ का द्वादश मास

आषाढ मास :

(३)

मास आषाढ सोहामणो जी घन वरसे घोर अंधकार जी ।
नीदये नीर बहे घणघ वास मोर करे किंगार जी ॥ १ ॥
मंदिर आको मोहन मुक्त उपरि धरिय सनेह जी
एकलडी धरि किम रहुं माहरी पल पल छीजे देहजी ॥ २ ॥

श्रावण मास :

श्रावण नाखे सरवडा तयारि धर धन धूजे शरीर जी ।
राति अंधारि भूरतां किम करो मनि धरी धीर जी ।
मंदिर ॥ ३ ॥

भाद्रपद मास :

भाद्रपदो धरि गाजियो लवे बीजली वारो वार जी ।
त्यारि सांभरे वारो वार जी तयारि सांभरे प्राण आधार जी ॥ ४ ॥

आश्वीन मास :

आसो दिवस सोहामणो, नहीं कादवनो लवलेश जी ।
वाटलडी रलिया मणी, किम नादिया नेम नरेश जी ॥ ५ ॥

कार्तिक मास :

कातिय दिन दिवालिना सखि धरि-धरि लील विलास जी ।
किम कहं कंत न आवियो ह्वेस्युं करिये धरि वासि जी ॥ ६ ॥

मंगसिर मास :

मांगसिरे मन नवि रहे, किमकरि मोकसू संदेस जी ।
मनि जाणूं जे जई मिलू, धरि योगण करो वेस जी ॥ ७ ॥

पौष मास :

पौसउ सबडे धरणी पीउडे मांगयो तप सोस जी ।
कोणस्थुं रोस धरी रहूं, करमने दीजे दोस जी ॥ ८ ॥

माघ मास :

माहि न आणी मोहनी, किम निओर थया यदुराय जी ।
प्रेमें पधारो पम्हरण, हूं लागु हूं कालन पाय जी ॥ ९ ॥

श्रावण मास :

कागुल केसू फूलियो नरनारी रमे वर काग जी ।
हास विनोद करे धरणा, किम नाहें धर्मो बेराग जी ॥ १० ॥

चैत्र मास :

कोयलडी टहूका करे, फल लहे श्रम्बा डाल जी ।
चैत्रे चतुर चित्त चालिये, किम तजीइ अबला काल जी ॥ ११ ॥

वैशाख मास :

वैशाखें तड़को पड़े लयुं, दाफे कोमल काय जी ।
ते माटियाड धारिये एह योवन्या दिन जाय जी ॥ १२ ॥

जेठ मास :

नीट जेठोडी नखि रहे, धरि पंथियडा सह आवे जी ।
तेमि न आव्या किम कहं, मुन्हें धरियण न सुहावे जी ॥ १३ ॥
उजल जिन जर चह्या, रह्या ध्यान विषय चितलायजी ।
जय जय रत्नकीर्ति प्रभु, सूरि कुमुदचन्द्र बलि जाय जी ॥ १४ ॥

(४) नेमिश्वर हमची

श्री जिनवाणि मनि वरुं रे, आपो बचन विलास ।
नेमिकुमर भुण गायस्युं तो, हैडे धरी उल्हास ॥ हमचडी ॥
हमचडी हलि हेलि रे, धरि करिये नवरंग केलि ।
राजमती वर नेमिकुमरते, गातां मनि रंग रेलि रे ॥ १ ॥
हमची हमची सहिय साहेली, आवो करि सिंहागार ।
समुद्र विजय सुत रंगे माइये, जिम तरीये संसार रे ॥ २ ॥
सोरठ देस सोहामणी रे, वन बाडी आराम ।
गोधन कलि करता दीसे, रधिया रुडां गांम रे ॥ ३ ॥
निरमल नीर भर्या ते सरोवर, फूल्यां कमल अपार ।
परिमल ना जीवा ते भमरा, उपरि करे गुजार रे ॥ ४ ॥
सुन्दर सोहे सारडां रे, बगला बेठा टोले ।
हंसा हंसी केलि करता, चकवा चकवी बोले रे ॥ ५ ॥
वाटलडी रलिया भरी रे, पंथियडा पंथि चाले ।
सचल सीस सोहामणी तो, असागमतुं नहीं चाले रे ॥ ६ ॥
ते माहि नवरंगी नगरी द्वारवती वर ठाम ।
गढ मढ मंदिर मालियडां, तो निरखता अभिराम रे ॥ ७ ॥

जेहनें पासें सागर राजे, गाजे कुल कल्लोल ।
 मणि मोती पर वाली भरीयो जल चरना भक भोल रे ॥ ८ ॥
 राज करे तिहां राजीयो रे, रूपे रति भरतार ।
 साभलियो बलियो अति, कलियो पातलियो सकुमाल रे ॥ ९ ॥
 त्रण्य खण्ड नो रांगो जांगो, नारायण तस नाम ।
 बलभद्र बन्धव मनी सोहे, सोभागी गुण घांम रे ॥ १० ॥
 नेमि कुंवर स्युं प्रेय परां, कला १० हःसु ।
 अह निशि गीत विनोद बहता, धडियन मुंके पासु रे ॥ ११ ॥

बमक्रीडा के लिए खाना

तेह तरणी रमणी सुर रमणी सारखी सोलह हजार ।
 तेहस्युं हास विलास करता, सफल करे अवतार रे ॥ १२ ॥
 एहेवे शरद समे ते आव्यो, खेले अवला बाल ।
 निरमल कमल-कमल बन सोहे, बोले बाल मराल रे ॥ १३ ॥
 त्यागि नेमि कुंवर कान्हूयडो, बसग-हलधर हाथि ।
 सत्यभाभा रा हीने रुखमणी, अंतेडर सहुं साथे रे ॥ १४ ॥
 वन क्रीडा करवाने चाल्या, बाटे रमता रहेता ।
 मनरंगे मनोहर नांमे, कमला कर जई पुहता रे ॥ १५ ॥
 भटकेस्युं भीलीनि कलिया नेमिकुवर ने पहेला ।
 मोतियडु नाखी ने पहेर्यां बीजा अंबर हेलारे ॥ १६ ॥
 हंसता हंसता टोलि करता नेमिकुवर महाराजे ।
 पोतीयडुनी चोवा आप्पुं सत्य भामा ने कांजेरे ॥ १७ ॥
 ते सो रीस करनी बोली, सत्यभाभा अति गहेली ।
 एवहुं हांसू न कीजे मभस्युं हू पटराणी पहेली रे ॥ १८ ॥
 जेणे सारिण धनुष चढाव्यु, हेलो शंख बजाइयो ।
 नागतणी सेजडिये सुतों, नागिनहीं बीहाक्यो रे ॥ १९ ॥
 तेहनूं पोतीयडु नीचौऊं अवर न जाणूं कोई ।
 मोटा सरिसूं मान न कीजे, मनस्युं विमासी गोई रे ॥ २० ॥
 नेमिकुमारे सांभलीयूं रे, तेहनूं वचन अटारूं ।
 मनस्युं एह विचार कर्यो जी, एहनुं मान उतारो रे ॥ २१ ॥
 तिहाँ थकी ते पाछा बलिया आव्या नगर मभारि ।
 नेमिकुमार आयुधशालाईं पेठा मच्छर भारि रे ॥ २२ ॥

नेमिनाथ द्वारा शस्त्र बल दिखाना

सटके धनुष चढाव्यु लटके, नाग शय्याइं सूता ।
 पूर्यो शंख निशंक करीने, लोग कर्या भय भूता रे ॥ २३ ॥
 तरु कटू कडीया भोपुर पडिया गड मोटा गड गडिया ।
 भट भड भडिया भय लड थडिया, दो गति दड बडिया रे ॥ २४ ॥
 गिरि थर हरिया फरि सल सलिया कायर ते कणि करिया ।
 सुर खल भलिया सल रवि चलिया, सायर ते भल हलियारे ॥ २५ ॥
 गुहा गारु गारेर मोटा, लचकल सडला नाटा ।
 हुरा हुराता हुरार ते छुटा माता मयमल नाटा रे ॥ २६ ॥
 राज सभाई बैठो राजा, साभलि ते कल मलियो ।
 नगर विष कोलाहल करीयो कोण महीपति बलिगरे ॥ २७ ॥
 तेहनूं वचन सूरणी बलभद्रे बल तो उत्तर दीधो ।
 सत्यभाभा ना वचन थकी ए, नेमिकुमारे कीधु ॥ २८ ॥
 त्याहारि ते मन माहि संवयो कीधो मनस्युं बिषार ।
 राजा ग्रहमारुं लेस्ये बलियो, करस्ये भान उत्तर रे ॥ २९ ॥
 बलता हलधर बंधव कोल्या ए राजेस्युं करस्ये ।
 वर वेराग तरु ए कारण, पामीय संयम लेस्ये रे ॥ ३० ॥
 ते सामलीने मनस्युं रचीयो संयम लेणा संच ।
 उग्रसेन कुंभरिस्थुं कीधो, तस ह्रीह्वा परपंचारे ॥ ३१ ॥
 धरि आवीने मण्डप रचियो सज्जन सादर करीया ।
 छप्पन कोडि यादव नो हतरिया परिवारि परिवारिया रे ॥ ३२ ॥
 जमणवार कीधो ते युग ते, संतोख्या नरनारी ।
 जान जवाने काजि केहवी, नांदरणी सिरागारि रे ॥ ३३ ॥

राजमती का सौन्दर्य

हरे कूठडी मिने जूठडी, बोले मीठडी वांणी ।
 विद्रुम उठडी पल्लव गोठडी, रसनी कोटडी वरवाणी रे ॥ ३४ ॥
 सारंग वयणी सारंग नयणी, सारंग मनी ध्यामा हरी ।
 लंकी कटि भमरी वंकी, शंकी हरिनी मारिरे ॥ ३५ ॥
 सिधडलो सिद्धरे भरिगो, केसर टीला करिया ।
 पानतणी बीडीये मुखडा, भरिया ते रंग बरिया ॥ ३६ ॥
 भग मग कोनि भालि भवूके, उगनिया नग जडिया ।
 अबला सबला नाग बलाया, सुंदर सुनें घडिया रे ॥ ३७ ॥

सार पदकडी कडु कोठडी, मोटडी फुली फावे ।
 सेस फूलनू मूल न थापे, सिधडलो सोहावेरे ॥ ३८ ॥
 भूमकडु भूमके ते भांभु, जोता मनडु मोहे ।
 वारु बीटी मिली अंगूठी नल बट टोली मोहेरे ॥ ३९ ॥
 अंपकली पीला रत्तलिया मादलिया मचकाला ।
 मोली केरो हार मनोहर भूमकडा लटका लारे ॥ ४० ॥
 राखडली रदियाली जालि जोता हैडे हरथी ।
 खीटलडी भीटलडी राखी, खंते, जोवा सरीखी रे ॥ ४१ ॥
 हाथे चूडी रंगे रुडी, काकरण चांगण चोटा ।
 बाहोडली सरीखा बेहरखडा, मलिया बलिया मोटा रे ॥ ४२ ॥
 कर करि यालिका रेली रे, मोरली मोहन गारी ।
 माणिक मोली जडी मनोहर बेसरनी बलिहारी रे ॥ ४३ ॥
 धम धम धम के घुघरडारे, बीछीमडा ते बाजे ।
 रमभम रमभम भांभर भमके, का बीषल के राजे ॥ ४४ ॥
 किसके पहेरण पीत पटोली नारी कुंजर चीर ।
 किसके आछां छापल छजे सालू पालव हीर रे ॥ ४५ ॥
 किसके अमरी रंग सुरंगी किसके नीला कमवा ।
 किसके धुनडियाला चमके किसके राता सरिषा रे ॥ ४६ ॥
 किसके पहिरण जाद रचायो किसके चोली चटकी ।
 किसकी अतलस उखी उपे, रंग तणो ते कटको रे ॥ ४७ ॥
 किसका जरणा घुघरिमाला, किसका ते बधीयाला ।
 किसका कमल बना कनियाला, किसका ते सतियालारे ॥ ४८ ॥
 मयगल जिम मलयती वाले, कोयल सादे गाये ।
 धवल मंगल दीये मनरंगे, मुनि जनवि चलावे रे ॥ ४९ ॥

भारत का प्रस्थान

हयवर गयवर रथ सिणगार्या, पायक दल नहीं पार ।
 बाकी वहेले हरि जोतरिया, चंग तणो भणकार रे ॥ ५० ॥
 पालखडी चकडोल सुखामण बेठा भोग पुरन्दुर ।
 चात्नी जान कर्यो आडंबर, मलिया सुरनर किन्नर रे ॥ ५१ ॥
 समुद्रविजय सिध देवी राणी, हरि हलधर सहु माहे ।
 नेमिकुंभर ने परणावानां भरिया ते उछाहे रे ॥ ५२ ॥

नेमिकुंवर हाथीयडे चढिया, माये खुप विराजे ।
 काने मणि कुंडल देखीने, वीर जनीकर लाजे रे ॥ ५३ ॥
 ब्रेनडली बेठि ते पासैं भाभणडां उतारे ।
 रूप कला देखी ने जेहनी, रत्तिपति हैडे हारे रे ॥ ५४ ॥
 गाये गीत सोहामणि रे, दीये वर आणीस ।
 जय जगजीवन वर जय जय नायक, जीवो कोडि धरीस रे ॥ ५५ ॥
 धन धन मात पिता से धन धन, धन धन यादव वश ।
 जिहां जम मंडसु भन भय न्नडन, अबतरिया जिन हंस रे ॥ ५६ ॥
 ढमके डोल दमामां मद्दल, सरणार्ई वाजंत ।
 पंच शब्द भेरी न फेरी, नादि नभ गाजंत रे ॥ ५७ ॥
 वार्ति हास विनोद करंता, चाल्या यादव वृंद ।
 बहेलां जई जूनेगढ पहोलां, सज्जन मन आसंद रे ॥ ५८ ॥
 उग्रसेन आदरस्थुं साहमूं कीचे ते मल भासे ।
 लाजंते वाजंते थारू पहोता ने जनबासे रे ॥ ५९ ॥
 धसम सती घाई ते त्याहारि साये सहीयर बाल्ही ।
 गोखि चढी ते बन जोवाने, राजामतीमनि ह्याल्ही रे ॥ ६० ॥

बरास देखने की असुकता

राजमती बोली ते त्याहारि, सांभलि सहीयर मोरी रे ।
 जो तुं नेमिकुंवरि देखाडे, हूं बनिहारि लोरी रे ॥ ६१ ॥
 घामर छत्र टलेवे पासैं रूपे मोहन गारो ।
 हाथिडा उपरि जे बैठो उपेलो वर ताहरो रे ॥ ६२ ॥
 राजीमती ने वचन सुणीने, साहमूं जोबा लागी ।
 नेमिकुंवर वर देखि हरषि, प्रेमे मनस्थुं जागी रे ॥ ६३ ॥
 त्यारि ते तेडाची माये राजीमती न्हवराची ।
 सणगारी सहने मन गमती, रूपे रंभ हराची रे ॥ ६४ ॥
 तेहवे तेज मणो आंखडलली बहेल कदेतां मटकी ।
 राजीमतीना मन मांहे ते वारे वारे सटकी रे ॥ ६५ ॥
 जेहवे लगन समय थमो जांखी, हरषे सहु हल फलिया ।
 नेमिकुंवर परणका चढिया, साहमासोनी मलिया रे ॥ ६६ ॥
 ते देखी संका ता चाल्या, मन मांहि बल चलिया ।
 आभलि श्री गाडेगां गरता, रडता पञ्चुआं सांभलिया रे ॥ ६७ ॥

बाडि भरी राख्या ए स्याहने, पूछुं ते जग दीशों ।
 तह्य गोखनें कारणि स्वामी, ते सघाला मारीसेरे ॥ ६८ ॥
 तेहनूँ वचन सुणी ने स्वामि, मन माहि कल मलिया ।
 धिन धिग परणे वने माथे नेमिजी पाछा बलिया रे ॥ ६९ ॥

नेमिनाथ का बेराग

मन माहि बेराग धरीने, मूक्यों सह संसार ।
 नेमिकुयरे संयम लेवाने, जई चडिया गिरनारि रे ॥ ७० ॥
 सहसा वन मां संयम लीधू, कीधू आतम काज ।
 त्वारि तप कल्याणक कीधु आख्या ते सुरराज रे ॥ ७१ ॥
 कोलाहल बाहिर सांभलिने, सुंसुं करती टठी ।
 पूछी सजनी बल तुं बोली, नेमि गया गिरि रुठी रे ॥ ७२ ॥
 तेडे वचने पुहवीतलि, लोटे जंग अछाडे ।
 हेहताडे बोली फाडे, रडती गडि आडेरे ॥ ७३ ॥

शाबुल का विलाप

रोसैं हाथ एकावल मोडे, चटकैं चूडी फोडे ।
 कंकण मोडे मन मचकोडे, आपण पूँव छोडेरे ॥ ७४ ॥
 केमें अणगल पाणी नाख्यां, के तथ चोडी डाल ।
 साधु तणी निद्या में कीधी, जूठा दीधा भाल रे ॥ ७५ ॥
 के में रजनी भोजन कीधां, के में उबर खाधा ।
 के में जीव दया नहीं पाली, वन माहि दव दीधा रे ॥ ७६ ॥
 के में बहुयरे बाल विछोह्यां, के में परधन हरियां ।
 कंद मूलनां लख्यण करियां कि मे व्रत नहीं धरिया ॥ ७७ ॥
 के में कूड़ा लेखः कीधां, खोटीं माया मांडी ।
 छाना पाप करयां ते माटे, नेमि गया भक्त छांडी रे ॥ ७८ ॥
 हम कहेती लडखडती पडती, अडबलती बल बलती ।
 अंग बलू रे मनस्युं भूरे, आखि आंसू डसती रे ॥ ७९ ॥
 लावी नहीं बोले बाला रातिपण नवि भूये ।
 मनुस्युं भूख तरस नहीं वेदे, जिन जिन जपति रोवे ॥ ८० ॥
 किम करी दिननि गमस्युं पीडडा तुम पाखि कम करस्युं ।
 जिम जल पाखे भाछलडी तिम बिलखी थइने मरस्युं रे ॥ ८१ ॥
 बाडि बिना जिम बेलि न सोहे, अर्थ बिना जिम वाणी ।
 पंडित विन जिम सभा न सोहे, कामल बिना जिम पाणी रे ॥ ८२ ॥

राजा विण जिम भूमि न सोहे, चंद्र विना जिम रजनी ।
 प्रीड़डा विन जिम अचला न सोहे, सांभलि मोरी सजनी ॥ ८३ ॥
 ते त्याहिरि सजनीं ते बोली शोक न कीजे गहेली ।
 एह बी रुढो वर परणावूँ उठिखूसो था बहेली रे ॥ ८४ ॥
 राजीमती बल दीते बोली, फटि मुंडीस्थुं बोली ।
 नेमि विना नर संधला बीजा, माहरे बंधव तोले रे ॥ ८५ ॥
 सहीयर सहू समभावी थाकी ते मनमा नवि आवे ।
 उजल गिरि जई संयम लीघु, ते संधलों जगि जाणो रे ॥ ८६ ॥
 राजीमति ते व्रत पाली ने, पहोती स्वर्ग दुवारी ।
 नेमि जिनेश्वर भुगति गया ते, कुमुदचंद्र जयकारे रे ॥ ८७ ॥

भट्टारक श्री कुमुदचंद्र कृत श्री नेमिश्चर हमची गीत समाप्त

राग माझणी गीत :

(५)

गीत

नेमजी ने बालो रे भाई, जादव जीने वालो रे भाई ॥
 हुं तो योवन भरि किम रहेस्युं रे, बलि विरह तरां दुख सहेस्युं रे ।
 वरि कोरा थकी सुख लहेस्युं रे, हसी बात कोह्ले जइ कहेस्युं रे ॥ १ ॥
 तहो जूजं जूजं मनस्युं विचारी रे कोई नारि तजं निरधारी रे ।
 पूछो बाटे जतां नर नारी रे, कोई कहेस्ये ए बात न सारी रे ॥ २ ॥
 तुं तो प्रणय भुवन केरो रांणो रे, रखेरी सहैयासां आणो रे ।
 अहस्युं एवढु तहो तांणो रे, अहो दासी तह्यारखी जाणो रे ॥ ३ ॥
 जूज आवे छे यादव राय रे, बली रोवे शिवा देवी माय रे ।
 बिलखी थई पूठई धाय रे, वछ तुम बिना में न रहे वाय रे ॥ ४ ॥
 तहो मोहन दीनदयाल रे, तहो जीवन दया प्रतिपाल रे ।
 किम छांढों छो अचला बाल रे, शरि वाते देसे महुगाल रे ॥ ५ ॥
 तहो जग जीवन आधार रे, तहो मन बांछित दातार रे ।
 ताहरा गुंणानो न लाभे पार रे, ताहरा वचन सुधारस सार रे ॥ ६ ॥
 ताहरा सुरतर प्रणमें पाय रे, ताहरा नाम योगीश्वर ध्याय रे ।
 ताहरा गुण इन्द्रादिक गाय रे, सारी कुमुदचन्द्र बलि जाये रे ॥ ७ ॥

राग सारंग :

(६)

सखी री अब तो रह्यो नहि जात ॥
 प्राणनाथ की प्रीत न विसरत, धनु क्षुनु क्षीजत गात ॥ सखी री० ॥१॥
 नाहि न भूख नहीं तिसु नाग, परहि नरहि पुरखात ।
 मन तो उरभ रह्यो मोहन सु सोबन ही सुरभात ॥ सखी री० ॥२॥
 नाहि ने नींद परती निलिवासर होत बीसुरत प्रात ।
 चन्दन चन्ध सजल नलिनीदल मंद मरुत न सोहात ॥ सखी री० ॥३॥
 गृह आंगन नु देख्यो नहीं भावत दीन भई विललात ।
 विरही बाजरी किरति गिरि, गिरि लोकन ते न लजात ॥ सखी री० ॥४॥
 पीउ बिन पलक कल नहीं जोसकूँ न रुचत रसिक जु वात ।
 कुमुदचन्द्र प्रभु सरसदरस कुं नयन चपल ललचात ॥ सखी री० ॥५॥

राग सारंग :

(७)

किस करी राखु मांझारु मन्न ।
 जिन तजी गयो रे सेसा वन्न ॥
 मयरा बृथा मुन्हे अन्न न भावे, सामलिया वीण भूरु ।
 आसइली मुन्हे नेम मलानी कोण जुगति कर पुख ॥ किम० ॥ १ ॥
 भूषणभार करे अति अंगे, काम कथा न सुहावे ।
 कुमुदचन्द्र कहे तेम करो जेम, नेमि नवल घर आवे ॥ किम० ॥ २ ॥

राग मलार :

(८)

आलीरी आ बरखा रित आजु आई ।
 आवत जात सखी तुम की तह, पीउ आव न सुध पाई ॥आ०॥ १ ॥
 देखीत तस भर दादुर घरकारे, बसत हे भरलाई ।
 बोलत मोर पपईया दादुर, नेमि रहे कत छाई ॥आ०॥ २ ॥
 गरजत मेह कुदीत अरु दामिनि, भोपे रह्यो नहीं जाई ।
 कुमुदचन्द्र प्रभु मुगति बधुसु, नेमि रहे वीरमाई ॥आ०॥ ३ ॥

राग भट नारायण :

(९)

आजु में देखे पास जिनेन्द्रा ॥ टेक ॥
 सावरे गात सोहामनी मूरत सोभित सीस फखेंदा ॥आजु०॥ १ ॥

२/कमठ माहासद भंजन रंजन, भविक चकोर सुचन्दा ।

१/पाप तमोपह भुवन प्रकासक उदित अनूप दिनेंदा ॥भ्राजु०॥ २ ॥

भुविज दीडिजपति दिनुज दिनेसर सेवित पद अरवेदा ।

कहन कुमुदचन्द्र होत सबे सुख, देखत वामानन्दा ॥भ्राजु०॥ ३ ॥

राग भैरव :

(१०)

अय जय आदि जिनेश्वर राय, जेहने नामे नव निधि थाय ।

भन मोहन महदेवी मल्हार, भवसागर उतारे पार ॥जय०॥ १ ॥

हेमवरण अति सुन्दर काय, दरसण दीठे पाप पलाय ॥जय०॥ २ ॥

युगला घरम निवारण देव, सुन्दर जिनर सगरे सेव ॥जय०॥ ३ ॥

दीनदयाल करे दुख दंद, कुमुदचन्द्र बांदे भागुंद ॥जय०॥ ४ ॥

राग भैरव :

(११)

चन्द्र वरण बांदो चन्द्रप्रभ स्वामी रे ।

चन्द्रवरण पंचम गति पासी रे ॥ १ ॥

मोह महाभट भद दल्यो हे लारे ।

काम कटक भाहि कीधां जेरो भेलां रे ॥ २ ॥

विघन हरण भन बांछित पूरे रे ।

समस्या सार करे अथ चूरे रे ॥ ३ ॥

घोषा मण्डन चन्द्रप्रभ राजे रे ।

जेहनो जस जग माहि वाह गाजेरे ॥ ४ ॥

परम निरंजन सुर नमे पाय रे ।

कुमुदचन्द्र सूरी जिन गृण गाय रे ॥ ५ ॥

राग कल्याण :

(१२)

जन्म सफल भयो, भयो सुकाज रे ।

तन की सपत टरी सब मेरी, देखत लोडण पाम आजरे ॥जन्म०॥ १ ॥

संकट हर थीपास जिनैसर, वदन विनिजिते रजनी राज रे ॥

अंक अनोपम अहिपति राजित, श्याम वरन भव जलधियान रे ॥ २ ॥

नरक निवारण शिवसुख कारणा सब देखनी को हे शिरताज रे -

कुमुदचन्द्र कहे बांछित पूरन, दुख चूरन तुंही गरीबनिवाज रे ॥ ३ ॥

राग कल्याण :

(१३)

चेतन चेतत किउं बावरे ।

विषय विषे लपटाय रहोरे, क्हा दिन दिन डीज्जत जात गायरे ॥ १ ॥

तन धन योवन चपल सपन को, योग मिल्यो जेस्यो नदी नाड रे ॥

काहे रे मूढ न समझत अजहुं, कुमुदचन्द्र प्रभु पद यण गाड रे ॥ २ ॥

राग कल्याण चर्चरी :

(१४)

थेई थेई थेई नृत्यति अमरी, धुधरी धुं धमकार ।

भभरी अमर गण नचावे ॥

सगीगम धुति सुसप्त स्वर विराज राग रंग ।

तान मान मिलित वेणु बंसरी बजावे ॥थेई॥ १ ॥

धुंधुमि धुंधुमि ध्वनी मृदंग चंग तालवर उपांग ।

श्रवण अति सोहावे ॥

जय जिनेश नत नरेश शची सुरचित चारु वेश ।

वेश देश कुमुदचन्द्र, वीर ना गुण गात्रे ॥थेई॥ २ ॥

राग कल्याण चर्चरी :

(१५)

वनज वदन रुचिर रदन काम कोटरूप कदन ।

श्रुगु सुवचो रटति राज नन्दनी ॥ वनज ॥ १ ॥

स्वीकृतं यदि तज्यते यद्भवति किंकुल धर्म एष दति ।

मुदा निधान तदनु मन्द स्कंदीनी ।

कृपा कूप बिनत भूप प्रिया धुनानु गृह्यतां ।

कुमुदचन्द्र स्वामी मुदा सुधा स्कंदनी ॥ २ ॥

राग कल्याण चर्चरी :

(१६)

श्याम वरण सुगति करण सर्व सौख्यकारी ॥

इन्द्र चन्द्र मानवेन्द्र वृन्द चारु चंचरीक ।

चुंबित चरणारवृंद पाव ताप हारी ॥श्याम॥ १ ॥

सकल विकट संकट हरन हंस तट ।

सुहर्ष कारण शेष अंक धारी ॥

वास परम आस पूरी कुमुदचन्द्रसूरी ।

जय जय जिनराज तुं भवदारि राशि तारी ॥श्याम॥ २ ॥

राग बेशाल :

(१७)

आसुरे हम कीधुं साहस नैमजी अण ससभे किम जाय ।
 तोरण बढीने पाछा बलतां लोक हसारत थाय ॥आ०॥ १ ॥
 अहाने आस हती अतिमोटी, नेमिकुमार परणीये ।
 मास अषमास इहां राखीने, मन गमतुं ते करीस्ये ॥आ०॥ २ ॥
 आपासे अति उची मेडी, पाछलि छे हाट श्रेणी ।
 ते उपरि थी नगर तमासो, जो इस्ये जानिये हेरी ॥आ०॥ ३ ॥
 बोली टोली टोल करंता गीत साहली गाये ।
 हास विनोद कथा रस कहेतां, दिन जातो न जणाइ ॥आ०॥ ४ ॥
 आबो आबो रे मोहन मंदिर माहरे, रोभइ मन माहुर ।
 बालेक आखडली मचकावत सूजाये छे ताहरु ॥आ०॥ ५ ॥
 तहानेंसू बलि बलि बीनबीइ तम्हे छो अन्तरयात्री ।
 रहो रहो रसिक बलो तुहो पाछा, कुमुदचन्द्र ना स्वामी ॥आ०॥ ६ ॥

राग धन्यासी :

(३८)

में तो नरभव बाधि गमायो ।
 न कीयो तप जप व्रत विधि सुन्दर ।
 काम भलो न कमायो ॥मैं०॥ १ ॥
 चिकट लोभ तें कपट कूट करी ।
 निपट विषै लगटायो ॥
 बिटल कुटिल षठ संगति बेठो ।
 साधु निकट विघटायो ॥मैं तो०॥ २ ॥
 कुपण भयो कष्टु दाम न दीनो ।
 दिन दिन दाम मिलायो ॥
 जब जोवन जंजाल पड़्यो तब ।
 पर त्रिया तनु चित लायो ॥मैं तो०॥ ३ ॥
 अन्त समे कोउ संग न आवत ।
 भूठिहि पाप लगायो ॥
 कुमुदचन्द्र कहे चूक गरी मोहि ।
 प्रभु पद जस नही गायो ॥मैं तो०॥ ४ ॥

राग बन्दासी :

(१६)

प्रभु मेरे तुम कुं एसी न चहीये ॥

सघन बिघन घेरत सेवक कुं ।

मीन धरी किउ रहीये ॥प्रभु०॥ १ ॥

विघन हरत सुख करन सबनिकुं ।

चित चिन्तामनि कहीये ॥

प्रशरण शरण अबन्धु बन्धु ।

कृपासिधु को बिरद निवहीये ॥प्रभु०॥ २ ॥

हम तो हाथ बिकाने प्रभु के ।

अब जो करो सोई सहिये ॥

तो फुनि कुमुदचन्द्र कहे शरणागति की ।

प्रभु सरम जु गहीये ॥प्रभु०॥ ३ ॥

राग बन्दासी :

(२०)

आजु सबनी मि ठू बड़भागी ।

लोडण पास पाय परसन कुं, मन मेरो अनुरागी ॥आजु०॥ १ ॥

वामा नन्दन वृजिनि विहङ्गन, जगदानन्दन जितवर ।

जनम जरा मरणादि निवारण, कारण सुख को सुन्दर ॥आजु०॥ २ ॥

नीलवरण सुर तर मन रंजन, भव भंजन भगवन्त ।

कुमुदचन्द्र कहे देव देवनीको, पास भजहु सब संत ॥आजु०॥ ३ ॥

राग श्री राग :

(२१)

बन्दे हूं शीतल चरण ॥

सुरनर किन्नर गीत गुणावली, मतुल रूप सब भयहरण ॥बन्दे०॥ १ ॥

निज नख सुखमा चित द्विजपति सय, मुदित मुनि निश्चित शरण ।

जन्म जरा मरणादि निवारण,

नत कुमुदचंद्र श्री सुख करण ॥बन्दे०॥ २ ॥

राग असाउरी :

(२२)

अवसर आजू हेरे ह्वेदान पुण्य काई कीजे ।

भानव भव जाहो लीजे ॥अव०॥ १ ॥

भव सागरना भमंता भमंता, नर भव दोहिलो मनियो रे ।
 संपति मति रुडू कुल पाम्यो, तो भर्म विषय थी रलियो रे ॥अव०॥ २ ॥
 योवन जाय जरा नितु व्यापे, क्षण क्षण प्रायुस धावे रे ।
 रोग रोग लाना दुख देखी, तोस्ये नहीं सान न आवे रे ॥अव०॥ ३ ॥
 क्रोध मान माया सहु मूँको, परधन परस्त्री धर जोरे ।
 चरचो चरण कमल प्रभु केरा, जिम संसार न सरजो रे ॥अव०॥ ४ ॥
 वृद्ध पणो तप जप नहीं थापे, जीवन बय जालबिये रे ।
 घर लागे कूड खोदीने तो कहो किम घर उलहविये रे ॥अव०॥ ५ ॥
 बहु परिवार घणी हुं मोटो, मूरिख मोटि संभखी रे ।
 स्वारथ बीते कोई नवि दीखे, तो जिम तरवर ना पंखी रे ॥अव०॥ ६ ॥
 में में रतोर माए तो, बृह्म तिजनिहारो रे ।
 मन मरकट नो हठ वक्ति आणो तो, नरभव फोकम हारो रे ॥अव०॥ ७ ॥
 पर उपहार करी जस लीजे, पर निदा नवि करीये रे ।
 कुमुदचंद कहे जिम लीलई, तो भवसागर उतरीये रे ॥अव०॥ ८ ॥

राग गोडी :

(२३)

लालाचो मुक्त चारिष पुनडी, येराग करारी रंग रे ।
 बल मात भली घणी सोभती, बार समकित पोत सुचंगरे ॥ १ ॥
 रुडी सोहें माहि तप फूदडी, छवियालि दयानि बेलि रे ।
 दशकक्षण डालि दीपती, शिल पथ तरणी रंगरेलि रे ॥ २ ॥
 मूल गुणनी विराजे भंजरी, पंच समिति पांखडी सोहंत रे ।
 उंची अण्य गुपति रेखा भजे, जेह्ने जोता मन मोहंत रे ॥ ३ ॥
 वर संवरनी तिहां चोकडी, वे ध्यान पालव सोहाय रे ।
 रटियालि रत्नत्रय कोर रे जोता मनुस्युं तृपति न थाय रे ॥ ४ ॥
 एह उही राजीमली सांचरी, तेरो मोह्या सुरनर राय रे ।
 मोही भुगति साहेली रूपने, सूरु कुमुदचन्द बलि जाय रे ॥ ५ ॥

इतिगीतः

(२४)

ए संसार भर्मतडारे न सह्यो धर्म विचार ॥
 में पाप कर्म की धांधली ते थी पाम्यो दुख अपार रे ।
 मम मोहन स्वामी मोरा अंतरायामी, नमुं मस्तक नामी देखरे ॥ १ ॥

ए तो कष्ट करीने पासोथोरे, मानव भव अवतार ।
 ते निष्फल में नीमियो कहूं सांभली तेहनी बात रे ॥ २ ॥
 में कपट कीभां अति पाहुमां रे, रचियों अति परपंथ ।
 मर्म मो साबलि बोलिया, बलि पोस्यां इंद्रिय पांथ रे ॥ ३ ॥
 ओध पिशाचि हुं नम्यो रे, ठसियो काम भुजुंग ।
 सहेरबाजी महा मोहनी, हुं तो राख्यो पर श्रिय सगरे ॥ ४ ॥
 लोभ लंपट थयो अति घणूं रे, धन परियण ने काजि ।
 जोवन मद मातो थयो, तिरो प्राण्यो घणू एक वाजिरे ॥ ५ ॥
 अल दखानुं अलि दखूं रे, कोपी परनी ताति ।
 कूडा आलि चढावियो, थयो उन्मत्त दिनराति रे ॥ ६ ॥
 मन वाञ्छित सुख कारणे रे, कीषा पाप अघीर ।
 अति उज्जसता कारणे, थोयो कादव मांहि चीर रे ॥ ७ ॥
 कर्म कीषां अण जाणता रे, ते के कहेता थाय से लाज ।
 ए मत मांदा भे घणूं कहूं ते कोहने जई प्राजार ॥ ८ ॥
 हवे तु जग गुरु मझने मल्योरे जगजीवन जगनाथ ।
 सूरी कुमुदचन्द करे बीनती, निज सेवक कीजे सनाथ रे ॥ ९ ॥

राग परजीठः

(२५)

बालि बालि तुं बालिम सजनी, विण अवगुण किम छंडी नारि ।
 तोरण थी पाछो जे बलियो, जइ चढियो गिरि गढ गिरिनारि ॥ १ ॥
 लीधो संघम श्री जिनराजि सुन्दर सहेसावन्न मझारि ।
 सुरनर किनर कर्यो महोछव, जिम बलता नावे संसार ॥ २ ॥
 रोस हवेस्युं करियो पोफट, ते यदुनंदन नावे बार ।
 कुमुदचन्द्र स्वामी सामलियो, उतारे भव सागर पार ॥ ३ ॥

राग परजीयोः

(२६)

लाल लाल लाल लाल तु मांजासरे ।
 तोरण थी पाछो बल्यो ताहरी लोक करस्ये हास ।
 यदुनंद रे, सुलकंदरे, नेम एक सांयलो माहरी बीनती ।
 जिम बाधे ताहरी माय ।
 लीषा बोलज भूकता स्युं रहस्ये ताहरी नाम ॥ यदु० ॥ १ ॥

एक बार तुं जो पाछो बले तो किजे हास विलास ।
 सखी सहनें भूमखे रमतां, फूलडा रुडा गास्य ॥ २ ॥
 कर जोडी ने वीनवूं, वाल्हारथ पाछो बालि ।
 जो ग्राम मुन्हे बाडी जसे, ताहरे भाये चढस्ये गालि ॥ ३ ॥
 रहे रहे रे यादवा जो डग भरे तो नेम ।
 मोवन वेशें एकली, घेर तुभ विना रहूं किम ॥ ४ ॥
 रहे उभो जो पाछु बली, तु सांभलि सुन्दर बाणि ।
 आवे यादव मंडली तेहनी, जाण हृदयास्युं काण ॥ ५ ॥
 हवे प्रेम करी पाछाबली, हठ नुको नेम नरेन्द्र ।
 दीन दयाल दया करो, इम बोले कुमुदचन्द्र ॥ ६ ॥

राग धन्यासी :

(२७)

संगति कीजे रे साधु तणी बली, लीजे ते अरि रंत नाम ।
 जेह थी सीभे रे मन नूं चीतव्युं, जिम लहो अविचल ठाम ॥ १ ॥
 जीबडा तुम करे सि माहर, माहर मनस्युं विमांसी रे जोष ।
 स्वारथ जांणी रे सह आकी मल्यु, अंत समे नहीं कोष ॥ २ ॥
 लक्ष चोरासी रे जोनि भ्रमंतडा, माणस जनम दुर्लभ ।
 इम जाणी रे तप जप की जोई, घडियन करिये विलंब ॥ ३ ॥
 तन घन मोवन जीवन धिर नाहीं, बिघटी जास्ये सुजांण ।
 ते माटइ करी सीख अह्मारडी पाल तो जिनवर आण ॥ ४ ॥
 पापज कीधां ते अति गाहुआ, रड चडिया संसार ।
 धर्म ज पाप्यो रे कष्ट घणू करी, भूरख फोकम हार ॥ ५ ॥
 जे दुखदीठा ते अति दोहिली, ते जाणो जिन चंद ।
 हर्व है यास्यु रे धर्मज कीजीये, जिम छूटो भव फंद ॥ ६ ॥
 रामा रामा रे घन घन भखतो, पडियो तुं मोहनी जाल ।
 विषय विलूधो रे जिन गुण विसर्यो दिन दिन आगे छे काल ॥ ७ ॥
 सगा सह मेरे सग परा कारिमुं, सगो ते सही जिनराज ।
 तेह नामइ थी रे शिवसुख पामीइ सरे ने जीवनू काज ॥ ८ ॥
 जोता जोता रे जग गुह पीमोयो सेहथी मरहेसि दूरि ।
 जन्म मरण ना जिम दुख सहटले, कहे कुमुदचन्द्र सूरि ॥ ९ ॥

राग गुजरी :

(२८)

म करीस परनारी तो संग ॥ टेको ॥
 हाव भाव करे ते छोटी जेह धो रंग पतंग ॥ म० करीस ॥ १ ॥
 पेहेलु मन संताप चटपटी, सोक संताप ते आवे ।
 जेम लागो होखे भूत भमता, ते मने चित्त भमावे ॥ म० ॥ २ ॥
 भूखत रम नवि लागे तेहाथी, अल उदक नवि भावे ।
 न रुचै बात विनोद कथा रस, नहि निसि निद्रा आवे ॥ म० ॥ ३ ॥
 तंगट लोक कही बोलावे, सह सज्जन रिसावे ।
 साथे आल चढे पतजाय, लोकह सारथ थाते ॥ म० ॥ ३ ॥
 राज दण्ड धन हारा विगुचरणा, नरक माहे दुख कारी ।
 कुमुदचन्द्र कहे करी वीमासरा, तजो चतुर परनारी ॥ म० करीस ॥ ५ ॥

राग सारंग :

(२९)

नाथ अनाथनी कुं कछु दीजे ।
 विरद संभारी छारीहूँ मन ति, काहे न जग जस लीजे ॥ नाथ ॥ १ ॥
 तुम तो दीनदयाल ही निवाज, कीयो हूं मानुष गुण अव न मणीजे ॥
 व्याल बाल प्रतिपाल सविषतक, सो नहीं आप हणीजे ॥ नाथ० ॥ २ ॥
 मैं तो सोई जोता दीन हूँतो जा दिन को न छूई जे ।
 जो तुम जानत उर भयो हे, बाधि बाजार बेचीजे ॥ ३ ॥
 मेरे तो जीवन धन सबहु महि, नाम तिहारे जीजे ।
 कहत कुमुदचन्द्र चरण सरण मोहि जे भावे सो कीजे ॥ ४ ॥

राग सारंग :

(३०)

जो तुम्ह दीन दयाल कहावत ॥
 हमसी अनाथनि हीन दीन कुं काहे न नाथ नीवाजन ॥ जो० ॥ १ ॥
 सुर नर किनर असुर विजावर, सब मुनि जन जस गावत ।
 देव महीरुह कामधेनु ते, अधिक जपत सच पावत ॥ जो ॥ २ ॥
 चन्द्र चकोर जसद उयु सारंग मीन मल्लिज ध्यावत ।
 कहित कुमुदपति पावन तुहि, त हिरिदे मोहि भावत ॥ जो० ॥ ३ ॥

(३१) मुनिसुत्र गीत

मुरत मोहन बेलडी रे, दर्शण पाप पलाय ।
 मुख दीठे दुख विसरे रे, सेवे छे मेवे सुरासुर पाय ॥

गज नामि आबो भामिनी ए; पुजेवा पुजेवा सुव्रत पाय ॥गज॥
 तात सुमीश मनोहर रे, जेहनी पोभादेवी माय ।
 मुख सोहे जेहवो चांद लो, रे, स्यामल स्यामल वर्ण सुकाय ॥ २ ॥
 उचयरू अति जेहनुरे, बीश धनुष परमाण ।
 मोर माहाश्वर निर्वायोरे, शङ्कर मयण मनाव्यो आण ॥गज॥ ३ ॥
 नयर राजगृह उपना रे, जग गुरु जगदानंद ।
 ध्यान करे नित जेहनुरे, मुनिवर मुनिवर केव वृंद ॥गज॥ ४ ॥
 प्रगट्यु तीर्थ जेणे वीसमुं रे, मनवांशित दासार ।
 गुणसागर अति खडारे, जेहनां वचन अतिसार ॥गज॥ ५ ॥
 दीनदयाल सोहमणी रे, सुंदर कछणा सीधु ।
 जगजीवन जग राजीयोरे कारण कारण वीरण बंधु ॥गज॥ ६ ॥
 रोग सोग नामे ठले रे सहान्त बीषन हरे दूर ।
 सेवो भविक तम्हे भावसुरे, विनवे विनवे कुमुदचंद सूर ॥गज॥ ७ ॥

॥ इति मुनिसुव्रत गीत समाप्त ॥

(३२) हिन्दोलना गीत

विनय करीने बीनबूँ हीदोली डारे, भगवति भारति माय ।
 जेह नामि मति पामीये हिन्दोलीडारे बलि रे विमलमति थाये ॥
 एक समय सू हिन्दोलडारे हीवती सक्षिय बे च्यार ।
 चन्द्र किरण सम उजलो ॥
 हँडले भलके तोहार रातिखडी अजूवालडी ॥ हि० ॥ २ ॥
 धरि धरि उछब रास ॥
 गाय ते गीत सोहामणी कामिनी करे रे विलास ॥ ३ ॥
 थ्यारि राजुल कहे हे सखी, साभलो एक सन्देश ।
 जाउ सखी जइ बीनवो, सुन्दर नेमि नरेश ॥ ४ ॥
 माहुरी बती करो बीनती, प्रणमीय तेहनां पाय ।
 तुम बिनां पल एक मुझने घडीय बराबरि थाय ॥ ५ ॥
 घड़ी एक पहोर समानधी, पहोर दिवस दिन मास ।
 मास वरस दिन जेवड़ी वरस युगांतर तास ॥ ६ ॥
 राति दिवस राजीमती समरे छे तम तणो नेह ।
 जिम सरोवर हंसलो, बापियडा मन मेह ॥ ७ ॥

बर्मिन् मन जिम धर्मसु, गुणिनी संगति गुणवंत ।
 जिम चक्रवाक मनि रवि बसे, कोमल जिम रे बंसत ॥ ८ ॥
 याचक जिम समरे दातार ने, दातार पाय उदार ।
 जिम निज धरि समरे पंधियो, सती समरे भरतार ॥ ९ ॥
 जिम तृषातुर नीरने, तिम तुह्य रागुल नारि ।
 क्षणि-क्षणि बाट नीहालती, निज घर अगण बार ॥ १० ॥
 पूछे पोपटने पांज रे, बोलो ने पोपट राज ।
 कहो क्यारि नेम जी आवस्यो, जम सरे अह्य तरां काज ॥ ११ ॥
 बलिय पारेवाने बीनवे, सांभल्यो तुं तो सुजांण ।
 ताहरि गगन गति रुझडि, करि पिउ आव्यानु जांण ॥ १२ ॥
 सकुन बघावी जोवता, पूछति पंधि ने बंसत ।
 जे कहे नेमनी आवता, ते मोरो बांधवा वात ॥ १३ ॥
 घर बन जाल समूं सह, विरह दवानल भाल ।
 हुं हिरणी तिहां एकली, केसरि काम कराल ॥ १४ ॥
 मात पिता सहूं बीसर्ग्या, नहीं गये परिजन नाम ।
 बाहलो मने एक नेम जी, जेहो हमारो आतम राम ॥ १५ ॥
 हेविहिणां मागुं तुभ कहे, अह्याने तुमां सर जेस ।
 जो सरजे अह्याने बली, मांणस जनम म देखि ॥ १६ ॥
 जो भव रे मानव तरां, तोम करेस संयोग ।
 संजोग जो सर जे लेई, तोम करे सवियोग ॥ १७ ॥
 इष्ट वियोग दुख दोहिला, ते दुख मुखे न कहवाय ।
 थोड़ा मांहि समझो धरूं तम बिना में न रहे वाय ॥ १८ ॥
 भोजन तो भावे नहीं, भूषण करे रे संताप ।
 जोहुं मरिस्थ बिलखि आई, तो तह्य लागस्ये पाव ॥ १९ ॥
 पणु देखी पाछा बल्पा, मनस्थुं धयारे दयाल ।
 मुझ उपरि माया नहीं, ते तह्येस्या रे कृपास ॥ २० ॥
 तह्ये सवम लेवा सांचर्या, जाण्यो पम्यो हवे मर्म ।
 एकस्थुं रसो एकस्थुं तुमो, अबलो तुम्हारो धर्म ॥ २१ ॥

राज रज्जुं त्रण्य लोकनूँ, मडो हमारो योवन वेश ।
जो सरगे जस्यो तप करी, तिहां तो एहबूँ न लेहसि ॥ २२ ॥
हुवे प्रभु पांछी बलो, करिये छे विनय अनेक ।
अति ताण्णुं बूटे नेम जी, मन माहिं करो रे विवेक ॥ २३ ॥
त्यारि दिवस हुइ पाथरा, त्यारि संगू सहू कोथ ।
ज्यारि बांका थावे दीहड़ा, त्याहारि सज्जन बेरी होय ॥ २४ ॥
अथवा करम कर्मुं अह्य तरां, तो तह्यस्युं कर्यो रोस ।
जेहबू वीधू तेहबू पामीये, कोहे दीजे नहीं दोस ॥ २५ ॥
रापुल अमीने इम कहीउ बलि-बलि जोड़िने हाथ ।
प्रीछवो जो पाछा बले, जिम अह्ये थाउ सनाथ ॥ २६ ॥
लेई संदेसो चालो सहू सखी जइ चढ़ी गिरिवर शृंग ।
पसीय जुगति करी प्रीछव्या, मन दीठु तेहनू अर्भंग ॥ २७ ॥
आबी ते सखि पाछी बली, बात कही तिगिअवर ।
ते तो बोले-चाले नहीं, मनस्युं निठोर अपार ॥ २८ ॥
त्यारि राजुल उठी संचरी, तजिय संपति ततकाल ।
संयम लेई तप आचर्यो जिम न पड़े मोह जाल ॥ २९ ॥
व्रत रड़ा पाली करी पामी ते अमर विमान ।
कर्म तजी केवल सही, नेमि पाम्या निरवाण ॥ ३० ॥
ए भरणतां सुख पामीइ, विश्वन जाये सहू दूरि ।
रत्नकीरति पट मंडरगो, बोले कुमुदचन्द्र सूरि ॥ ३१ ॥

(३३) त्रण्य रति गीत

दश दिशा बादल उन्ना दम्पति मनि उल्हास ।
बीसे ते दिन रलियां मरणा, घन बरसे रे लवे बीज आकाश के ॥

खर्चा ऋतु :

बरषा रति आदि आबी, आदि बरषा रति बाधे बहु रतिराज ।
न आस्थो रे पीउडो घरि आज, न आसी रे मनि निज कुल लाज ॥
स्युं कीजे रे नहीं पीउ सुख माज के, बरषा रति आज आबी ॥ १ ॥
पंथीयडा भूरे धरण साभली दावुर मोर ।
बापीयडो पिउ-पीउ अवे पापीयडोरे बोले कलरब मोर के ॥ २ ॥

पंखीयडें साला कस्या मनि धरी पावस प्रेम ।
 'काली ते मेहरा रातड़ी, बालूयडा विण सुनै धरि रहीये केम के ॥ ३ ॥
 गगन अति गड़गड़े बाजसे भेभावात ।
 कुंज बिहगंभ मंडली गीरि कन्दर रे, गुंजे हरि कपि जात के ॥ ४ ॥
 गाजे ते अम्बर छाहिउ, भड़ बादल बट्ट भानि ।
 अगियो अंधार ते लग तगें बोले तिमिरा रे भरिमा किम राति के ॥ ५ ॥
 सुख समे प्रीठडो नादियो मनि धयो अतिहि नीठोर ।
 कोई भाबिनीहं मोलझ्यो, करि कांमण रे मार चितडानो चोर के ॥ ६ ॥

शीत ऋतु :

सोहमणा दिन शीतला गाये ते गोरी गीत ।
 शीतनो भय मनिधरी हवे मानिनि रे सुंके मन लणा मान के ॥ ७ ॥
 हिम रित रे बीजी आबी बीजी हिम रति रे सखि हरण निधान ।
 ना होलियो रे वसे गिरि गुहरान, वियोगे रे वणसे देह वान ॥ ८ ॥
 योवन जाये रे प्रीठने नहीं सान के ॥
 हिमरतें हिम पड़े हे सखी दाभे ते धन वन राय ।
 तुम्ह बिना ए दिन दोहिलां ह्यारी दाभेरे अति कोमल कायरे ॥ ९ ॥
 बाजे ते शीतल वायरो, बाभे ते बाहिर ठार ।
 धूजे ते बनना पखिया, किम रहस्ये ते वनि प्रियसुकुमार के ॥ १० ॥
 बन छांड़ि दव भय कमलिनी, जले रहे मनि धरीनातेष ।
 तिहां थकी परिण हीमें दही नहीं, छुटियेरे वहि रातिरा लेख के ॥ ११ ॥
 तेन सापन तुला तवणी ताम्र पट तंबोल ।
 तप्ततोयसे सातभू सुखिया नेरे हिम रति सुख मल के ॥ १२ ॥
 शीयालो सघलो गयो, परिण नावियो यदुराय ।
 तेह बिना मुझने भूरता एह दीहडारे वरसां सो आय के ॥ १३ ॥
 कोमल करे रे टहकडा लहे केसे अंभा डाल ।
 बेलि ते पोपट पाहुड तेह सांभली रे स्ये न माख्या लाल के ॥ १४ ॥

शीत ऋतु :

शीतम रितु बीजी आबी, बीजी शीतम रति किम जास्ये एह ॥
 धरे नाव्योरे नाहोलो धरी मेह, सामलिया रे मति समरो मेह ॥ १५ ॥

नहीं तर रे प्राणत जस्ये देह के ग्रीसम रति ॥

फूल्या ले चंपक केवडा फूल्यु ले बन सह कोय ।

पानडा पणि नहीं करने, पुण्य पाणि किम रुडी सम्पति होय के ॥ १६ ॥

तडको पडे अति दोहिलो, रवि तये पर्वत शृंग ।

अति भाल लागे लु तणो हवे आबो रे मुभ फज मृंगाक ॥ १७ ॥

कर्पूर वासित वारिस्सु चन्दने चरचुं अंग ।

केसर धसी करु छाटणां,

जो तु राखे रे हमारा मन तणो रंग के ॥ १८ ॥

कामिनी करि शृंगार, सरसी करे बन जल केलि ।

सामला मूँको पायला मुभ सरिसोरे प्रिय मनडू मेलिके ॥ १९ ॥

इम भूरती राजीमती, जई चढी गिरिमारि ।

सूरी कुमुदचन्द्र प्रभु नेमि ने धन्यासी रे आयो हुं बलिहार के ॥ २० ॥

(३४) वणजारा गीत

वण जारा रे एह संसार विदेस भयीय ममीतुं उसनो ।

तेरी घणी घणी बार ज्यारे गीत पुर जोहयां ॥ १ ॥

लख्य चोराणी योनि गाम माहि तुं रडवयो ।

मनस्युं विमांसी जोय खोटे वणजे रणयो थयो ॥ २ ॥

मूल मयुं तिरिण बार खोटि आवी दुखियो थयो ॥

जीव तु चतुर सुजाण भोह ठगा रे भोलवयो ॥ ३ ॥

कीधा कुसंगति प्रीति सात व्यसन ते सेवीया ॥

पाप कर्मां ते अनन्त जीव दया पाळी नहीं ॥ ४ ॥

सांघो न बोलियो बोल मरम मोसाबहु बोलिया ॥

पर निदा परतीति ते करी अण जांखते वणजारा रे ॥ ५ ॥

आप अलाभ्युं अपार, अवगुण ते सह उलव्या ॥

कुड कपटनी सांणि, परधन ते चोरी लिया ॥ ६ ॥

उलवी विसरी वस्तु, थापिज मूँकी खलवी ॥

विषय विलूधो भमार, परनारी रंगे रम्यो ॥ ७ ॥

योवन मद थयो खंख, हुं हुं हुं करतो फिरयो ॥

रीस करी अण काज, गुण नवि जाण्यो धमा तणो ॥ ८ ॥

इंद्रिया पोस्यां पांच, पाप विचार कर्यो नहीं ॥

पुण कलत्र ने काजि, हा हा हुं तो हीडीयो ॥ ९ ॥

सजन कुटुंब ने भित्र आप सवारथ सहु मल्लु ॥

कीधां कुकर्म अनंत, धन धन रामा भंख तो ॥ १० ॥

घर परियण ने लोभ, वराज धरा तें के लव्या ।

तेह्लो न लाधो लाभ, जेरो लाभे सुख पामीये ॥ ११ ॥

भरवुं छे निरवार, तो फोक्ट फूले कस्युं ॥

कोई न आवेस्ये साथि हाथि दीधू साथें आवस्ये ॥ १२ ॥

ते माटेस्यो रे जंजाल, करतो हीडेतुकारिमु ॥

संभल ये तुं सीस, ममना मनोरथ जिम फले ॥ १३ ॥

साज तुं सुन्दर साथ, मन रूपी रुडों पीठियो ॥

बार बेराग पल्हाण, मुगति पटी तु भीडजे ॥ १४ ॥

समकित रासडि बाविजे, उवट जिम जाये नही ॥

संयम गुण पल्हाण धर्म वसाणो तुं भरेव ॥ १५ ॥

लीजे दया व्रत सार, शीस तराणे संग्रह करे ॥

अनुप्रेक्षा ते संभालि, अण्य रतन तुं जेतन करे ॥ १६ ॥

पंच महाव्रत भार, समित गुपति ते राख जे ॥

साधु तराणे गुणवीर, जीव तराणी परिजालवे ॥ १७ ॥

संभारये तवकार, जिन जी तराणां गुण मनिधरे ॥

अन्य पुराण विचार, धर्म शुक्ल ध्यान चिन्तवे ॥ १८ ॥

सहे भोरनो उपदेश, एक घड़ी नयि विसरे ॥

तपनी तुम करेसि कांणि, जेणे कर्ममल सहु टले ॥ १९ ॥

मधुर मोदकं उपवास, गांठि सुखडली बांध जे ॥

निर्मल शीतल नीर ज्ञान घूंटडला तुं मरे ॥ २० ॥

सत्य वचन पक्क खरिण, ते सुखवास तुं वाकरे ॥

म करेसि तुं परमाद, वाटे जालव तो जजे ॥ २१ ॥

खडग क्षमा करे हाथ, चोर परिग्रह नास से ॥

साधमि ते साथ, मुगति तुरी वहेलो पुहवद्यो ॥ २२ ॥

सिद्ध तराणा गुण गांठि, मुगति वधू तेंणें राचस्ये ॥

जन्म जराना प्रास, मरण बली-बली नहीं न डे ॥ २३ ॥

काल अनंतानंत सौख्य सरोवरि मीलस्यो ॥

ए वराजारा नूं गीत, जे मास्ये हरषे सही ॥ २४ ॥

ते तरस्ये संसार अजर अमर थई महा लसे ॥

रतनकीरति पद थार, कुमुदचन्द्र सूरी इस कहे ॥ २५ ॥

(३५) शोल गीत

सुणो सुणो कंठा रे सीख सोझामणी ।

प्रीति न कीजे रे परनारी तरणी ॥

श्रोटक :

परनारि साथि प्रीतडी, प्रीउडा कहो किम कीजिये ।

उंघ आपी आपणी उजागरो किम लीजीइ ॥

काछडी छुटो कहें, लपट लोक माहि लीजीइ ।

कुल बिषय खंभण न खार लागे, संगामा किम गाजिये ॥ १ ॥

हाल :

प्रीति करंता रे पहिलू बीभीये ।

रखे कोई जाणो रे मन मा धुजिये ॥

श्रोटक :

धुजीये मनस्यु भूरिये परा सोन पिल बोझे नहीं ।

ए राति दिन पलपतां जाये, आवटी भरवुं सही ॥

निज नारी थी संतोष न बल्यो, परनारी थी तोस्युं हस्ये ।

जो भरे भाणो नृपति न बली, एठ चाटेस्युं थस्ये ॥ २ ॥

हाल :

मृग वृष्णा थी तरस्य नहीं टले ।

बालू केसू पीले रे तेल न नीसरे ॥

श्रोटक :

नवि नीकले पांणी विलोबतां लेस मांखण नों बली ।

छूडतां वाचक भरा फाणो, तस्यां बात न सांभली ॥

ते म नारी रसतां पर तरणी, संतोष तो न बले बड़ी ।

चटपटी ने उचाट लागे, बाँझि नावे निधडी ॥ ३ ॥

हाल :

जेहवो खोटो रे रंग पतंग नो ।

तेहवो चटको रे पर त्रिय संग नो ॥

श्रोटक :

परत्रियां केरो प्रेम प्रिउडा रखे को जाणो खरो ।

दिन च्यार रंग सुरंग दधडों, पछे न रहे निरधरो ॥

जे चणा साथे नहे माडे, छाडि तेहस्यु बातडी ।

इम जाणी मम करि नाहुला, परनारि साथें प्रीतडा ॥ ४ ॥

हाल :

जे पतिवाह तोरे वचे पापिणी ।
परस्युं प्रीते रे रांचे सापिणी ॥

श्रोटक :

सापिणी सरखी वेणि निरखी, रखे शील थकी चले ।
आंखिने मटके अंगि लटके देव दानवने छले ॥
मांडकालि अति रसाली, वांणि मीठी सेलडी ।
साभली भोला रखे भूले जांण जे विष बेलडी ॥ ५ ॥

हाल :

संग निवारी रे पर रामा तणो ।
शोक न कोजे रे मन भलवा घणो ॥

श्रोटक :

शोक स्याह ने करो फोकट, देखा छूं परिण दोहिलू ।
क्षण सेरीइ क्षण मेळीइ, भमता न लागे सोहिलो ॥
जसास नई नीसास आचे, अंग भाजे मन भमे ।
बलि काम तांणे देह दाभे अश दीठु नवि गमे ॥ ६ ॥

हाल :

जाय कलामी रे मनस्यु कल मले ।
उदमादो यह रे अलन फसल लवे ॥

श्रोटक :

तेलवे अलल फलल अजांणो मोह गहेलो मनि डरे ।
महा मदन वेदन कठिन जांणी मरण वारु प्रेवडे ॥
ए दश अवस्था काम केरडीं कल काया ने दहे ।
हम चित जांणी तजो रांणी पारकी जिम सुख लहे ॥ ७ ॥

हाल :

परनारी ना पर भय सांभलो ।
कंता कोजे रे भाव ते निरमली ॥

श्रोटक :

निरमले भावे नोह समभो, परबधू रस परिहारो ।
सांपियो कीचक भभिसेने, शिला हेठलि सांभलो ॥
रण पड्यां रावण दरो भस्तक रड बड्या अन्धे कहू ।
ते मुंजपति दुख पुंज पांयो, अजस जय मांहि रह्यो ॥ ८ ॥

कवि :

शील सलूणारे मांरास सोहिये ।

विण आभरणें रे मन मोहीये ॥

श्लोक

मोहिये सुन्दर करे सेवा, विष समीसायर घल ।

कैसरीसिंह सीयाल पाये धनल अति भीतल जल ॥

सापथ ये फूलमासा लच्छि धरि पांगी भरे ।

परनारि परिहरि शील भनि धरि भुगति बहु हेलाररे ॥ ९ ॥

कवि :

ते माटइ हुरे कालि भवीतवू ।

पाणि लागी नेरे भघुर वचने चवू ।

श्लोक :

वचने माहर्ष मानिये परितारी थी रहो वेगला ।

अपवाद भाये चढे मोटा, रंक थइये दोहिला ॥

धन धान्य ते नर नारि जे हठ शील पाले जगतिलो ।

ने पामसे जस जगत भाहि, कुमुदचन्द्र समुज्जलो ॥ १० ॥

गीत राग धन्यासी :

(३६)

आरती गीत

करो जिन तणी आरती, अण सुख बारती ।

विघन उसारती भविक तरा ॥ १ ॥

यास वर सोहती, सकल मन मोहती ।

अशु भव्य मोहती, तेज पूजा करो ॥ २ ॥

पुण्य अजू आलती, पापतिमर टालती ।

अमर पद आलती, अण प्रयासे ॥ ३ ॥

भव भय मंजती, भाव छिगजती ।

सुरमन रंजती, राज्य मानती ॥ ४ ॥

वाजिञ्च वाजतां, अंबर गजता ।

नरवधू नाचता, मनहू रंगे ॥ ५ ॥

जिन गुण गावतां, शुभ मन भावता ।

सुगति फल पावता, चतुर चंगि ॥ ६ ॥

सुगन्ध सारग दहे, पाप ते नवि रहे ।

मनहू वाञ्छित लह, कुमुदचन्द्र करो जिन आरती ॥ ७ ॥

(३७) चिन्तामणि पार्श्वनाथ गीत

चालो चन्द्रमुक्ती सखी टोली, पहेरो पटोलि चोलि रे ।

पूजिये पावन पास जिणसर, पीमीये सपति बहोली रे ॥ १ ॥

सन्दर आसब रास कपूरे, वासित जले जिन पूजीई ।

जन्म जराणे ज्ञान कीजे, सरण यकी नवि बीहीजीए ॥ २ ॥

चन्दन केशर ने रसि चरखो, त्रय भुवन केरो राख रे ।

पाप तणो संताप ठले सहू, त्रिम मनि वंछित थायेरे ॥ ३ ॥

अछत पूज करो प्रभु आगति, पंच परम गुरु नामि रे ।

नव निधि अउदह रतन अति रुबड़ा, जिम लहींइ निजघामें रे ॥ ४ ॥

जाई जूइ सरवर सेवने, कुंद कमल मचकुंदे रे ।

चम्पक तरणी चम्पक लिइ, चरचो चरण आनंद रे ॥ ५ ॥

कूरदालि बड़ावर व्यंजन, पोलिथ धीइ भबोली रे ।

पातलडी पकवान चढावो, रची रचना वर उली रे ॥ ६ ॥

दीवडलो अजू वालो रे आली, आरतडी उतारो रे ।

आरतडी भाजे जिम मननी, पाप तिमिर सहू वारो रे ॥ ७ ॥

सुन्दरी ससिवदनी प्रभु चरणो, कृष्णगण्ड सेवोरे ।

पावन धूम शिखा परिमलना छुटिये करमनि सेवोरे ॥ ८ ॥

कमरख कदली फल सोवागी, सखिय चढावो सारी रे ।

रायण करमदा बदास बीजोरा दाडिम अति मनोहारी रे ॥ ९ ॥

जल चन्दन अक्षत वर कुसुमें, चर दीवडली घूमे रे ।

फल रचना सूँ अरघ करो सखी जिम न पडो भव कूपे रे ॥ १० ॥

हस अनूपम भाव धरीने, पूजता पास जिणेंद रे ।

रोग शोग नवि ते अंगे, न हूई कोदस्तु देव रे ॥ ११ ॥

भूत प्रेत पिशाचर पीडा, बाध करु नवि अडकेरे ।
 पास प्रभू तरु नाम जपता, नवि हेडे दुख खडके रे ॥ १२ ॥
 सधन क्षिपन वेगलडां जाये, नवि ताणे बहु पाणी रे ।
 कुमुदचन्द्र कहे पास पसाई, राखे भुगति महाराणी रे ॥ १३ ॥

(३८) दीपावली गीत

आज दीवालि रे बाई दीवाली, तळ्हे पहेरो नव रंग फालि ।
 धन-धन गल तेरसि नो दिन, पूज्य धार्या चाली रे ॥ १ ॥
 गाऊंगी तव धावो गोरने, मोतीयडे भरी थाली ।
 चरचो अंग चनुर सोहामणी, चरण कमल सु पखाली रे ॥ २ ॥
 बुद्धि सिद्धि आपी अति सधडी, कालि चवदसि काली ।
 प प हरण लीजे ते पोसो मननामल सहुं टालि रे ॥ ३ ॥
 चउदशिनी पाछलडी राति, कर्म तरुण मद गाली ।
 महावीर पहेता निर्वाणे, अजरामर सुख शाली रे ॥ ४ ॥
 गोतम गुरु नेवल दीवडलो, लोकालोक निहालि ।
 सुरनर किनर कर्यो महीश्रव, जय-जव रव देता ताली रे ॥ ५ ॥
 तेज अमांस परब दीवाली, परडी भाक भमाली ।
 धरि-धरि दीवडला ते भलके, राति दीमे अजुवाली रे ॥ ६ ॥
 पडवे राति जुहार पटोलां, निरुडी मम चाली ।
 श्री मदगुस्ता चरण जुहारो, पामो रधि रद्धि आली रे ॥ ७ ॥
 बीजे हेजे करे ते भाविज वेहडली अति ह्याली ।
 ए पांचे धीहा जगन्होता, आचो आचो हरखे चालि रे ॥ ८ ॥
 हास विनोद करे गृम नयणी, शाशि वयसी रुपाली ।
 कुमुदचन्द्र नी काशि मनोहर, गीठा अमिय रसाली रे ॥
 आज दीवाली बाई दीवाली ॥ ९ ॥

राग धन्यासी गीत :

(३९)

म करस्यो प्रीति ज एक रुखि ।
 एक कटिन वेदल नवि जाणो, एक मरे विलखी ॥ १ ॥
 जल विन भीन मरे टल बलि ने, जलनें काई नहीं ।
 बापियडां ने प्रिउ प्रिउ रटंता, जलधर जाय वही ॥ २ ॥

तरस्यो ते मन जल जल भंते, जल जल घईज रहे ।
 दीवे पड़ेय पतंग मरे परि दीवो ते न लहे ॥ ३ ॥
 प्रेम भरीं जोती चन्दनि हरषे मनस्यु चकोर ।
 ते चांदलडो चितन जांखे, धिग-धिग नेह निठोर ॥ ४ ॥
 विकसे कमल दिवाकर देखे, त तो मने न धरे ।
 मोर करे अतिसोर सनेहे, मेह न मेह करे ॥ ५ ॥
 काया मन भाषा प्राणी ने, जीवें रह्यो बलगी ।
 जीव जते सटके भटकीने, ते नाखी अलगी ॥ ६ ॥
 नाद निमित्त मरे मृग गहेलो, नाद निगुण निगरोल ।
 त मांटहुं मन राखो रयड़ा, कुमुदचन्द्र ना बोल ॥ ७ ॥

राग बन्यासी गीत :

(४०)

सखि किम करिये मन धीर रे,
 नेमि उज्जल गिरि जई रह्या हां रे हां ॥ १ ॥
 जूड नाथ नीउरनी पेर रे,
 विण वांके किम परहरी हां रे हां ॥ २ ॥
 मन हुंती मोटी आस रे, नाथ निरास करी गयो ॥ ३ ॥
 सखि कहे ज्यो सांची बात रे, मोह राख्युं मां बोलस्यो ॥ ४ ॥
 कुरों कीधूँ एह बूँ काम रे, तोरण जई पाछा बल्या ॥ ५ ॥
 इणें किम न करी मन लाज रे, छोकर बादी सीकरी ॥ ६ ॥
 जेणें रखती मूँकी मात रे, वचन न मान्युं तात नुं ॥ ७ ॥
 तो कुरा अहमारी पांत रे, फोकट भाभूँ भूरीये ॥ ८ ॥
 हवे धरीये संयम भार रे, जिम मन वांछित पासीये ॥ ९ ॥
 जय जिनवर नुं आसीस रे, कुमुदचन्द्र ना नाथ हां रे हां ॥ १० ॥

(४१) नेमि जिन गीत

वचन विवेक वीनवे वर राजुल राणी ।
 साभलिये प्रिय प्रेमस्युं कह मधुरी वाणी ॥ १ ॥
 किम परशेबा आजीया सह यादव भेली ।
 तोरण थी किम चालियो रथ पाछो बेली ॥ २ ॥

बिण बांके किम छांडियौ, अबला निरधारी ।

बोल्या बोल न चूकीए, जिन जी मनोहारी ॥ ३ ॥

पशु अवाडि देखी फर्या ए मसि सहूँ सोटुं ।

विभर संभारे आपणूँ ये जगमा मोटु ॥ ४ ॥

दीन दयाल दया करो, रथ पाछो वालो ।

समुद्रविजयनी अरिण तले जो आघा चालो ॥ ५ ॥

मन मोहन पाछा चलो गृह पावन कीजे ।

मोशन वव अति रुझूँ तेहतो रस लीजे ॥ ६ ॥

हास विलास करो घणा, रमणीस्यु रमतां ।

सुख भोगबीड सामला सुन्दर मनि रमतां ॥ ७ ॥

प्रिय पाखि दुर्जन हसे घरि किम करी रहीये ।

बिरह तरणां दुख दोहिला कहूँ किम सहीये ॥ ८ ॥

अन्न उदक भाये नहीं, बिष सरिखूँ लागे ।

मंडन मनि-मनि नहीं, कामानल जाये ॥ ९ ॥

इम कहेनी रहति थकी राखुल ते थाकी ।

नेम निठुर माने नहीं गयो गिरिरथ हाकी ॥ १० ॥

कुमुदचन्द्र प्रभु शामलो जेणे संयम धरीयो ।

सुगति वधू अति रुबडी तेहने जई वरिवो ॥ ११ ॥

गीत :

(४२)

करो तम्हे जीव दया मनोहारी, हिंसा नो मत जोरे प्राणी ।

जिम पासो भय पार ॥ १ ॥

पिष्ट शिखंडिक नीहि साथी, लागु पाय अपार ।

जूउ यशोधर चन्द्रमति बेहु, भसीयां भवक्षण क्यार ॥ २ ॥

भव गहेले भुपति के कीमा, स्वान तराणे अवतार ।

बीजें भवे अन मांहि सेहलो, श्याम भुर्जगम स्फार ॥ ३ ॥

मीन शयो त्रीजे चंचल, सिन्धू विषय शिशुमार ।

जाल बन्ध अति छेदन भेदन दुखता तराणे भण्डार ॥ ४ ॥

भव चोथे अज अजा परां न हुउ सुख लगार ।

जनम पांच में अज भैंसो थई, दहो अलेख भार ॥ ५ ॥

भव छट्टे चरणायुध पक्षि जेहने जीव अहार ।

सातमें भवें कुसुमावलि गर्भे, युगल हवां ते उदार ॥ ७ ॥

एह संसार जाहि रड बडता, दोहिलो कर्म विचार ।
 जेहवां दुख लहे छे प्राणी. ते जाणे कौरतार ॥ ७ ॥
 कृत्रीम जीव तरणी हिंसा थी लागु पाप अपार ।
 हिंसा नवि कीजे रे, प्राणी कुमुदचन्द्र कहे सार ॥ ८ ॥

(४३) गुरु गीत

सकल सजन मली रे, पूजो कुमुदचंद ना पाय रे ।
 पाद अघोत कर्खो रे, जाणे ऋषिदर केरो राय ॥
 गरुड गोर अवतर्यो रे, दीठे दालिद्र पातक जाय ।
 उपदेशें उच्छवे रे संघ प्रतिष्ठा बहु विध पाय ॥
 मंत्र जपे रे यतीयचार पंचाचार ॥ १ ॥
 सुमति गुपति आदि ए पाले चारित्र तेर प्रकार ।
 क्रोध कषाय तजी रे बेगे, जीव्यो रति भरतार ।
 शील शृंगार सोहे रे, बुद्धि उदयो अभय कुमार ॥ २ ॥
 सखी में दीठहो रे, मीठहो सोल कला जस्यो चंद ।
 जीव रक्ष्या करे रे, अनोपम दया तरुवर कंद ॥
 विश्वाबलि करी रे, आरा मनाव्या आदि वृंद ।
 जस बहु विस्तरयो रे, चरण कमल सेवे नरेन्द्र ॥ ३ ॥
 आखडी कज पांखडी रे, अघर रंग रह्यो परवाल ।
 बाणी साबली रे, लाजी मई कोयल वन अंतराल ॥
 शरीर सोहामगू रे, गमने जीव्यो गज गुणमाल ।
 को कहें गुरु अवतारे देउ, दांत मान मोती माल ॥ ४ ॥
 गोपुर गाय भलू रे, बसूवा मध्ये छे विख्यात ।
 मोठ वंशमां रे, साह सदाफल गोरखो तात ॥
 शील सोभागवती रे, सुंदरी पदमाबाई जेहनी मात ।
 पुत्रम थोरे लक्षणा सहित पवित्र सुजात ॥ ५ ॥
 संघपति कहांन जी रे संघ वेण जीवादे नों कंत ।
 सहसकरण सोहे रे तरुणी तेजल दे जयवंत ॥
 मलदास मनहर रे मारी मोहन दे अति संत ।
 रमा दे वीर भाई रे गोपाल वेजलदे मन मोहंत ॥ ६ ॥

बारहोली मध्ये रे, पाट प्रसिद्धा कीध मनोहार ।
 एक शत आठ कुंभ रे दाल्या निर्मल जल अतिसार ॥
 सूर मध आधयो रे सकल संघ सानिध्य जयकार ।
 कुमुदचन्द्र नाम कह्युं रे, संघाव कुटुंब प्रतपो उदार ॥ ७ ॥

गीत :

(४४)

चालि—मोटो मुनि जी मोहन रूपे जाणिए ।

..... ॥

मुखमंडल जी पूरण शशि सोहामणो ।

रूप रंग जी कसपावंत कोझामणो ॥

ब्रोटक—कोझामणो ए रूप रंगि रत्नकीरत सूररीराय जी ।

एकें ते चित्ते अनुभव्यो, पूजो ते ए गोर पाव जी ॥

पाय पूजो गुरु तरा जिअ पाभो सुख भंडार जी ।

सुंदर-दीसे सोभतो भविषण गो आधार जी ॥

चालि—क्रीया प्रतिपाले भलो ।

अभिनंदह जी पाटि, उदयो गुण निलो ॥

विद्यावंत जी शास्त्र सिद्धान्त सह लह्युं ।

संगीत सार जी विगल सह पाटे कहे ॥

ब्रोटक—विगल सह पाठइं कहेने बाणी विबुध विशाल जी ।

पर उपकारी पुण्यवंत भलो जीव दया प्रतिपाल जी ॥

जीव दया प्रतिपाल सूरिए गोर गच्छपति सार जी ।

मूलसंध मांहि महिभा वणो सरस्वती गच्छ सिणगार जी ॥

चालि—गिहउ गोर जी सभावंत माधुर्युं जाणीए ।

माया मोह जी मच्छर मनमानाणीए ॥

एहवो गोर जी तप तेजे सो जीपतो ।

अवनि मांहि जी दिन दिन दीस दीपतो ॥

ब्रोटक—दिन दिन दीसे दीपतो ने हृवंड वंसे अराज जी ।

सिहासण सोहे भलो लीला लावन्य लाज जी ॥

लील लावण्य लाज कहीइ रत्नकीरति सूररीराज जी ।

कर जोडी ने कुमुदचन्द्र सेवक गार्या काज जी ॥

(४५) दशलक्षणा धर्म व्रत गीत

धर्म करो ते चित उजले रे, जे दस लक्षणा सार ।
 स्वर्गतरणा ते सुख पामीइ, जिम तरांगे संसार ॥ १ ॥
 क्रोध न कीजे प्राणिया रे, क्रोध करें दुख धाम ।
 बार क्षमा गुण धारियां रे, जग सचलो जस गाय ॥ २ ॥
 कोमलता ते गुण धारिए रे, कठिन तजो परिणाम ।
 तप जप संयम सहू फले रे, पामो अविचल ठाम ॥ ३ ॥
 सरल पणा धी सुख उपजे रे, मूँको मन नो मान ।
 मन नो भेल न रखीइ रे, पामीय केवल ज्ञान ॥ ४ ॥
 जुठुं बचन नवि बोलिये रे, बोलियो साधो बोल ।
 मुख मंडन रुझइ रे, सुं करिये तंबोल ॥ ५ ॥
 शीघ्र पशू ते बली पामीए रे, बाह्य अभ्यंतर भेद ।
 अष्ट पणा धी दुख पामीइ रे, जीरो धर्म उद्धेद ॥ ६ ॥
 सुन्दर संयम पालोइ रे, टालिये सर्व विकार ।
 इंद्रीय ग्राम उजाडिये रे, ताडिये दुधर मार ॥ ७ ॥
 बार प्रकारे तप कीजीइ रे, निर्मल भये रे देह ।
 भुगति तरां ते सुख पामीइ रे, जेइ तरां नहीं छेह ॥ ८ ॥
 दान मनोहर दीजीये रे, कीजिये निर्मल चित ।
 जन्म जरा ना दुख सहू टले रे, पामीध लौख्य अनंत ॥ ९ ॥
 ममता मोह न कीजीये रे, चितबीइ वेराग ।
 साथे कोई न आवसरे, मूँकीये मन नो राग ॥ १० ॥
 प्रेम करीने पालीये रे, अहमत्व गुण धारि ।
 साधलनां सुख पामीइ रे, कुमुदचन्द्रनी धारि ॥ ११ ॥

(४६) व्यसन सातनू गीत

साते व्यसने वसुधो प्राणी, कीचा कर्म कुकर्म ।
 लक्ष घोरासी योनि भयंता, न लह्यो धर्म नो मर्म रे ॥
 जीव मूँके व्यसन असार, जीव छुटे नू संसार ॥ जीव ७ । प्रांचली ॥
 व्यसन पहेलू नू बटु रमता, धन सधलू हारी जे ।
 नाम जूयारी कहि बोलावे, लोक मांझिलाजी जे ॥ जीव ८ ॥ २ ॥

बीजे व्यसनें जीव हसी ने. मांस भक्षण धई खायो ।
 तेहनें नरक मांहि रड बडती, दुख धरी परिथाये ॥जीव०॥ ३ ॥
 बीजे व्यसनें सुरा जे पीवे, तेहनी मति सह जाये ।
 भक्षे आल पंखाल असुद्धे, जाति मांहि न समाये ॥जीव०॥ ४ ॥
 वेष्टा व्यसन तयो सहुं घोषु जे छे दुख भण्डार ।
 घन जाये लंपट कहवाये, नासे कुल आचार ॥जीव०॥ ५ ॥
 व्यसन पांचमूं जीव आखेटक, रमता जीव सताये ।
 मारे जीव अनाथ अवाचक, ते बूढे भव पाये ॥जीव०॥ ६ ॥
 सांभलि सीख अहारडी छट्टे म करिस्य केहनी चोरी ।
 ते सघला मलोने खासे, पडसे तुम्ह उपरि जमदोरी ॥जीव०॥ ७ ॥
 म करिस्य भूरख व्यसन सातमें परनारी नो संग ।
 हाव भाव करस्ये ते खोटो, जे हवो रंग पतंग ॥जीव०॥ ८ ॥
 जूआ रमता पांडव सीदाये मांस थकी वक भूप ।
 मद्यपान थी घादव खीज्या, खणस्यां तेहना काज ॥जीव०॥ ९ ॥
 चारुदत्त दुख अति धरा पाम्यो, राज्यो वेष्टा रूप ।
 ब्रह्मदत्त चक्री आहेडे, ते पडियो भव कूप ॥जीव०॥ १० ॥
 चोरी थकी शिवभूति विडंब्यो, जी शीके चढी रहे सो ।
 परनारी रस लंपट रावण, ते जम मांहि विगूतो ॥जीव०॥ ११ ॥
 व्यसन एक ने कारण प्राणी, पाम्या दुख समूह ।
 जे नर सघलां व्यसन विलूधां, टेहनी सी कहूं बात ॥जीव०॥ १२ ॥
 इम जाणी जे बिसर्जे, मनि धरी सार विचार ।
 श्री कुमुदचंद्र गुच ने उपदेशे ते पामें भव पार ॥
 जीव मूके व्यसन असार, जेम छूटे तु संसार ॥जीव०॥ १३ ॥

(४७) अठाई गीत

गीतम गणधर पाय नसीने, कहेस्यु मुक्त मति सारणी ।
 सांभलियो भविष्यते भावी, अष्टाह्निका विधि वारु जी ॥ १ ॥
 मास अषाढ मनोहर सोहे, कार्तिक फागुण मासि जी ।
 आठमी धरी उपवास जी कीजे, मनुस्युं अति उल्लास जी ॥ २ ॥
 नाम भलूं नंदीश्वर तेहनूं, टाले भवना फंद जी ।
 एक लक्ष उपवास तगू फल, बोले वीर जिरोंद जी ॥ ३ ॥

नवमी दिन पकासन कीजे महा विजय लग नाम जी ।
 दश हजार उपवास तगूँ, फल पांमे शिव पद ठाम जी ॥ ४ ॥
 दशमीने दीहाडे ते कीजइ, कांजि कनो महार जी ।
 त्रैलोक्य सार शुभ नाम मनोहर, आवे त्रैलोक्य सार जी ॥ ५ ॥
 साठि हजार उपवास फलेंते, टाले मन ना दोष जी ।
 एकादशीइँ एकल ठागूँ चोमुखे तप संतोष जी ॥ ६ ॥
 पांच लक्ष दश गुण उपवासह जे खे पुण्य गण्डार जी ।
 बारसिने दिवसे ते कीजे, अणागार सुशकार जी ॥ ७ ॥
 पांच लाख तप नाम चोरासी, लाख उपवास साफल कहौइ जी ।
 तेरसि षट्तरस अशन करी जे, स्वर्ग सोपानें रहीये जी ॥ ८ ॥
 च्यालिस लक्ष उपवास तगूँ फल, आवे अति अगिराम जी ।
 एक अन्न त्रिण व्यंजन जमीइँ, चउविश दिन सुख धाम जी ॥ ९ ॥
 सर्व सम्पदा नाम महातप, कहिये कलिमल नासे जी ।
 एक लक्ष उपवास तगूँ फल, गौतम गरुडर भासे जी ॥ १० ॥
 पुनिम नो उपवास ज करिये इंद्रकेतु तप भरीइ जी ।
 त्रिण्य कोडि शिर लाख प्रमाणें, उपवासह फल गरुड जी ॥ ११ ॥
 सर्व मिलीने पांच कोडि एकतालिस, लक्ष दश सहस्र जी ।
 वर उपवास तगूँ फल तहीये, अष्टाह्निका व्रत करेसि जी ॥ १२ ॥
 मदन सुन्दरीइ मनने रंगे, श्रीपाल व्रत कीवू जी ।
 मन मांहि अति भाव धरीने, मन बांझित तस सीधू जी ॥ १३ ॥
 जे नगनारी व्रत करीस्थ, तेहने घरि आमुंद जी ।
 रत्नकीरति गोर पाद पटोधर, कुमुदचंद्र सुदिन जी ॥ १४ ॥

(४८) भरतेश्वर गीत

श्री भरतेश्वर रायस्व्यां शुभ कीधला रे ।

कोण पुण्य कीधला रे ।

जिणे तात आदीश्वर पाय्या ।

भुरगर सेवित पाय ॥ १ ॥

समोसरणजी रचना जेहने, अण्य शालि तिहां मागइ ।

मानस्तंभ च्यारे निसि भुन्दर, जेहवी भाव उवाहमे ॥

वृक्ष अशोक अनोपम पुष्पित, शोभे श्री जिन पासे ।
 अन्म जन्मना शोक शोक दुख, जे दीठे सह नासे ॥ २ ॥
 परिमल भार अपार गगन थी, कुसुम वृष्टि महिवाये ।
 उहरि अमर करे गुंजारव, जांणे जिन गुण गाये ।
 सर्व जीवनी भासा भांहि, संणय सधला जाये ।
 साभलता दिव्य व्वनि, जिननी मन मा हर्ष न पाये ॥ ३ ॥
 चंचच्चन्द्र मरीचि मनोहर, उपरि चमर ढलाये ।
 जे नर नमें जिनेश्वर चरणों, तेहनां पाप गुलाये ॥
 हेम सिंहासन उपरि बेटा, जिन शोभा न कलाये ।
 च्यारे पासेइ चतुर्भुल दीसे, जोता वृष्टि न पाये ॥ ४ ॥
 दीन दयाल प्रभु नी पाछलि, भासंडल अति राजे ।
 तेज पुंज देखीने जेहनूँ, रवि रजनीकर लाजे ॥
 अतिगम्भीर तार तरलस्दन धेव दुंदभि बाजे ।
 जांणे मोह विअथ धाजिअज, नादे अंतर नाजे ॥ ५ ॥
 मंजुल मुक्ता जान विराजित, छाजे छत्र अनूप ।
 जेहनी इंद्रादिक जस गावे, त्रण्य जगत नो भूष ॥
 प्रातिहार्य वसु संख्य विभूषित, राजे रम्य स्वरूप ।
 केवलजान कलित भुवनविक ते तारे भव कूप ॥ ६ ॥
 भव्य जीव ने जे संबोषे, चोखीस अतिशयवत ।
 पुगला धर्म निवारण स्वामी महिमंडल विचरंत ॥
 शेष कर्म ने जीते जिनवर अया मुक्ति श्रीवत ।
 कुमुदचन्द्र कहे श्री जिन गाता, लडिये सुकस अनंत ॥ ७ ॥

(५०) पार्श्वनाथ गीत

हांसोट नगर सोहामणो जिन सुन्दर सामान्य ।
 गर्भ महोच्चैव जेहनें सहं, आख्या इंद्र आगुंद ॥
 पासजी उपति पूहोजी, संकटहर संकट चुरो-जी ॥ १ ॥
 बादल नहीं वरसा नहीं, नहीं गाजने बीज प्रचण्ड ।
 अउछ कोडि वररत्ननो, नित वरसे धार अलण्ड ॥ २ ॥
 नयणदीठो नहीं सांभल्यो, कही रयण तणो वलि मेंह ।
 ते तुभ मात गृह आंगणे, दरो दिन दिन अतिशय येह ॥ ३ ॥

जन्म जाण्यो जिन जी तणो, तयारि मिलिया अमर सुंजाण ।
 मेरु शिखर लेई जाई सिहां, कीबू जनम विधान ॥ ४ ॥
 सजल धनाधन सामली, अतिकाय कला मनोहर ।
 रूप अनोपम जोवता, काम कोटि कीजे बलिहार ॥ ५ ॥
 मन बेराग धरी करो, तह्ये भूवयुं महीपति साज ।
 बाल तप आवर्धो, तह्ये कीबू आतम काज ॥ ६ ॥
 पछे योग जुगुति तीणें करी, धारी निर्मल आतम ध्यान ।
 धाति कर्मनी क्षय करो, उपनूं वर केवल ज्ञान ॥ ७ ॥
 लोक अलोक विषय करी, हरे पाप तिमिर जिनराज ।
 रवि छवि नवि शोभा लहे, चालि चन्द्र कला करी लाज ॥ ८ ॥
 जीतिय धातिय चौकडी, तहमें पाम्या परम पद स्थान ।
 अकल स्वरूप कला तोरी, तु तो अमिन अमेर समान ॥ ९ ॥
 श्रीरतनकीरति गुरुनें नमी, कीना पावन पंचकल्याण ।
 सूरि कुमुदचंद्र कहे जे ॥ १० ॥ ते पासें पयास विधान ॥ १० ॥

(५१) अंधोलडी गीत

रमति करी घरि आवीया, कहे मरुदेवी माय ।
 आवो वच्छ अंधोलवा, रुडा, त्रिभुवन केरडा राय ॥
 ऋषभ जी अंधोलियो अंधोलडी अंगि सोहाय ।
 अंधोलिये प्रथम जिनेंद्र अंधोलिये त्रिभुवन चंद्र ॥ १ ॥
 अंगि लगाडूं अति भलू, मव मव तु मोगरेल ।
 सखर मूये मुख चोपडु बालू माथे सारु केबडेल ॥ २ ॥
 केसर चंदन बावना भलू मांहि व रास ।
 अंगर तणो रंग जो करी, अंगे उगटणूं सुवास ॥ ३ ॥
 सुन्दर खल चोली करी, नह्यरावे सुरनारि ।
 सुवणं कुंजी जले भरी, नेमि खल-खल निर्मल धारि ॥ ४ ॥
 जब अंधोलि उठिया अंगोधि जिन अंग ।
 रंग सुरंग विराजितुं पहेर्या नाहना पीतांबर चंग ॥ ५ ॥
 आंजि आंखि सोहामणी, त्रिभुवन जन मोहंत ।
 अति सुन्दर केसर तणुं, रुडु निजबट तिलक सोहंत ॥ ६ ॥

उठ्या कुंभर कोडामणा, करो सुखडली सार ।
 वेसी सुवर्ण बैसरों, मेहलू मेवा मीठा मनोहार ॥ ७ ॥
 खारिक लहू लेखानवां दास बदाम अखोड ।
 पिस्तां चारोली भली, खातां मनस्युं थाये धग्लू कोड ॥ ८ ॥
 घेवर फीसी खाजली, सखर जलेबी जांणि ।
 मोदकने तज सांकली चप्प्या साकरिया रस खाणि ॥ ९ ॥
 एम नाना विध सूखडी, करो उठ्या नाभि मल्हार ।
 खाधा पान सुरंगस्थुं, भरुदेवी करे सिरणमार ॥ १० ॥
 भिणो भगो विराजतो बांधी घटी आसोद ।
 नवल पछेडी सोभती मोह्य मोलियो सुरनर वृं ॥ ११ ॥
 काने कुंडल लहकतां, हार हैए भलकंत ।
 कडिदोरी कडि उपतो, पगे धुघरडी घमकंत ॥ १२ ॥
 बाजू बंध सोहामणी, राखडली मनोहार ।
 रूपे रतिपति जीतीयो जाये कुमुदचन्द्र वलिहार ॥ १३ ॥

(५२) चौबीस तीर्थंकर देह प्रमाण चौपई

आवि जिनेश्वर प्रणमो पाय ।
 सुगता धर्म निवारण राय ॥
 धनुष पंचसे उंच शरीर ।
 कमक कांति शोभित मंभीर ॥ १ ॥
 अजित नाथ आये सुर लोक ।
 जनम मरणा ना टाले शोक ॥
 धनुष आए लेने पचास ।
 उंच परे हाटक सम भास ॥ २ ॥
 संभव जिन सुख आये बहु ।
 अहि निश सेव करे ते सह ॥
 धनुष ब्यारसे दे प्रमाण ।
 हेम वरण शोभे वरणाथ ॥ ३ ॥
 अभिनंदन समतां दुख टले ।
 मन ना वंछित संघ ॥
 उठते मंझित काय ।
 हेम कांति दीठा सुख थाय ॥ ४ ॥

सुमतिनाथ वर मति दातार ।

उतारे भव सागरनो धार ॥

धनुष त्रिणसे सोहे देह ।

जत रोचि पूजो जिन एह ॥ ५ ॥

पमकांक्षति करुणा कर क्षीव ।

सुर नर किन्नर सारे सेव ॥

चाप अढीसे मूरति मान ।

अरुण अनूपम दीये बानि ॥ ६ ॥

सेवो सुंदर देव सुपास ।

जि पूरे वर मननी आस ॥

उंच पणो तनु शत युग चाप ।

नील वरुण टाले संताप ॥ ७ ॥

अश्रभास चंद्रानन भलो ।

शत मुख सेव करे जगतिलो ॥

धनुष डौढ़ मो मान जिणंद ।

गौर कांति टाले भव फंद ॥ ८ ॥

पृथ्वीसेवो मन शुद्धि ।

जे आये अति निर्भल बुद्धि ॥

सोज सरासन तनु उत्तंग ।

ऊजलडूं सोभे जसु अंग ॥ ९ ॥

शीतलनाथ सुशीतल बाणि ।

जे जितथर गुण गणनी खारिण ॥

नेऊ चाप शरीर अनूज ।

हेम वरुण सेवे जस भूप ॥ १० ॥

सेवो देव भलो अयोध ।

जे आपे मन वंछित दान ॥

ऊंच पणो विमळ ।

धनुष हेम सम तनु जगदीश ॥ ११ ॥

वासुपूज्ये पूजो मन रंग ।

जे पहिरे नख भूषण अंग ॥

सित्यर चाप अरुणस्युं रूप ।

तेहनें नित्य उबेधो धूप ॥ १२ ॥

दोहा—पुण्य करो रे माणिया, पुण्य भल संसार ।
 पुण्ये मन वंछित मिले, रूप रंगीली नारि ॥ १३ ॥
 पाप न कीजे पाहुया, पाप धकी दुख थाय ।
 पापी भार्यो प्रारणियो, च्यारे गति में जाय ॥ १४ ॥
 चौपाई—वंदो विमल विमल गुणवंत ।
 जेहना चरण नमे नित संत ॥
 साठि शरासन देहज कर्यो ।
 हेम वरण मुगति जह रह्यो ॥ १५ ॥
 समरो देव दयाल अनंत ।
 अवर न कीजे छोटा संत ॥
 देह शरासन बे पंच बीस ।
 हाटक सरखी छवि नवि रीस ॥ १६ ॥
 धर्मनाथ नें मन मो धरो ।
 जित शिवरमणी हेली बरो ॥
 बीस पनर धनुष सोहंत ।
 हेमवरण सुर नर मोहंत ॥ १७ ॥
 शांतिनाथ नूँ समरो नाम ।
 जिन अघात टाले से ठाम ॥
 विसुणां बीस शरासन बैर ।
 हेम वरण जागो नवि फेर ॥ १८ ॥
 कुंथु जितेश्वर करुणा कंद ।
 जेहना चरण नमे सुर वृंद ॥
 धनुष बीस पनर तन काय ।
 'हेम' वरण सुर नर जस गाय ॥ १९ ॥
 समर्या मिद्धि करे अरनाथ ।
 मुगति पुरी नो जे जिन साथ ॥
 धनुष बीस ऊंचा अति भला ।
 शात कुंभ नरखी तनु कला ॥ २० ॥
 मल्लि जितेश्वर महिमा घणो ।
 जेह टाले फेरो भवतंशो ॥
 ऊंचू अंग धनुष पंच बीस ।
 हेम वरण सेवो निश दीश ॥ २१ ॥

पूजो जिन मुनिसुखत सदा ।

रोग सोय नव आवे कदा ॥

धनुष बीस तनु कलि कांति ।

जेहु नामे नासे भव भ्रांति ॥ २२ ॥

सेवो भमि नमि तस चरण ।

सेवक जन नै शिव सुख करन ॥

पन्नर चाप शरीर सु हेम ।

वरण भस्म लो जसना क्षेम ॥ २३ ॥

पूजो पद नेमीश्वर तरा ।

जिम पहोले सजनी सहु परा ।

उंच परो दश धनुष मृत्गाम ।

काय कला दीसे अभिराम ॥ २४ ॥

भविष्य सहु समरो जिन पास ।

जिम पहोले सहु मननी आस ॥

उंच परो दीसे नव हाज ।

हरीत वरण दीसे जगनाथ ॥ २५ ॥

महावीर बंदू त्रिण काल ।

जिम मेटे भव जग जंजाल ॥

सात हाथ सोहे जस तनू ।

हेम वरण शोभे भति घरू ॥ २६ ॥

ए चौबीसे जिनवर नमो ।

जिम संसार बिषे नबि भमो ॥

पामो अविचल सुखनी खारि ।

कुमुदचन्द्र कहे मीठी वारि ॥ २७ ॥

(५३) श्री गौतम स्वामी चौपई

प्रेह ऊठी लियो गौतम नाम ।

जिम मन बंछित सीभे काम ॥

गौतम नामि पाप पलाय ।

गौतम नामि भावठिजाय ॥ १ ॥

गौतम नामे नासे रोग ।

गौतम नामे सुन्दर भोग ॥

गौतम नामे गुरु संपजे ।
 गौतम नामे भूपति भजे ॥ २ ॥
 गौतम नामे गुरुने आत्त ।
 गौतम नामि सच्छि विलास ॥
 गौतम नामि सब अघ टले ।
 गौतम नामि सज्जन मिले ॥ ३ ॥
 गौतम नामे बाघे बुद्धि ।
 गौतम नामि नव निधि सिद्धि ॥
 गौतम नामे रूप अपार ।
 गौतम नामे हय गय सार ॥ ४ ॥
 गौतम नामि भंदिर धरणा ।
 गौतम नामि सुख सह तरणा ॥
 गौतम नामि गमती नारि ।
 गौतम नामे मोहे " " " " ॥ ५ ॥
 गौतम नामि बहुदी करा ।
 गौतम नामि नावे जरा ॥
 गौतम नामि विष उत्तरे ।
 गौतम नामे जलनिधि तरे ॥ ६ ॥
 गौतम नामे विद्या धरणी ।
 गौतम नामे निविष करणी ॥
 गौतम नामि हरी नवि नजे ।
 गौतम नामे नवि आसडे ॥ ७ ॥
 गौतम नामे मोहे शोक ।
 गौतम नामे माने लोक ॥
 सेवो गौतम गणधर पाय ।
 कुमुदचन्द्र कहे शिव सुख थाय ॥ ८ ॥

(५४) संकटहर पार्श्वनाथनी विनती

गौतम गणधर प्रणमू पाय, जेह नामे निरमल मति थाय ।
 गासु पास जीतेन्द्र ॥ १ ॥
 अश्वसेन कुल कमल तभोमणी, जग जीवन जिनवर श्रीभोवन धरणी ।
 वामा राणी नंदो ॥ २ ॥

कमल महा मदकरी पंचानन, भवोक्त कुमुद वन हिमकर आनन ।

भव भय कानन दावो ॥ ३ ॥

नील वरण अति सुन्दर सोहे, निरखंता सुर नर मन मोहे ।

मनु मंगल भावो ॥ ४ ॥

नगर वराणसी जनम ज कह्यो, दरशन दीडे सिब सुख लहीये ।

महीयले महिमावंत ॥ ५ ॥

बाल पगो जर ... सीधो, मोह महाभटनो क्षय कीधो ।

लीधु पद अरिहंत ॥ ६ ॥

समोहसरण जीनवरनु राजे, वेधल ज्ञान कला अति छाजे ।

भाजे भव संदेह ॥ ७ ॥

बाणी भधुरी मनोहर गाजे, यण बाजा बाजित ज बाजे ।

नाजे पावस मेह ॥ ८ ॥

देस विदेस बीहार करीने, कर्म पलोन सह दूर हरीने ।

पाम्या परमानंदो ॥ ९ ॥

तुम नामे सह भावेठ भाजे, तुम नामे सुख संपति छाजे ।

छुटे भवना फंद ॥ १० ॥

रोग सोग चिता सह नासे, तुम नामे रही मल भाजे ।

आखंद अंग अपार ॥ ११ ॥

तुम नामे मेघल भद्र जलभर, रोग चढो केशरी अति दुद्धर ।

तेन करे कन धार ॥ १२ ॥

तुम नामे शीतल दावानल, तुम नामे फणपति अति चंचल ।

नेह न करे मन सोस ॥ १३ ॥

उद्धति अश्रियण थलम बलाकर टले दुष्ट जलंधर ।

न हो बंधन सोख ॥ १४ ॥

मात पिता तुम सज्जन स्वामि, तह्य बांधव तह्य अंतर जामि ।

तमे जग गुरु मने ध्याउ ॥ १५ ॥

संकटहर श्री पाश जिनेश्वर, हांखोट नयरे अतिसय सोभाकर ।

नित नित श्री जीन गाउ ॥ १६ ॥

जे नर नारि मनसु भणसे, तेहने घर नव निष संपसे ।

लहसे अविचल ठाम ॥ १७ ॥

श्री रत्नकीर्ति सुरिवर जतिराय, तेह परमादे जिन गुण गाय ।

कुमुदचन्द्र सुर जामि ॥ १८ ॥

(५५) लोडण पार्श्वनाथनी विनती

ससरुं सारदा देवि माय, अहनिशि सुर नर सेवे पाय ।

आये वचन विलास ॥ १ ॥

लाड देस दीसे अभिराम, नगर डभोई सुन्दर ठाम ।

जाहा छे लोडण पाश ॥ २ ॥

आवे संघमली मनरंगे, नर नारि बांढे सह संगे ।

पूजे परमानंदो ॥ ३ ॥

जय जयकार करे मन हरषे, जिन उपर कुसुमांजलि बरषे ।

स्तवन करे बहु छंदे ॥ ४ ॥

गाये गीत मनोहर सादे, पच सबद बाजे करि नादे ।

..... नारि वृंद ॥ ५ ॥

बेलुनी प्रतिमा विख्यात, जाणे देस विदेसे बात ।

सोहे शीस फसेंद ॥ ६ ॥

सागरदत्त हतो वराजारो, पाले नियम भलो एक सांरो ।

जिन वंदी जय बानी ॥ ७ ॥

एक समय बाटे उतरीये, जम बावेला जित सांभरीयो ।

संच करे प्रतिधानो ॥ ८ ॥

बेलुनी प्रतिमा आलेखी, बांढी पूजीने मन हरखी ।

ते पशरावि कुपे ॥ ९ ॥

त्यारे ते बलुनी मूरत, जल मांहि धई सुन्दर मूरत ।

अंग अतोपम रूपे ॥ १० ॥

वराजारो ते वेहेलो आव्यो, बलतो लाभ धर्यो एक लाव्यो ।

उतरीयो तेणे ठामे ॥ ११ ॥

सागरदत्त करे सु बिचार, बाटे कुशल न लागी वार ।

ते स्वामिते नामे ॥ १२ ॥

राते सुषन हवू ते त्यारे, केम नांखी कूप संभार ।

काढ ईहा थी मरुने ॥ १३ ॥

तु काचे तांतणवे साडे, काडे हु न वलागुं भामारे ।

... .. तुभने ॥ १४ ॥

वणजारो जाग्यो बेलक सु., उठो उलटकर वरीयो मनसु ।

गयो ताहां परभाते ॥ १५ ॥

सज्जन साथे बात करीने, मुक्यो तांतण जिन समरीने ।

सागरदलो जाते ॥ १६ ॥

कांचे तांतण जिनवर बैठा, लेहे कंता सह लोके दीठा ।

हलवा फूल समान ॥ १७ ॥

बाहेर पधारावि थे सार्या, जे जे जन सहु कोणे जुहार्या ।

आप्पा उलट दान ॥ १८ ॥

जोतीं ह्मडे हरष न भाय, वचने रूप कहु नवि जाय ।

चित्त असंभम थाय ॥ १९ ॥

नाना विध वाजित्र व जाडे' आगल थी खेला न चाडे ।

माननी मंगल गाये ॥ २० ॥

आण्या अघीक दीवांजा साथे, वणजारे लीधा जिन हाथे .

रम्य डंभोई गाम ॥ २१ ॥

ठडे दीन मूरत जोडने, बारू पूजा नमण करीने ।

पधराव्या जिन घामे ॥ २२ ॥

नाम धरुं ते लोडण पास, पंचम काले पूरे आस ।

वाका विधन निवार ॥ २३ ॥

नामे चोर नडे नहीं वाटे, ऊजड अटवी डूंगर घाटे ।

नदीयो पार उतारे ॥ २४ ॥

भूत पिशाच तरां भय टाले, चेडा मंश न संश्रन ।

डाकीणी दूरे आसे ॥ २५ ॥

भयंसर वा पाणी धई जाये, जस नामे विषहर नवि खाये ।

बाघ न आवे पासे ॥ २६ ॥

भव भवनी भावेठ जे मंजे, रण मांहि बेरी नवि गंजे ।

रोग न जावे अंगे ॥ २७ ॥

जेहने नामे नासे सोक, संकट सचला थाये फोक ।

लक्ष्मी रहे नित संगे ॥ २७ ॥

नाम जपता न रहे पास, जनम मरणा टाले संताप ।

पापे भुगति लीनास ॥ २६ ॥

जे नर समरे लोढण नाम, ते पापे मन बाँधित काम ।

कुमुदचंद्र कहे भाषा ॥ ३० ॥

(५६) जिनवर विनती

प्रभु पाय लागु करु सेव ताहारी ।

तमे साभलो श्री जिनराव माहारी ॥

मग्हे मोह वेरी पराभव करे छै ।

चौगति तरणा दुक्कल नही वीसरे छै ॥ १ ॥

हूँ तो लक्ष चोरसिय योन मांहि ।

भस्यो जनम ने मरण करे मभाहे ॥

पूरा में कर्मा कर्म जे धर्म छाडी ।

कबहु ते सहु साभलो स्वामी भाडी ॥ २ ॥

हूँ तो लोभ लंपट थयो कपट कीचा ।

बण मोलवी परतरणा द्रव्य लीचा ॥

बली पंड पोस्यो करी जीव हंसा ।

करी पारकी कुंतली निज प्रसंस्या ॥ ३ ॥

मे तो बालीया पार का मर्म मोसा ।

नहीं भासीया आपणा पाप दोसा ॥

सदा संग कीचो परनारी केरो ।

नहीं पालीवों धर्म जिन राज तेरो ॥ ४ ॥

पद्मोधर लणे पास ।

नहीं संभल्यो जिन उपदेस सुवो ॥

हूँ तो पुत्र परिवार ने मोह मातो ।

नहीं जाणीयो जिनवर काल जातो ॥ ५ ॥

गृहरिभनु पाप करी पंड मार्यो ।

माहा मुरखे नरभव फोक हार्यो ॥

गयो काल संसार आले भमंता ।

सह्यां ते भति दुर्गति दुख अनंता ॥ ६ ॥

घणो कष्ट जिनराज नु देव पाम्यो ।
 हवे सर्व संसारना दुवल वाम्यो ॥
 जारे श्री जिनराज नु रूप दीछू ।
 त्यारे लाचने रूपडलु अमीय वृठ ॥ ७ ॥
 आवी कामघेनु घर माहे चाली ।
 भरी रत्नचितामणी हेम थाली ॥
 जाणू घर तर्णो आगणो कल्पवृक्ष ।
 फलो आलव वाछित दान सौक्ष ॥ ८ ॥
 गयो रोग संताप ते सर्व माछो ।
 जरा जन्मने मरण नो आसना हाछो ॥
 हवे सरणो आप्या तर्णो साज कीजे ।
 कर्या जे अपराध सहु खमीजे ॥ ९ ॥
 घणु दिनबू, नदू छु जगनाथ देवो ।
 मने आप जो भव भज स्वामि सेवो ॥
 एह धीनती भावसुं जे भणसे ।
 कुमुदचंद्र नो स्वामि शिव सौख्य देसे ॥ १० ॥

(५७) राग प्रभाती

जाग रे भविषण उंघ नवि कीजे ।
 धयुंसु प्रभावित नोकार गणीजे ॥ आंचली ॥
 प्रथम अरहुंतनू लीजिये नाम ।
 जेम सरेह अडलां वछित काम ॥ जा० ॥ १ ॥
 सिद्ध समरता आलस मूको ।
 मांणस जनम ते फोकम धूको ॥ जा० ॥ २ ॥
 पंच आधार पाले यतिराय ।
 तेहने बंदता पाप पलाय ॥ जा० ॥ ३ ॥
 जे उवभाय साहे श्रुतवंत ।
 तेहनू ध्यान धरिये एक चित ॥ जा० ॥ ४ ॥
 साधु संमरीई जे व्रत पाले ।
 निमेल ताप करी कर्ममल टाले ॥ जा० ॥ ५ ॥
 पंच परमेष्ठि जे ए नितु ध्याई ।
 कहे कुमुदचंद्र ते नर सुखी थाये ॥ जा० ॥ ७ ॥

(५८) राग प्रभाती-

जागि ही भविषण सफल विहारुं ।
 नाम जिनराज नूत्योत्तले भाण ॥ १ ॥ आंचली ॥
 वृषभ जिन अजित संभव सुखकारी ।
 देव अभिनंदन प्रगट्यो भवहारी ॥ जा० ॥ २ ॥
 सुमिति पद्मप्रभ सागर गुण गाव' ।
 जिनकी सुपासना गुण नरा ध्याये ॥ ला० ॥ ३ ॥
 शिवो चंद्रप्रभ देव जिनराज
 पुष्पदंत नमो जिन सरे काज ॥ जा० ॥ ४ ॥
 सकल सुख खांणी सीतल जिनदेव ।
 सभरो श्रियांस सुर नर करे सेव ॥ जा० ॥ ५ ॥
 पूजतां वासुपूज्य गुण सार ।
 विमल अनंत भवसागर तार ॥ जा० ॥ ६ ॥
 धर्म जिन शांति कुंध भर मल्लि ।
 अंग कीधी जेसो कामनी मल्ल ॥ जा० ॥ ७ ॥
 नमो मुनिसुव्रत नमि दुख चरण ।
 नेमि जिनवर मन वांछित पूरण ॥ जा० ॥ ८ ॥
 पास जिन आस पूरे महावीर ।
 एह चौबीस जिन मेरु समधीरं ॥ जा० ॥ ९ ॥
 जे नर नारी ए बीनती गास्ये ।
 कहै कुमुदचन्द्र ते नर सुखी आस्ये ॥ जा० ॥ १० ॥

राग प्रभाती :

(५९)

जागि हो भविषण उंधीये नहीं घगू' ।
 अयुं सु प्रभाति तूं नाम ले जिन तरू ॥ आंचली ॥ १ ॥
 उठो जिनराजनें देहरे जइए ।
 देव मुखि देखतां जिम सुख लहीये ॥ जागि० ॥ २ ॥
 पछे पद अंदीर्ष श्री गोर केरा ।
 छुटीइ जिम बली भवतरां केरा ॥ जागि० ॥ ३ ॥
 देव गूर साख्य समायक कीजे ।
 पंच परमेष्टी नाम जपीजे ॥ जागि० ॥ ४ ॥

ते पछी मुह वचनांमृत पीजे ।
 जिम भव दुख जलांजलि दीजे ॥जागि०॥ ५ ॥
 कीजीये संगति साधुनी रुडी ।
 जेहथी उपजे नहीं मतिमुंही ॥जागि०॥ ६ ॥
 क्रोध माया मद्य लोभ मूंकीजे ।
 हसीय सुपामने धानजदीजे ॥जागि०॥ ७ ॥
 बोलिये वचनते सर्व सोहातुं ।
 जेहथी उपजे नहीं दुख जातु ॥जागि०॥ ८ ॥
 मूंकीम मोह जंजाल सह छोडु ।
 जोडस्ये को नहीं आयुष बूटे ॥जागि०॥ ९ ॥
 जायछे योवन थाप तुं डारयो ।
 तप जप करीस्ये ने लीजीये लाहो ॥ जागि० ॥ १० ॥
 कहे कुमुदचन्द्र जे एह चितवस्ये ।
 तेहने घरि नितु मंगल विलस्ये ॥ जागि० ॥ ११ ॥

राग प्रभाती

(६०)

आबो रे सहिय सहिलडी संगे ।
 विघन हरण पूजीये पास मनरंगे ॥ आबोली ॥
 नीलवरण तनु सुन्दर सोहे ।
 मुत्तर किन्नरना मन मोहे ॥ आबो० ॥ १ ॥
 जे जिन वंदिता बांछित पूरे ।
 नाम लेता सह पातक बूरे ॥ आबो० ॥ २ ॥
 जे सुप्रभाति उठी गुण गाये ।
 तेहने घरि नव निधि सुख थाये ॥ आबो० ॥ ३ ॥
 भय भय वारण त्रिभुवन नायक ।
 दीन दयाल ए शिव सुख दायक ॥ आबो० ॥ ४ ॥
 अतिशयवंत ए जगमांहि गाजे ।
 विघन हरण वार विसद किराजे ॥ आबो ॥ ५ ॥
 जेहनी सेव करे धरणींद्र ।
 जय जिनराज तु कहे कुमुदचन्द्र ॥ आबो ॥ ६ ॥

राग प्रभाती

(६१)

उदित दिन राज रुचि-राज सुविभाते ।
 भाथ भावच भावय मुभ जातं ॥
 मुंचहे मंदस्व मंचकं नत सुरं ।
 भज भगवंत भभि भूरि भामासुरं ॥ १ ॥
 व्यक्त तारुण्य युत तरुणी वर भोगं ।
 योग युक्ता यति ध्यात धृत योगं ॥ मु० ॥ २ ॥
 धृतह सित वदन कज भविक षत शातं ।
 विदुत तितार तम तन संपत्तं ॥ मु० ॥ ३ ॥
 सुरवर त्रुति मुखर मुख भूरि सुखमा करं ।
 विश्व सुख भूमिनो वंधनत्व हरं ॥ मु० ॥ ४ ॥
 विगत तारा वर विहत धन तंद्र ।
 हंस भासा प्रमुद कुमुदचन्द्र ॥
 मुंचहे मंदस्व मंचकं नत सुरं ॥ मु० ॥ ५ ॥

राग पंचम प्रभाती

(६२)

भावोरे साहेली जइए यादव यणी ।
 पाउले लागीने कीजे कीनती घणी ॥
 आवडो आडंबर करी सेहने ते आव्या ।
 तोरख थी पाछा वली जाता लोक हसाव्या ॥ आ० ॥ १ ॥
 विण बांके किम मूकी ने जाल्या रुडा सामला ।
 मनुस्युं विमासी जुयीं मूकी आमला ॥ आ० ॥ २ ॥
 पीडडा पात्रिरे किम मंदिर रहीध ।
 कुमुदचन्द्र नो स्वामी कृपाल कहीध ॥ आ० ॥ ३ ॥

राग वैशाख प्रभाती

(६३)

जागि हो भयो भयो कहा सोबत ॥
 सुमिरहु श्री जगदीश कृपानिधि जनम बाधिक खोवत ॥ जागि ॥ १ ॥
 गई रजनी रजनीस सिधारे, दिन निकसत दिनकर फुनि उवत ।
 सकुचित कुमुद कमलवन विकसत,
 संपति विपति नयननी दोउ जोवत ॥ जागि ॥ २ ॥
 सजन मिले सब आप सवारध, तुहि बुराई आप शिर डोवत ।
 कहत ५ मुदचन्द्र यान भयो तुहि,
 निकसत घीउ न नीर विलोबत ॥ जागि ॥ ३ ॥

(६) चन्दा गीत

विनय करी रायुल कहे, चन्दा ! वीनतडी अवधारो रे ।
 लज्जल गिरि जई वीनवो, चन्दा ! जिहां छे प्राण आधार रे ।
 गगने गमन ताहुनं खड्डू, चन्दा ! अमीय वरषे अनंत रे ।
 पग उपगारी तू भलो, चन्दा ! बलि बलि वीनवुं संत रे ॥ १ ॥
 तीरण आबी पाछा बल्या, चन्दा ! कदण कारण मुक्त नाथ रे ।
 अण्ण तराओ जीवन सेमजी, चन्दा ! खिए खिए जोडं छुं पंथ रे ॥ २ ॥
 बिरह तरां दुख दोहिला, चन्दा ! ते किम में सहे बाय रे ।
 जल विनां जेम माछली, चन्दा ! ते दुख में न कहे बाय रे ॥ ३ ॥
 में जाम्बुं प्रीउ आवस्थे, चन्दा ! करस्ये हाल विलास रे ।
 सप्त भूमि नेउरडे, चन्दा ! भोगवस्युं सुखराशी रे ॥ ४ ॥
 सुन्दर मंदिर जालियां, चन्दा ! भलके छे रत्ननी जालि रे ।
 रत्नखचित सडी सेजडी, चन्दा ! मगमगे धूप रसाल रे ॥ ५ ॥
 छुन सुखालने पालनी, चन्दा ! मजरख तुरख प्रहार रे ।
 वस्त्र विभूषण नित नवां, चन्दा ! अंग विलेपन सार रे ॥ ६ ॥
 षट रस भोजन नव नवां, चन्दा ! सुखडी नो नही पार रे ।
 राज ऋषि सहू परहरी, चन्दा ! जई चक्षुओ गिरि मभारि रे ॥ ७ ॥
 भूषण भार करै घरां चन्दा ! नग में नेउर भूमकार रे ।
 कटि तटि रसना नडे घनि, चन्दा ! न सहे मोतीनो हार रे ॥ ८ ॥
 भलकति भालिहुं भवहुं, चन्दा ! नाह विना किम रहीये रे ।
 खीटली खति करे मुक्तनें, चन्दा ! नागसा नाग सम कह्ये ॥ ९ ॥
 टिली मोरु नलबट दहे, चन्दा ! नांक फूली नडे नांकि रे ।
 फोकट फरके गोफरो, चन्दा ! चोट लेस्युं कीजे चाकरे ॥ १० ॥
 सेस फुल सीसैं नबि धरुं, चन्दा ! लटकती लन सोहावे रे ।
 धम धम करता घुंघरा, चन्दा ! वीछीया विछि सम भाव रे ॥ ११ ॥
 जे सूतां चिथित उरखे, चन्दा ! ते रहे आज अगासि रे ।
 उन्हाले रवि दोहिलो, चन्दा ! ते किम सहे गिरि वासे रे ॥ १२ ॥
 वरसाले वरसे मेहलो, चन्दा ! बीजलो नो भातकार रे ।
 भंभाबात ते वाज से, चन्दा ! किम सहे भुक्त भरतार रे ॥ १३ ॥
 हिम रले हिय अति पडे, चन्दा ! थर थर कंपे काय रे ।
 ए दिन योग छे दोहिलो, चन्दा ! स्थुं करस्ये यदुराय रे ॥ १४ ॥

पोपटडो बोले पाववूं, चंदा ! मोर करे बहु सोर रे ।
 बापीयडो पिउ पिउ लवे, चंदा ! कोकिल करे दुख खोर रे ॥ १५ ॥
 कर जोडी लागूं पाउले चंदा ! एटलूं करो मुझ काज रे ।
 जाउ मनावो नेम ने, चंदा ! आपूं वधामणी आज रे ॥ १६ ॥
 अंगुलि दश दंते भरु, चंदा ! जई कहो चतुर सुजांश रे ।
 जे मनमथ जग गोलवे, चंदा ! ते तुझ मनि छे आण रे ॥ १७ ॥
 ते माटें मनमथ मोकली, चंदा ! कंतने करो आधार रे ।
 सोल कला करी दीपतो, चंदा ! तुं रहें हर शिर लीनो रे ॥ १८ ॥
 भुझ विरहणी ना दीहडा, चंदा ! वरस समान ते थाव रे ।
 जो तहुं काम ए नवि करो, चंदा ! जगह सारथ थाय रे ॥ १९ ॥
 संदेसो लेई संचर्यो चंदा ! गयो ते नेमि जिन पासे रे ।
 मुगति करी घणूं प्रीछव्या, चंदा ! मनस्युं थयो ते निरास रे ॥ २० ॥
 पाछावली थावी कहाूं, चंदा ! ते तो न माने बोल रे ।
 सांभलि रागुल सांचरी चंदा ! भुंकी मोहनो जंजास रे ॥ २१ ॥
 संयम लेई व्रत आचरी चंदा ! सोलवे स्वर्गे हवी देवरे ।
 अष्ट महा ऋद्धि जेहनें चंदा ! अमर अमरी करे सार रे ॥ २२ ॥
 श्री मूलसंधे मंडणों चंदा ! सुरिवर लक्ष्मीचन्द रे ।
 तेह पाटि जगि जाणिये, चंदा ! अभयचन्द्र मुण्डिद रे ॥ २३ ॥
 पाटि अभयनदी हवा चंदा ! रत्नकीरति मुनिराय रे ।
 कुमुदचन्द्र जस उजलो, चंदा ! सकल वादी नमें पाय रे ॥ २४ ॥
 तेह पाटि गुरु गुणातिलो, चंदा ! अभयचन्द्र कहे चांदो रे ।
 जे मास्ये एह चदलो, चंदा ! ते जगमा घणूं नंदो रे ॥ २५ ॥
 ॥ भ० अभयचन्द्र कृत चंदा गीत समाप्त ॥

राग नट

(७०)

पेखो सखी चन्द्रप्रभ मुखचन्द्र ॥ टैक ॥

सहस किरण सम तनु की आभा, देखत परमानन्द ॥ पेखो ॥ १ ॥
 समयसरण सूझभुति विभूषित, सेव करेत सत इन्द्र ।
 महासेन कुल कंज दिवाकर, जग गुरु जगदानन्द ॥ पेखो ॥ २ ॥
 मनमोहन मूरति प्रभु तेरी, मैं पायो परम मुनींद ।
 श्री शुभचन्द्र कहे जिन जी मोक्, राखो चरन अरविंद ॥ पेखो ॥ ३ ॥

राग कल्याण

(३)

आदि पुरुष भजो आदि जिनैदा ॥ टेक ॥
 सकल सुरासुर दोख सु व्यतर, नर खग दिनपति सेवित चंदा ॥
 जुग आदि जिनपति भये पावन ।
 पति उदारण नाभि के नंदा ॥ १ ॥
 दीन दयाल कृपा निधि सागर ।
 सार करो अथ तिमिर दिनेदा ॥ आदि० ॥ २ ॥
 केवलग्यांन थे सब कष्ट जानत ।
 काहू कहुँ प्रभु भो मति मंदा ॥
 देखत दिन दिन चरण सरण ते :
 विनती करत यो सूरि शुभचन्दा ॥ आदि० ॥ ३ ॥

राग सारंग

(४)

कौन सखी सुख लावे श्याम की ॥ कौन सखी० ॥
 मधुरी धुनी मुखचन्द विराजित, राजमति गुणभावे ॥ श्याम० ॥ १ ॥
 अंग विभूषण मनोमय मेरे, मनोहर माननी पावे ।
 करो कष्ट तंत मंत मेरी सजनी, मोहि प्राननाथ भीलावे ॥ श्याम० ॥ २ ॥
 राजगदनी गुण मंदिर श्यामा मनमथ मान सतावे ।
 कहा अवगुन अब दीनदयाल, छोरि मुगति मन भावे ॥ श्याम० ॥ ३ ॥
 सब सखी मिलि मन मोहन के ढिग, जाई कथा जु सुनावे ।
 सुनो प्रभु श्री शुभचन्द्र के साहेब, कामिनी कुल क्यों लजावे ॥ ४ ॥

(५) शुभचन्द्र हमशी

पावन पास जिनेश्वर बंदु अंतरीक्ष जिनदेव ।
 श्री शुभचन्द्र तणा गुण गाऊं, वागवादिनी करि सेव रे ॥ १ ॥
 शशि वयणी मृग नयणी धावो सुन्दरी सह मलि संगे ।
 गाऊ श्री शुभचन्द्र तखोवर पाठ महोक्ष रंगे ॥ २ ॥
 श्री गुजराते मनोहर देशे, जलसेन नगर सोहावे ।
 गढ़ मठ मंदिर पोलिपगार, सबस खातिका भोवरे ॥ ३ ॥
 'हुबड' वंश हिरणी हीरा, सब सोहे मनजी धन्य ।
 तस मन रंजन माणिक दे शुभ, जायो सुन्दर सख रे ॥ ४ ॥

बालपणे बुधिवंत विचक्षण, विद्या चउद निधान ।

जैनागम जिन भक्ति करे एह, जिन सासन बहु तान रे ॥ ५ ॥

व्याकर्ण तर्क वितर्क अनोपम, पुराण विमल भेद ।

अष्ट सहस्री आदि गंध अनेक जु, च्हों विद जारणे वेद रे ॥ ६ ॥

लघु दीक्षा लीधी भगवंत, बाल पडे जयकारी ।

नवल नाम सोहे अति सुन्दर, सहेज सागर ब्रह्मचारी रे ॥ ७ ॥

छाया रजनी कर वदन विलोकित, अर्द्ध ससी सम भाल ।

पंकज पत्र समान सुलोचन, ग्रीवा कंदु विशाल रे ॥ ८ ॥

लांशा शुक चंचीसम सुन्दर अथर प्रबाली वृंद ।

रक्तवर्ण द्विज पंक्ति विराजित, नीरखंता आनन्द रे ॥ ९ ॥

रूपे मदन समान मनोहर, बुद्धे अभयकुमार ।

सीले सुदर्शन समान सोहे, गौतम सम अवतार रे ॥ १० ॥

एकदा अति आनंदे बोले, अभयचन्द्र जयकार ।

सुराण्यो सहु सज्जन मन रंगे, पाट तरणे सुविचार रे ॥ ११ ॥

सहेज सिन्धु सम नहीं को पतिवर, जगमा जाणो सार ।

पाट योग छे सुन्दर एहने, आपयो गछ नो मार रे ॥ १२ ॥

संघपति प्रेमजी हीरजी रे, सहेर वंश शृंगार ।

एकलमल अखई अति उदयो, रत्नजी गुण भंडार रे ॥ १३ ॥

नेमीदास निरूपम नर सोहे, अखई अबाई वीर ।

हुंबड़ वंश शृंगार शिरोमणि, बाधजी संघजी धीर रे ॥ १४ ॥

रामजीमन्दन गामजी रे, जीबंघर वर्द्धमान ।

इत्यादिक संघपति ए सात आवा श्रीपुर गाम रे ॥ १५ ॥

पाट महोछव मांड्यो रंगे, संघ चतुर्विध आव्या ।

संघपति श्री जगजीवन राखो, संघ सहित ते आव्या रे ॥ १६ ॥

दक्षण देशनो गछपती रे, धर्मभूषण तेढाव्या ।

अति आडंबर साथे साहमो करीने तप धराव्या रे ॥ १७ ॥

शुभ मुहूरत जोई जिन पूजा, शांतिक होम विधान ।

जमणवार युग ते जल जात्रा, आपे श्रीफल पान रे ॥ १८ ॥

संचत् सत एकबीरोरे, जेठ बढी पडवे चंग ।

जय जयकार करे नरनारी, डाले कलश उत्तंग रे ॥ १९ ॥

धर्मभूषण सूरि मंत्र ज आप्या, आप्या श्री शुभचन्द्र ।

अभयचन्द्र ते पाटि विराजि, सेवे सज्जन दृष्ट रे ॥ २० ॥

दिम दिम महन तबलन फेरी, तत्ताथेई करंत ।

पंच शब्द वाजिश ते वाजे, नादे नभ गजजंत रे ॥ २१ ॥

मनोहर मानिनि मंगल गावत, गंद्रव करत सुगान ।

वंदीजन बिरुदावली बोले, घापे अगणित दान रे ॥ २२ ॥

श्री मूलशंख सरस्वती गच्छे, विद्यानन्दी मुनींद ।

मल्लिभूषण पद पंकज दिनकर, उदयो लक्ष्मीचन्द्र रे ॥ २३ ॥

सहैर वंश मंडण मुकटामणि, अभयचन्द्र माहंत ।

अभयचन्दी मन मोहन मुनिवर, रत्नकीरति जयवंत रे ॥ २४ ॥

मोठ वंश भर हंस विचक्षण, कुमुदचन्द्र जयकारी ।

तस पद कमल दिवाकर प्रगट्यो, सेव करे नरनारी रे ॥ २५ ॥

अभयचन्द्र गरुडो गच्छनायक सेवित नृप नर बृंद ।

तस पाटे गुरु श्री संघ सानिध आप्या श्री शुभचन्द्र रे ॥ २६ ॥

परवादी सिंधुर पंचानन, वादी मां अकलंक ।

अमर मांहि जिम इंद्र जिगजे, सरवरि मांहि ससांक रे ॥ २७ ॥

दिक्स मांहि जिम रवि दीपंतो, गिरि मां भेरु कहंत ।

तिम श्री अभयचन्द्र ते पाटि, श्री शुभचन्द्र सोहंत रे ॥ २८ ॥

श्री शुभचन्द्र तणीए हमची, जे माये जिन धामे ।

श्रीपाल विवुध वदे ए वांगी, ते मन वंछित पाये रे ॥ २९ ॥

॥ इति श्री शुभचन्द्रनी हमची समाप्त ॥

(६)

प्रभाति

सुप्रभाति उठी श्री गोर गायो ।

जेम मन वंछित वेग ले पाउ ।

सूरि अभयचन्द्र नां पद प्रणामीजे ।

जमन जनम तरां दुख गमीजे ॥ सु० ॥ १ ॥

पंच महाव्रत सुध ला धारी ।

पंच समिति धरे अंग उदारी ॥ सु० ॥ २ ॥

अथ गुपति गुरु चारित्र्य पाले ।

क्रोध माया मद लोभ ने टाले ॥ सु० ॥ ३ ॥

जेहने शील आभूषण सोहे ।

दीठछे भविष्यमाना मन मोहे ॥ सु० ॥ ४ ॥

वयण सुधारस पां अति मीठा ।

निरखतां लोखने अभिय पईठा ॥ सु० ॥ ५ ॥

वचन कला करी विष्व ने रंजे ।

बादी अनेक तरणा मद भंजे ॥ सु० ॥ ६ ॥

श्री मूलसंघ मंडण मुनिराज ।

प्रगट्यो संबोधवा काजि ॥ सु० ॥ ७ ॥

रत्नकीरति पद कुमुद कशि सोहे ।

अभयचन्द्र दीठे जगत मन मोहे ॥ सु० ॥ ८ ॥

तारण तरण भेदन अवतार ।

नित नित वंदित विबुध श्रीपाल ॥ सु० ॥ ९ ॥

(७)

प्रभाति

सुप्रभाति नमो देव जिगंद ।

रत्नकीर्ति सूरि सेवो आनंद ॥ आंचली ॥

सबल प्रबल जेणें काय हराव्यो ।

जालणा पोरमांहि यतीये बधाव्यो ॥ सु० ॥ १ ॥

बाग्यादिनी बदनै बसे एहने ।

एहनी उपमा कहीसे केहने ॥ सु० ॥ २ ॥

गच्छपती गिरवो गुण गम्भीर ।

शील सनाह धरे मनधीर ॥ सु० ॥ ३ ॥

जे नरनारी ए गोर भीत गासैं ।

गखेश कहे ते शिव सुख पास्ये ॥ सु० ॥ ४ ॥

(८)

प्रभाति

आवो साहेलडी रे सहू मिलि संगे ।

बादो गुह कुमुदचन्द्र ने मनि रंगि ॥ आवो ॥ १ ॥

छंद आगम अलंकार तो जाण ।

चारु चिन्तामणि प्रमुख प्रमाण ॥आवो०॥ २ ॥

तेर प्रकार ए चारित्र सोहे ।

दीठडे भविष्य जन मत मोह ॥आवो०॥ ३ ॥

साह सदाफल जेहनो तात ।

घन जनम्यो पदमां साई मात ॥आवो०॥ ४ ॥

सरस्वती गच्छ तरणो सिणगार ।

बेगस्युं जीतियो दुर्द्धर मार ॥आवो०॥ ५ ॥

महीयले मोढ बंशे उ विख्यात ।

हाथ जोडाविधा वादी संघात ॥आवो०॥ ६ ॥

जे नरनारी ए गोर गुण गाये ।

संयमसागर कहे ते सुखी थाये ॥आवो०॥ ७ ॥

गीत

(६)

काल मृत्ताफलनी

श्री आदि जिन नमी पाय रे, प्रणमी भारती माय रे ।

गास्युं गच्छपति राय रे, गातां सुख बहु धाय रे ॥

आवो साहेली सघली नारि रे, वांदो कुमुदचन्द्र सार रे ।

रत्नकीर्ति पाटि उदार रे, लघु पणें जीत्यो जिणें मार रे ॥आचली॥

गोमंडल नयर विशाल रे, तिहो वसे मोढ बंश गुणमाल रे ।

सदाफल साह गुणवंत रे, धरि रामापदमा संत रे ॥आवो०॥

ते बेहू कुलि उपनो वीर रे, बत्तीस लक्षण सहित शरीर रे ।

बुद्धि बहोत्तरि छे गंभीर रे, वादी नग खंडन वज्र समवीर रे ॥आवो०॥

श्री मूलसंघे गोवम समान रे, सरस्वति गच्छ महिमा निधान रे ।

तनू कनक समवंत रे, मोढा महीपति ... मान रे ॥आवो०॥

पंच महाव्रत पाले अंग रे, त्रयोदश चारित्र छे अंग रे ।

बावीस परीसा सहे अंगिरे, दर्शन दीठे उपजे रंग रे ॥आवो०॥

रत्नकीर्ति बोले वांणी रे, अमृत मीठी अमीय समाणि रे ।

बात देशांतरे जांणी रे, पाटि आप्यो सुख खांणी रे ॥आवो०॥

कहांन जी सहसकरण महिदास रे, वीर भाई गोपाल पूरे आसरे ।

पाट प्रतिष्ठा महोत्सव कीर्त रे, जग मां यश बहु लीष रे ॥आवो०॥

बारडोली नगरे मनोहार रे, आप्यो पदनो भार रे ।
तब हवो जय जयकार रे, कहे संयमसागर भवतार रे ॥ श्रावो० ॥

राग धन्यासी

(१०)

श्री नेमिश्चर गीत

सखिय सह मिलि वीनवे वर नेमिकुमार ।
लोरण थी पाछा बस्या, करीस्यो रे विचार ॥ १ ॥

राजीमती अति सुन्दरी गुणनो नहीं पार ।
इंद्राणी नहीं अनुसरे जेहनूं रूप लगार ॥ २ ॥

वेणी विशाल सोहांभणी जीत्यो क्याम फणिव ।
भाल कला अति खूबड़ी, भरथो जस्योचन्द ॥ ३ ॥

आंखडली कज पाखड़ी, काली अणियाली ।
काम तरा शर हारिया जेहनूं सु नीहाली ॥ ४ ॥

आनन हसित कमल जस्युं नाक सरल उत्तंग ।
धणूं अ करीस्युं बखारणीमे सुडा चंच सुचंग ॥ ५ ॥

अरुण अधर सम उपता जेहवी पर वाली ।
वचन मधुर जांणी करी कोयल थई काली ॥ ६ ॥

कंठे कंबु हरावीयो ह्यई हरे चिन्त ।
बाहुलता अति लेहकती कर मन मोहंत ॥ ७ ॥

अधर अनोपम पातलू जेहनूं पोयण पांन ।
हरी लंकी कटि जाणिये उरुं रंभ समान ॥ ८ ॥

पान्हीस उची अति रातडी आंगलडी तेहवी ।
सर्व सुलक्षण सुन्दरी नहीं मलसे एहवी ॥ ९ ॥

रहो रहो साज पाछा चलो कस्य वचन ते मानो ।
हास विलास करो तह्ये अति धणूं माताणि ॥ १० ॥

एह वचन मान्युं नहीं लीधो संयम भार ।
तप करीस्यां सुख पामिया सज्जन सुलकार ॥ ११ ॥

कुमुदचन्द्र पद चांदलो अभयचन्द्र उदार ।
धर्मसागर कहे नेमजी सहूने जय-जयकार ॥ १२ ॥

॥ इति श्री नेमिश्चर गीत ॥

गीत

(११)

राग सारंग

आबो रे भादिनी गज वर गमनी ।
 वादवा अभयचन्द्र मिली मृगनयणी ॥ आ० ॥ १ ॥
 मुगताफलनी थाल बगीजे ।
 गच्छ नायक अभयचन्द्र वधावीजे ॥ आ० ॥ २ ॥
 कुंकुम चन्दन भरीय कचोली ।
 प्रेमे पद पूजो गोरना सहसली ॥ आ० ॥ ३ ॥
 हुं बड़ वंशे श्रीपाल साह तात ।
 जन्मयो गरी रतन कोड़ा दे आत ॥ आ० ॥ ४ ॥
 लघु पणें लीखो महावत भार ।
 मन वश करी जीत्यो दुखर सार ॥ आ० ॥ ५ ॥
 तर्क नाटक आगम अलंकार ।
 अनेक शास्त्र भण्या मनोहार ॥ आ० ॥ ६ ॥
 भट्टारक पद एहने छाजे ।
 जेहनी यश जगसां वाह गाजे ॥ आ० ॥ ७ ॥
 श्री मूलसंघे उदयो महीमा निधान ।
 पावक जन करें मेहु गुण गान ॥ आ० ॥ ८ ॥
 कुमुदचन्द्र पाटि जयकारी ।
 धर्मसागर कहे गाउ नरनारी ॥ आ० ॥ ९ ॥

(१२)

कुमुदचन्द्रनी हमची

सुन्दर नर एक निरुपम उदयो, अरुनी अधिक उदार ।
 मूलसंघ मुगटामणि दिनमणि सरसति गच्छ भंडार रे ॥ १ ॥
 हमचबी माहरी हेलि रे, गोरनी बडो मोहन वेलि ।
 रत्नकीरति पाटई कुमुदचन्द्र सोहे, सेवो सजन साहेल रे ॥ २ ॥
 सकल रत्न गुणे गरी मंडित, पंडितल दन जाय ।
 सदाफल सा तस नयरि, सुन्दर पदमाबाई धन धाय रे ॥ ३ ॥
 एवेहू कूखे नर निपनो पावन पुरुष पवित्र ।
 बास ब्रह्मचारी संग नहीं नारी, समकित चित सोहे विवरे ॥ ४ ॥
 सामुद्रिक शुभ लक्षण सोहे, कला बहोतरि अंग ।
 चतुर चउरत्नहे पंच प्रेमे बहे जण्य खणहुरे दंग रे ॥ ५ ॥
 सील सोहागी ज्ञान गुणकरी, कंदर्प वर्ष हराव्यो ।
 भाग्य आपणो सोहे गोर सजनी, उत्तरयो ग्राहां आको रे ॥ ६ ॥
 संघपति काहानजी सेहेस करण धमवीर भाई गूणो मल्लिदास ।
 गुण मंडित गोपाल सहमली, आख्यो पटोघर पास ॥ ७ ॥
 कल्याणकीरति आचार अनोपम, उपम अरुनी अपार ।
 सहिभावत महीमा मुनिधर, माने मोटा माहत रे ॥ ८ ॥
 संवत् सोल छपन्ने संवत्सर प्रगट पटोघर आप्या ।
 बारबोली नयरे रत्नकीरति गोरे सुर मंत्र शुभ आप्या ॥ ९ ॥
 दिन-दिन दीपे परमत जीये जति जिन शासनचन्द्र ।
 श्रीसंघ सानिध नाम कहे, गोर कुमुदचन्द्र मुनेन्द्र रे ॥ १० ॥
 पंडित पणो प्रसिद्ध प्राकमो बागवादिनी वर एहने ।
 सेवो सुरतर चित्यो चिन्तामणि उपमा नहीं केहने रे ॥ ११ ॥
 परम पावन गोर पूजनां प्रेमे अस जो करे मन्त्र मन्त्र ।
 नयणें नीरखी सजनी सहे गोर ते दिन कहिस्ये धन्व रे ॥ १२ ॥
 साथ पुरुष जेम श्रीजिन वांछे मधुकर मालति संग ।
 मान सरोवर मराल बाछे, चतुरने चतुर सुरंग रे ॥ १३ ॥
 चकवी जिम दिन करने बाछे, चातुक मेह मन धाय ।
 तिम बंछू हूं कुमुदचन्द्र गोर, पूजतां पाय पलाय रे ॥ १४ ॥
 सधाष्टके सोमतो सेहे गोर, वादी एकही हे सजनी ।

मनोरथ पहीचसे मन तरा रे, सफल फलस्ये दिन रजनी रे ॥ १५ ॥
 विद्यानदि पाठ मल्लिभूषण धन लखमीचन्द्र अभेचन्द्र ।
 अभेनंदी पाठ पटोधर सोहे रत्नकीरति सुनींद्र रे ॥ १६ ॥
 कुमुदचन्द्र तस पाठइ दिन मणि वडी ख्यात जगि जेह ।
 बदन तो सुन्दर वारी जलधर श्री संघ साथे नेह रे ॥ १७ ॥
 हरषे ह्मची कुमुदचन्द्रनी गाय सुणे नर नार ।
 संकट हर मन बलित पूरे, गणेश कहे जयकार रे ॥ १८ ॥

॥ इति श्री कुमुदचन्द्रनी ह्मची समाप्त ॥

अवशिष्ट

ब्रह्म जयरज

(४५)

ये भट्टारक सुमतिकीर्ति के शिष्य थे । इनके द्वारा लिखा हुआ एक गुरु छन्द प्राप्त हुआ है जिसमें भट्टारक सुमतिकीर्ति के पट्ट शिष्य भट्टारक गुणकीर्ति के पट्टाभिषेक का वर्णन दिया हुआ है । पूरे गुरु छन्द में २६ पद्य हैं जो विविध छन्दों वाले हैं । ब्रह्म जयरज ने और कितनी रचनाएँ लिखी इसकी गिनती अभी नहीं की जा सकी है । उक्त रचना में संवत् १६३२ में होने वाले पद्मकीर्ति के पाठ महोत्सव का वर्णन आया है । गुरु छन्द का सार निम्न प्रकार है--

भट्टारक गुणकीर्ति सुमति कीर्ति के शिष्य थे । राय देश में चतुरपुर नगर था । वहाँ हुंवंड जातीय श्रेष्ठी सहजो अपार वैभाव के स्वामी थे । पत्नी का नाम सरियादे था । सहजो जाति के शिरोमणि थे और चारों ओर उनका अत्यधिक समादर था । उनके पुत्र का नाम गणपति था जिसके जन्म पर विविध प्रकार के उत्सव आयोजित किये गये थे । युवावस्था के पूर्व ही उसने कितने ही शास्त्रों का अध्ययन कर लिया । वे अत्यधिक सुन्दर थे । उनका शरीर अत्यधिक कोमल एवं आंखें कमल के समान थी । लेकिन गणपति चिन्तनशील थे इसलिये विवाह के पूर्व ही वे सुमतिकीर्ति के शिष्य बन गये । उनका नाम गुणकीर्ति रखा गया ।

साधु बनने के पश्चात् उन्होंने बागड देश के विविध गांवों में बिहार करना प्रारम्भ किया । हुंवरपुर में संघपति लखराज द्वारा आयोजित महोत्सव में उन्हें पाँच महाव्रत पालन का नियम दिया गया । इसके पश्चात् शान्तिनाथ जिन चंदवालय में उन्हें उपाध्याय पद से विभूषित किया गया । उपाध्याय जीवन में उन्होंने गोमटसार आदि ग्रन्थों का पठन पाठन किया । कुछ समय पश्चात् उन्हें

आचार्य बना दिया। गुणकीर्ति अत्यधिक प्रतिभाशाली एवं चतुर सन्त थे। ज्ञान एवं विज्ञान के वे पारगामी विद्वान् थे। संघ व्यवस्था में वे कुशल थे। उनके गुरु भट्टारक सुमतिकीर्ति उनसे अतीव प्रसन्न थे और अपने योग्यतम शिष्य को पाकर अत्यधिक प्राशान्वित थे। इसलिये उन्होंने उन्हें अपना उत्तराधिकारी घोषित कर दिया। बागड़ देश में उन्होंने अपना पूरा प्रभुत्व स्थापित कर दिया।

डूंगरपुर के उस समय रावल आसकरणा शासक थे। वे नीति कुशल न्यायप्रिय शासक थे। उनके शासनकाल में जैनधर्म का चारों ओर प्रभाव था। नगर में अनेक संघपति थे जिनमें कान्हो, धर्मदास, रामो, भीम, शंकर, दिडो, कचरो, रायम आदि के नाम विशेषतः उल्लेखनीय हैं। इन्होंने नगर के बाहर महाराजा आसकरणा से क्षत्रक्षेत्रीय बावड़ी के लिये स्थान माँगा और एक महोत्सव के मध्य उसकी स्थापना की गयी। इस समय जो जलयात्रा का सुन्दर जलूस निकाला गया था उसका वर्णन भी अतीव सजीव एवं सुन्दर हुआ है।

संवत् १६३२ में इन्होंने भी एक विशेष महोत्सव में अपने ही शिष्य को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया और उसका नाम पद्मकीर्ति रखा। गुणकीर्ति ने इस समारोह को बड़ी धूमधाम से आयोजित किया। युवतियों ने मंगल गीत गाये। विविध प्रकार के बाजा बजे। देश के विभिन्न भागों से उस समारोह में भाग लेने के लिये सैकड़ों व्यक्ति आये।

शांतिदास

(४६)

ये कल्याणकीर्ति के शिष्य थे। बहुबलीबेलि इनकी प्रमुख रचना है जिसको लघु बाहुबली बेलि के नाम से लिखा गया है। इसमें २६ पद्य हैं। उक्त बेलि के अतिरिक्त इनकी अनन्तश्रव विद्यान्त, अनन्तनाथपूजा, क्षेत्र पूजा, भैरवमानभद्र पूजा आदि और भी लघु रचनायें मिलती हैं। हिन्दी के अतिरिक्त, संस्कृत में भी कुछ पूजा कृतियाँ मिलती हैं। लघु बाहुबली बेलि में इन्होंने अपना निम्न प्रकार परिचय दिया है—

भरतनरेश्वर आशीया नाम्यु निजवर शीस जी।

स्तवन करी इस जपरा हूँ किंकर तूँ ईस जी।

ईस तुमनि छाड़ीराज मभानि आपीउ।

इम कही भन्दिर गया सुन्दर ज्ञान भुक्ने व्यापीउ।

श्री कल्याणकीरति सोम मुरति, चरणदेव मिनाशि कइ।

शांतिदास स्वामी बाहुबलि सरण राखु प्रभु तुम्हवणी।

(अ) अर्घ कथानक-१, ५, ७, १३,

४०

अनेकार्थ कोश-५

अध्यात्म वत्तीसी-६

अध्यात्म फाग-६

अध्यात्म गीत-६

अष्ट प्रकारी जिन पूजा-६

अवस्थाष्टक-६

अजित नाथ के छन्द-६

अध्यात्म पद-६

अष्ट पदी मल्हार-६

अक्षर माला-१२

अंकलकयति रास-१५

अमर दत्त मित्रानन्द रासो-११

अर्गलपुर जिन वन्दना-२०

अम्बिका कथा-३३, ३४

अठारह नाता-३६

अध्यात्म कमल मार्तण्ड-२३

अंजना सुन्दरी-३६

अध्यात्म रस-२८

अध्यात्म वाचनी-४०

अनेक शास्त्र समुच्चय-४०

अभय कुमार प्रबन्ध-४१

अछाई गीत-५, ८, ६५, २०७

अंधोलडी गीत-५६, ६७, २१०

अजभारा पार्श्वनाथनी विनती

८३

अभय चन्द्र गीत-८६

अरहंत गीत-१०८

(आ) आदीश्वर-१६

आदित्यव्रत रास २०

आदित्यवार कथा-२३

आराधना गीत-३३, ३४

आरती गीत-५६, ६७, १६६

आदिनाथ विवाहलो-६२

आदीश्वरणी विनती-७८, ७९

आदीश्वरनु मन्त्र कल्याणक गीत-

८०

आदि पुरुष भजो आदि जिनेन्दा-

८३

आदिनाथ स्तवन-८३

आदिनाथ गीत-८५, ८४

आदिनाथनी धमाल-६०

आदि जिन विनती-१०८

(उ) उपादान निमित्त की चिट्ठी-६

उपासकाध्ययन-८९, ९०

(ए) एकीभाव स्तोत्र-२६

(क) कर्म प्रकृति विधान-६

कल्याण मन्दिर स्तोत्र-६

करम छत्तीसी-६

कृष्णजयावत हार-६, १०, ११

कक्का बत्तीसी-१०, ११

कर्म हिंडोलना-१२

कंवरपाल बत्तीसी-२८

कर्म घटवाली-३५

कनक कीर्ति के पद-३५

कुमति विध्वंसन चौपई-३६

कलावति रास-४०

(पद) कमल नयन करुणा निलय-

५०-५१

(पद) कारण कोउ पीया को न

जागै-५०

(पद) कहा ये मंडन कह कजरा नैन

भर-५०

कुमुद चन्द्र नी हमची-५७

- कौन सखी सुध ल्यावे क्याम
की-८३
- कुमुद चन्द्र गीत-११५
- क्रम काण्ड भाषा-१२०
- (ख) खटोलना गीत १३
- खिचड़ी रास-२०
- (ग) गोरखनाथ के वचन-६
- गुलाल पञ्चीसी-१०
- गीत परमार्थी-१३
- गूढ विनोद-३१
- गीतमस्वामी स्तोत्र-३४
- गोडी पार्श्वनाथ स्तवन-३७
- गुण आवनी-३६
- (पद) गोखि चढी जुए राजुल राणी
- नेमी कुवर घर जावे रे-५१
- गुर्वावली गीत-५५, ११५
- गीतम स्वामी चौपाई-५६, ६६,
२१४
- गीत-५६, ७८, ८५, ८६, ९०,
१०४, १२०, १८१, २०३,
२०५, २३०, २३२
- गुह गीत-५६, ११६, ११७,
२०४
- गुर्वावली-६०, ६२
- गणधर विनती-१०२
- (घ) घूँस कल्लोनी विनती-६०, ६४
- (च) चातुर्वर्ण-६
- चार नवीन पद-६
- चौरासी जाति की जयमाल-
१०, ११
- चतुर्गति वेलि-१४
- चहुँ गति वेलि-१४

- चारुदत्त प्रबन्ध-१४
- चम्पावती सील कल्याणक-२२
- चेतन गीत-२३
- चित्त निरोध कथा-२४
- चौबीस जिन सर्वश्या-३६
- चउबीस जिण गणधर वर्णन-४०
- चिन्तामणी पार्श्वनाथ गीत-५६,
६८, २००
- चौबीस तीर्थंकर देह प्रमाण
चौपाई-५६, ६६, २११
- चन्द्रा गीत-७८, २२४
- चिन्तामणि गीत-७५
- चिन्तामणि पारसनाथनु गीत-८६
- चूनडी गीत-६५, ६६
- चौपाई गीत-६८
- चन्द्रप्रभनी विनती-१०६
- चारित्र्य चुनडी-११०, ११३
- चौरासी लाख जीव जोनि विनती
११०
- (ज) जिनसहस्रनाम-६
- जलमालनक्रिया-१०
- जोगीरास-२०, २३
- जम्बूस्वामी चरित्र-२२, २३
- जखडी-२३, १२०
- जोगीरास मुनीश्वरों की जयमाल-
२३
- जम्बूस्वामी वेलि-२४
- जिन श्रान्तरा-२४
- जिनराज सूरि कृति संग्रह-३६
- जैसलमेर चैत्यप्रवाडी-४०
- जिनवर विनती-५६, १०८, २१६
- जन्म कल्याणक गीत-५६, ६७

जमो जिन पार्वनाथ भवतार-
८३

जसोधर गीत-६८

जिन जन्ममहोत्सव-१०६

जयकुमाराख्यान-११०, १११

(छ) छहलेखा वेलि

छन्दोविद्या-२३

छत्तीसी-३६

(झ) पद

भीलते कहा कर्यो यदुनाथ-५०

(त) टंडारण रास-२०

(ठ) दोलाभारु चौपई-३६

(त) तेरह काठिया-६

तीर्थङ्कर विनती-१६

तीर्थङ्कर चौबीसना छप्पय-२५

तत्त्वार्थ सूत्र भाषा टीका-३४,
३५

तेजसार रास-३६

(द) दश बोल-६

दश दानविधान-६

दश लक्षणा रास-२०

दोहा बावनी-२३

द्वादश भावना-३३, ३४

द्रौपदी रास-३४

देवराज बच्छराज चौपई-४८

(द) दश लक्षणा धर्मव्रत गीत-५८,
६५, २०६

दीवाली गीत-५६, ६८, २०१

दर्शनाष्टांग-१०६

दोहाशतक-१२०

(घ) ध्यान वत्तीसी-६

धर्म स्वरूप-१०

धर्म सहेली-१२

धर्म रास गीत-२३

(न) नाम माला-५

नाटक समयसार-५, १३

नवदुर्गा विधान-१

नाम निर्णय विधान-६

नवरत्न कवित्त-६

नवसेना विधान-६

नाटक समयसार के कवित्त-६

नवरस पद्यावली-५

नेमिनाथ रास-१३, २४, ३४

नेमिराजुल गीत-१४

नेमिश्वर गीत-१४, ५६, ६५,
६८, ११६, २३१

नेमिनाथ का बारह भासा-१४,
५१, ५८

नेमिराजुल संवाद-१६

नेमि जिनंद व्याहलो-२४

नेमिश्वर का बारह भासा-२४

नेमिश्वर राजुल की लहुरि-२४

नेमिनाथ समवसरत-३३, ३४

नेषध काव्य-३६

नवकार छन्द-३७

(पद) नेम हम कैसे चले गिरनार-५०

(पद) नेम जी दयालुडारे तू तो यादव
कुल सिखाजार-५१

(पद) नेमि तुम भावो धरिय धरे-५०

नेमिनाथ फागु-५१

नेमिनाथ विनती-५१

नेमि राजुल प्रकरण-५३

नेमिश्वर हमची-५८, ६३, ३३.

नेमिजिन गीत-५६, १६०, २०२

नेमिनाथ का द्वादशमासा-५६,

६३, १०२, १०४, १७४,

नेमिनाथनी गीत-६०

नेमि गीत-१०१, १०३, ११५,

११७, १४२

नयचक्र भाषा-११६

नेमिनाथ काव्य-१२१

(प) पंच पद विधान-६

पहेली-६

प्रश्नोत्तर दोहा-६

प्रश्नोत्तर माला-६

परमार्थ वचनिका-६

परमार्थहिंदोलना-६

परमार्थी दोहा शतक-१३

पंचम गीत वेलि-१४

पार्श्वनाथ छन्द-१४

पार्श्वनाथ रासो-१६, २०

पल्लवाङ्गा रास-२०

प्रबोध वाचनी-२३

पंचाध्यायी-२३

पंचास्तिकाव्य-२३

पाक्ष्ण्ड पंचास्तिका-२६

पार्श्व पुराण-३२

पवनदूत-३२

पार्श्वनाथ विनती-३३

पांडव पुराण-३३, ३४

पार्श्वनाथ की आरती-३५

पूज्य बाह्य गीत-३७

प्रीति छत्तीसी-४०

पार्श्वनाथ महात्म्य काव्य-४०

पार्श्वनाथ गीत-५६, ६५, ११५,

२०६

पद्मावती गीत-७८

पंच कल्याणक गीत-७८, ६५,

६८

(पद) गेहो उल्लो वीर राग मुख चन्द्र-

८३

(पद) पावन मति गात पद्मावती

पेयर्ता-८३

(प) प्रातः समये शुभ ध्यान धरीजे-

८३

प्रभाती गीत-८४

प्रभाती-८५, ८६, ६५, ६७,

२२८, २२९

प्रभाति (अभयचन्द्र)-८६

प्रभाति (शुभचन्द्र)-८६

पद्मावतीनी विनती-१०६

पद एवं गीत-१०६, १०८, १३४

पीहर सासडा गीत-१०८, १०९

प्रभाती गीत-११६

प्रवचन सार भाषा-११६, १२०

पञ्चास्तिकाय भाषा-१२०

परमात्म प्रकाश भाषा-१२०

पार्श्व गीत-१४६

(फ) फुटकर कविता-६, १०

फुटकर पद-१२

(ब) बनारसी विलास-५, ६, २६

बड़ा कक्का-१२

बत्तीसी-१२

बीस तीर्थङ्कर जखडी-१४

बाहुबलि गीत-१६

बघावा-१६

बंकुचल रास-१८

बारह भावना-२३

बालाबोध टीका-२३
 बाहुबलि बेलि-२४
 बाहुबलिनी छन्द-३३, ३४
 बारहखड़ी-३५
 बीस तीर्थश्रृंगर स्तुति-४०
 बलिभद्रनी विनती-५१, ५६,
 ११५
 बारहमासा-५२, १२६
 बणजारा गीत-५६, ६६, १६५
 बलभद्र गीत-७८, ८५
 बावनगजा गीत-८५, ८६
 बलिभद्र स्वामिना चन्द्रावली-८६
 बाहुबलीनी विनती-६०
 बीस विरहमान विनती-६०

(भ) भवसिन्धु अतुलशी-६
 भूपाल चौबीसी-२६
 भरत बाहुबलि छन्द-३४, ५८,
 ५६, १४६
 भविष्यदत्त कथा-३५
 भाषा कविरस मंजरी-३५
 भजन छत्तीसी-३८, ३६
 भरतेश्वर गीत-५८, ६५, ९०,
 २०८
 भट्टारक रत्नकीर्तिना पूजा-६८
 भूपाल स्तोत्र भाषा-१०६

(म) मार्गणा विचार-६
 मोक्ष पैडी-६
 मोहविवेक युद्ध-५, ७
 माँझा-५, ७
 मनराम विलास-१२
 मंगल गीत-१३
 मोरडा-१४

महापुराण कलिका-१७
 मृगाकलेखा चरित-२०
 मुगति रमणी वृन्तडी-२०
 मनकरहारास-२०
 मालीरास-२३
 मुनिश्वरों की जयमाल-२३
 मेघकुमार गीत-३५
 मोती कपासिया संवाद-३६
 मुनिपति चरित्र चौपई-३६
 मृगावती रास-३६
 मदन नारिक चौपई-३७
 मधवानल चौपई-३७
 मनप्रशंसा दोहा-३६
 महात्म्य रास-४०
 महावीर गीत-५१
 भल्लिदासनी बेल-६५, ६६
 मीणारे गीत-१०८
 मरकलडा गीत-११६
 मुनिभुवने गीत-१६०

(य) यशोधर चरित-१७, ३७, ३१,
 ३२

युक्ति प्रबोध-२७
 योग वाचनी-३७
 यशोधर गीत-६६
 यादुरासो-११६

(र) रविप्रत कथा-१८, १०६, १०७
 राजुल सज्जाय-२३
 रतनचूड़ चौपई-३६

(पद) राजुल गेहे नेमी जाय-५०
 (पद) राम सतावे रे मोही रावन-५०
 (पद) राम कहे घरर जया मोही भारी-
 ५७

- (पद) रथडो नीहानती रे पूछति-५०
 (पद्य) सहे सावन नी बार-५०
 रत्न कीर्ति गीत (भराठी)-८६,
 १०२
 रत्नचन्द्र गीत-८६
 रत्नकीर्तिना पूजा गीत-६५
 (ल) लघु बाहुबलि बोल-१५
 लघु सीता सतु-२०
 लाटी संहिता-२३
 लोहणपार्श्वनाथनी वीनती-५६,
 ६६, २१७
 लांछण गीत-७८
 लघु गीत-११५
 लाल पछेडी गीत-११७
 (व) वेद निर्णय पंचासिका-६
 वैद्य आदि के भेद-६
 विवेक चौपई-६, १०
 वर्धमान समोसरण वर्णन-१०
 वर्धमानरास-१८
 वसुदेव प्रबन्ध-१८
 बीर विलास फाग-२४
 वैद्य विरहिणी प्रबन्ध-३६
 व्यसन छत्तीसी-४०
 वैराग्य शतक-४०
 बीर विजय सम्भेद शिखर चैत्य
 परिपाटी-४०
 (पद्य) वंदेह जनता शरणां-५०, ५१
 (पद) वृषभ जिन सेवो बहु प्रकार-५०
 (पद्य) बरज्यो न माने नयन निठोर-५०
 (पद्य) बणारसी नगरी नो राजा अश्वसेन
 का गुणधार-५१
 व्यसन सातन् गीत-५८, ६५,
 २०६
 वासपूज्यनी धमाल-७८
 विभिन्न पद-७८
 वासुपूज्य जिन विनती-सुराणो वासु
 पूज्य मेरी विनती-८३
 वृषभ गीत-८५
 विद्यानन्दिगीत-६५, ६७
 त्रिषपहार स्तोत्र भाषा-१०६
 वरिणमडा गीत-१०८
 (स) सूक्ति मुक्तावलि-६, २८
 साधु वन्दना-६
 सोलह तिथि-६
 सुमति देवी का अष्टोत्तर शत
 नाम-६
 समवसरण स्तोत्र-१०
 समवसरण पाठ-१३
 सज्जन प्रकाश दोहा-१७
 सीता शील पताका गुण बेलि-१८
 सीता सुत-२०
 सरस्वती जयमाल-२३
 समयसार नाटक-२३
 संक्षेप सत्ताणु-२४
 सीमंधर-स्वामी गीत-२४
 सगर प्रबन्ध-२५
 समकित बत्तीसी-२६
 सुक्ति मुक्तावली-२८
 सुन्दर सप्तसई-२६
 सुन्दर विलास-२६
 सम्यकरव बत्तीसी-२८
 सुन्दर शृंगार-२६, ३०
 सहेली गीत-२६
 सुदर्शन सेठ कथा-३१
 सुलोचना चरित्र-३३
 सम्यकरव कीमुदी-३६

सिंहासन बत्तीसी-३६

सोलह स्वप्न सज्जाय-३६

(स) सीता राम चौपाई-३६

समयसुन्दर कुसुमाञ्जलि-३६

सावित्रद्वयुमन चौपाई-३६

स्थूलिभद्र रास-३६, ३७

स्तम्भन पार्श्वनाथ स्तवन-३७

सुदर्शन श्रेष्ठिरास-४०

(पद) सारंग ऊपर सारंग सोहे सार-

गत्यासार जी-५०

(पद) सुण रे नेमि सामलीया साहेब

क्यों बर छोरी जाय-५०

(पद) सारंग सजी सारंग पर आवे-५०

“ सखी री सावन घटाई सतावे-५०

“ सरद की रयनि सुन्दर सोहात-५०

“ सुन्दरी सकल सिंगार करे गोरी-
५०

“ सुनो मेरी सयनी धन्य या रयनी
रे-५०

“ सखी को मिलावो नेम नरिदा-५१

“ सखी री नेम न जानी पीर-५१

“ सुणि सखी राजुल कहे हैडे हरष
न माम लाल रे-५१

“ सुदर्शन नाम के मैं बारि-५१

“ सशधर बदन सोहमणि रे, गज
गामिनी गुणमाल रे-५१

सिद्ध धूल-५१

संकट हर पार्श्वनाथनी विकती-
५६, २१४

सूखडी-७४, ७६

संघवई हरिजी गीत-८६

संघ गीत-६५, ६७

संकट हर पार्श्वनाथ जिन गीत-
६५, ६८

(स) साधमी गीत-१०२, १०३

सोलह स्वप्न-१०६, १०७

सप्त व्यसन सर्वग्या-१०३

सुकुमाल स्वामिनी रास-१०७

सोसहकारण रास-११०

(ह) होली की कथा-२३

हनुमच्चरित-२५

हंसा गीत-२५

हरिचंश पुराण भाषा (पद्य)-२२

हरिमाली-३६

हिन्दोलना गीत-५८, ३४, १६१

हरिमाली-१०२

(श) शलाका पुरुषों की नामावली-६

शिव पञ्चीसी-६

शारदाष्टक-६

शान्तिनाथ जिन स्तुति-६

शान्तिनाथ चरित-१७

शील सुन्दरी प्रबन्ध-१२

शत्रुञ्जय रास-३६

शालिभद्र चौपाई-३६

शत्रुञ्जय-४०

शील गीत-५६, ६८, ३६७

शान्तिनाथ नी जिनती-७८, ११५

शुभचन्द्र हमची-८०, ६०, ६१,
२२६

शान्ति नाथनु भवान्तर गीत-८६

शुभचन्द्र गीत-८६

शीतलनाथ गीत-११५

(ष) षट दर्शनाष्टक-६

(अ) श्रीरामक प्रवचन-१५

श्रीपाल चरित्र-३१, ३२

श्रीपाल सौभाग्यी आश्वान-३२

श्रुतसागरी टीका-३४

श्रीपाल स्तुति-६५

शृंगार रस-३८

श्री रागगावत सुर किन्नरी-५१

श्री रागगावत सारंगधरी-५१

श्री जिन सममति अवतर्या

ना रंगीरे-५१

शृषम विवाहलो-५८, १६२

शैवपाल गीत-६५, ६८, १०१

(क) नेपन क्रिया-१०, १४

नेपन क्रिया विनती-५८, ६२

त्रय्यरति गीत-५८, ६४, १६२

(ख) ज्ञान बावनी-६

ज्ञान पञ्चवीसी-६

ज्ञान सूर्योदय नाटक-३२

नामानुक्रमिका

- अकलंक-४४
 अकवर-१, १७, १८, २२, ३१, ३६, ४१
 अकम्पन-१११
 अणरचन्द नाहुटा-३८
 अर्ककीर्ति-१११, ११२
 अमर कुमार-१५
 अमरवत्त मिश्रा-१८
 अमरसिंह-२८
 ब्रह्म अजीत-३, २४
 पण्डित अमरसी-८८
 अजितनाथ-२११
 अभीष्ट-८८
 पं० अनन्तदास-८८
 अरनाथ-२१३
 अभयराज-२६, २७
 अक्षयराज-४
 अभयनन्दि-४२, ४३, ७४, ६६, १००,
 १०२, १०३, १०४, १०५,
 १०७, ११३, ११६, १३८,
 १८३, १४६, २२५
 भट्टारक अभयचन्द्र-३, ७२, ७५, ७६,
 ७७, ७८, ८०, ८१, ८८,
 ८९, ९०, ९१, ९२, ९३,
 ९४, १०५, १०६, १०७,
 १०८, ११६, ११७, ११८,
 ११९, १२६, १४६, १३३,
 २२५, २२७, २२८, २२९,
 २३१, २३२
 अभयकुमार-४१, ४३, ४४, १२७
 अवसेन-१४६
 संघवी अखई-८७, ८८, १०६
 अम्बाई-८७
 अभिचन्द्र-१०५
 अभिनन्दन देव-२११, २२१
 संघवी आसवा-४३
 आनन्द सागर-८२, १०६
 भगवान मादिनाथ-१६, ६२, ६६, ७६,
 ८०, ८३, ८५, ८४, ११३,
 १६६, १७१
 आसकरणा-३१
 उदय सागर-३७
 उदय राज-४, ३८
 उदय सेन-१६
 महाराजा उदयसिंह-३८
 उग्रसेन-१२१, १२३, १७७, १७८
 भ० कनक कीर्ति-४, ६४
 भ० कल्याण कीर्ति-३, १४, १५, १६
 ब्रह्म कपूरचन्द्र-३, ६०
 कल्याण सागर-४, १०६
 कबीर-६६
 संघपति कहानजी-५७, २०४
 भगवान कृष्ण-२, ५०, ५३, ५४, ८५
 कालीदास-३४, ७८
 भट्टारक कुमुदचन्द्र-३, ४, ४७, ५५, ५६,
 ५६, ५८, ५९, ६०, ६२, ६३,
 ६६, ७१, ७२, ७३, ७४,
 ७५, ८१, ८३, ८४, १०१,
 १०२, १०५, १०६, १०७,
 १०८, ११०, ११३, ११४,
 ११५, ११६, ११७, ११८,

११६, १६१, १६५, १६६,
१७०, १७२, १७५, १८१,
१८२, १८३, १८४, १८५,
१८६, १८७, १८८, १८९,
१९०, १९१, १९६, १९९,
२००, २०१, २०२, २०३,
२०४, २०५, २०६, २१७,
२०८, २०९, २१०, २११,
२१४, २१५, २१७, २२०,
२२१, २२२, २२३, २२५,
२२८, २२९, २३०, २३१,
२३२, २७६

कुमुदकीर्ति-१

कुंभरपाल-४, २७, २८

आचार्य कुन्दकुन्द-२३, ४२, ७४

भ० कुंथनाथ-२१३

कुशललाभ-४, ३७

कीर्त्तिसिंह-६

किशानचन्द्र-२०

स्वरगसेन-५, २८

खेता-१७

खेतसिंह-२३

खेतसी-६, २४

कवि गणेश-४, ४३, ४४, ४५, ४७,

५७, ७६, ८२, ८६, १००,

१०१, १०२, ११०, २२६

गणेश सागर-७२

गणिसहानन्द-४, ३६

गोगजी-८१

ब्रह्म गुलाल-३, ६

गुराभूषण-१४६

ग्यासदीन-६३

गुणचन्द्र-२०

गुणकीर्ति-१

गुरुचरण-१५

गोविन्द दास-१७,

गोपाल-४, ४६, ५७, ६७, ११६,
२०४,

गोलम-४६, ६६, १४६, २०१, २०७

आचार्य चन्द्रकीर्ति-१, ४, ११०,
११३, ११४

चन्द्रभास-२१२,

चन्द्रप्रभ-११३

चन्दन चौधरी-३१,

चन्दा-३०

चारुदत्त ६५, २०७

छीतर ठोलिया-२, २३

ब्रह्म जयसागर-४१, ४७, ७२, ८२,
६५, ६६, ६७, ६८, ११०

जयकुमार-१११, ११२

जगजीवन-४, ६, २५, २६, २७,
८१, २२७

जफरखां-२७

आ० जयकीर्ति-३, १८, १९

जगदाश-२२३

पाण्डे जिनदास-३, ४, २२, २३

जिनचन्द्र सूरी-३४, ३५, ३६

जिनराज सूरी-४, ३६

जहाँगीर-१, १८

राजा जसबन्तसिंह-२०

जिनचन्द्र-६७

आचार्य जिनहंस-४१

जिनसागर-३१,

जीवराज-८८,

जीवधर-८१, ११०

जीवादे-८८

- जोगीदास-२३
जैमल-४५
जैनन्द-३, १७, १८
भट्टारक जगभूषण-६, २८
भट्टारक ज्ञानभूषण-३२, ३४, १०६
टोडरशाह-२२
ठाकुर-३, १७
तेजबाई-४८, ६७, १००
तानसेन-१
महाकवि तुलसीदास-१, २, ५०,
६६, ७३
दयासागर-३७,
दामो-४, ३७
दामोदर-४, ४७, ७५, ७६, ७७,
१०५, १०६
भट्टारक देवेन्द्र कीर्ति-१, ३, १७,
मुनि देव कीर्ति-१४, १६
देवीदास-४२, ६६
देवदास-११६,
देवजी-७६, ७७
दीपाशाह-२२,
दीनदयाल-७०
धर्मदास-१७
ब्रह्म धर्म रूचि-१०७
धर्मसागर-४, २७, ७७, ८६,
१०६, ११७, ११८,
११९, २३१, २३२
धर्मभूषण-८१, २२७,
धर्मभूषण सूरी-२२८
धर्मचन्द्र-४, ११५,
धर्मनाथ-२१३
ब्रह्म धर्मा-४
धरणेन्द्र-१४६, २२२
धनमल-२७
धनजय कवि-५
धन्नासाह-४
आचार्य नरेन्द्र कीर्ति-३, २५
नरहरि-१
नवलराम-८०
संधवी नागजी-७५, १०५
नेमचन्द्र-२१
निष्कलंक-४४
नेगीदास-२२, २३
भगवान नेमिनाथ-३, ६, २४, २५,
४१, ४८, ४९,
५१, ५२, ५३,
५४, ५६, ६३,
६४, ७६, ८६,
८८, १०३, १०४,
१०५, ११७, ११८,
११९, १२२, १२३,
१३०, १३३, १३८,
१४२, १५३, १७७,
१८०, १८५, १८५,
२१४,
पं० नाथूराम प्रेमी-२३, २८, ३३
नाभिराजा-६२, १६२
भट्टारक पद्मनन्दि-१४, १६, १७,
६८, १०८, ११३
परिमल्ल-४, ३१
पद्मप्रभ-भगवान-२२१
पद्मावती देवी-१०७, १४७
पद्मराज-३, ४१,
परिहानन्द-३०

परमातन्द-२२५

पापर्वनाथ भगवान्-२१, २२, ६६,
५८, ६६, ७६,
१४६

संघपति पाकशाह-४३

पद्याबाई-५५, १०१, ११५

पुष्पदन्त भगवान्-२१२, २२१

पुष्पसागर-४१,

प्रेमचन्द-८७,

डा० प्रेमसागर जैन-६, १० २२,
२६, २६ ३०,
३४

संघपति प्रेमजी-८१

प्रभचन्द-१६

बनारसीदास-१, २, ४, ५, ६, ६,
११, १३ २३, २५,
२६, २७, २८, ४०,

पण्डित बरणायग-८८

बल्लभ दास-८८

बलभद-८५, १४७, १७७

बाघजी-७१

बाहुबलि-१५, ५६, ६०, ६१, ६२,
६६, १४६, १५०, १५१,
१५३, १५४, १५५, १५७,
१४८, १५६, १६०, १६१,
१७१

ब्रह्मी-१५० १७१

बिहारीदास-१२

ब्रह्मा-८६

बेजलेद-४६

भगवतीदास-३, ३६, २०, २७

भवालदास-२७

भीमजी-७५,

भरत-५६, ६०, ६२, १११, १४६,
१५०, १५४, १५५, १५६,
१५८, १५६, १६०, १७१

भद्रसार-३८

भरतेश्वर-६४

मतिसागर-१५१

मरुदेवी-१६२, १६३, १६४, १६३

मल्लजी-८१

महावीर भगवान्-१८, ६७, ६८,
२०१, २१४, २२१,

मल्लिदास-४६, ५७, ६१, ६७,
२३०,

मल्लि भूषण-४३, १०८, ११३,
१४६, २२८

महीचन्द-१६

मनराम-३, ११

महेन्द्रगोन-२०

संघवी मथुरा दास-२७

मथुरा भल-६

मानसिंह मान्-४, ३७

राजा मानसिंह-१७, २३, ३१

मारिक दे-८०

माली राम-२३

मान बाई-४६

माल जी-७५

माणिक जी-८७

मोहनदास-२२, ७७

मीरा-३, ५३, ५४, ६६, ७३, ८३

मोहनसिंह-८७

मोहनदे-२६, २७, ६६

डा. मोतीचन्द्र-५

महोपाध्याय मेघ विजय-२७	१६६, २०५, २०८,
मेघसागर-४, ११६	२१०, २१७, २२५,
मेघजी-७५	२२८, २२९, २३०,
यशोमति-१४६, १५०, १६६	राजबाई-४६, ६६, ६७
यशोधर-१७, ६८	राजुल-४८, ४९, ५१, ५२, ५३,
यशः कीर्ति-१८, १९, १२६	५४, ६३, ६४, ७१, ७८,
रहीम-१	७९, १०३, १०४, ११७,
भट्टारक रत्नचन्द्र-३, ७४, ७७, ८४	११९, १२१, १२२, १२३,
८५, ८६, ८७, ८८,	११४, १३१, १६४, १३५,
८९, ९०, ९१,	१४०, १४१, १४२, १४३,
९२, ९५	१८०
भट्टारक रत्न कीर्ति-१, ३, ४, १४,	ब्रह्म रायमल्ल-४, २५
४२, ४३, ४४,	रत्नसागर-३६
४५, ४६, ४७,	रत्नाकर-३८
४८, ४९ ५०,	रत्नभूषण-१८
५१, ५२, ५४,	भगवान् राम-२, २७, ४९, ५०,
५५, ५६, ५८,	१३५, १३६
६३, ६६, ६७,	मुनि राजचन्द्र-३, २२
७१, ७४, ७५,	रावण-२०७
८८, ८९, ९०,	संघजी रामाजी-४३, ६०, १०४
९३, ९४, ९५,	राधक-४, ४७, ११५, ११६
९६, ९७, ९८,	भट्टारक रामकीर्ति-१६, १८
९९, १००, १०१,	महाराजा रायसिंह-३८
१०२, १०४, १०५,	राजमति-६६, १३९
१०६, ११०, ११३,	रिखवदास-२२
११४, ११५, ११६,	रत्नहर्ष-३६
१२६, १३३, १३४,	रामाबाई-८७
१३५, १३६, १३७,	रामजीनन्दन-८१
१३८, १३९, १४०,	रामदेवजी-७६
१४१, १४२, १४३,	पांडे राजमल्ल-३, ४, ५, २३
१४४, १४५, १४६,	रुपजी-७५
१४७, १४८, १४९,	रुपचन्द्रजी-३, ४, १३, २२, ११९
१७३, १७५, १९३,	

- ब्रह्मा रुचि-१०६
 रामदास-३१
 लक्ष्मणदास-२२
 लक्ष्मीचन्द्र-१, २४, ४२, ७४, ८३,
 १०५, १०७, १०८, ११३,
 १४६, १७३, २२५, २२८
 वर्धमान-३, १८, ८१, २२७
 भट्टारक बादि भूषण-१८, २५
 बादिवन्द्र-४, ३२, ३३, ३४
 भट्टारक विनाल कीर्ति-१७
 विष्णु कवि-४
 विक्रम-१०, १७
 विश्वसेन-८६
 विमलदास-८८
 विजयसेन-१६
 विजयाकर-१६
 विद्यासागर-४, ८२, १०६, १०७
 विद्यानन्दि-२५, ३२, १०८, ११३,
 १४६
 भट्टारक वीरचन्द्र-३, २४, ३४
 वीरसिंह-२४
 विद्या हर्ष-३६
 वीरबाई-८८
 शिवभूति-२०७
 भट्टारक शुभचन्द्र-३, ७४, ८०, ८१,
 ८२, ८३, ८४, ८६,
 ८८, ८९, ९०, ९१,
 ९२, ९३, १०६,
 २२५, २२६, २२८
 शाहजहाँ-१, २, २६, ३६
 शांतिदास-१५, २२
 भगवान् शांतिनाथ-१७, ७६, ११०
 २१३
 संघवी शांति-८७
 भगवान् शीतलनाथ-२१२
 शिवा देवी-१२१
 भट्टारक सकल कीर्ति-१, १६
 समयसुन्दर-४, ३०
 सहजकीर्ति-४, ४६
 सहेज सागर-८०, ८१
 भ. सकल भूषण-२५
 शाहजादा सलीम-४०
 ब्रह्म सागर-७२
 सदाफल-५५, ११५
 समुद्र विजय-१२१, १३६, १४२,
 १७८
 सहजलेख-४१, ८८
 सहस्रकरण-५७
 सिद्धार्थनन्दन-६७
 सूरदास-१, २, ३, ५०, ५४, ६६
 ७३, ८३
 संभवनाथ-२११
 समय सागर-४, ५२, ७२, ११०,
 ११४, ११५, २३०,
 २३१
 सालिवाहन-४, २८
 सुन्दरदास-४, २८, २९
 सुमति सागर-४, १०२, १०३, १०४
 १०५
 सोमकीर्ति-१८, १९
 सागरदत्त-२१७
 सुलोचना-१११, ११२
 सुदर्शन-१७
 सुरेन्द्र कीर्ति-२५
 सुभति कीर्ति-१

सुतन्दा-१५०, १७१
 सुकुमाल स्वामी-१०७
 सुमतिनाथ-२१२
 हर्षकीर्ति-३, १४
 ब्रह्म हरखा-१८
 हर्षप्रभ-३५
 हीरकलश-४, ३५
 हीरराज-६७
 हीरानन्द-४, २६, २७, ४०, ४१
 पांडे हेमराज-४, २७, ११६
 हीर जी-८१
 हेम विजय-४, ४१
 आचार्य हेमनन्दन-३६

हीर मिजरा घुरी-३३, ५१
 हेम जी-७५
 हेमचन्द्र-८७
 डा. हीरालाल माहेश्वरी-३६
 राजा श्री निष्क-१५, १६, १६, ६७
 श्रीपाल-७४, ७७, ८०, ८२, ८४,
 ८८, ८९, ९०, ९१, ९२,
 ९३, ९४, ९५, १०५,
 १०६, ११६, २२८, २२९,
 २३२
 क्षेमकीर्ति-१८
 भट्टारक त्रिभुवन कीर्ति-१८, १६, २
 डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी-३७

ग्राम एवं नगर

अंकलेश्वर नगर-८६
 अजमेर-११, २०, ३१
 अम्बाला-१६
 अलीगंज-११
 आमेर-१, १४, १७, २३, २५, ३२
 आनन्दपुर-२०, २१
 आरा-३६
 आगरा-३, ६, ६, १८, १६, २०,
 २३, २५, २६, २७, २८,
 ३१, ३६, ४०
 उदयपुर-१८, २२, २५, ३३, ३७
 कंचनपुर-२८
 काशी-१५४
 केरल-१५३
 कोशल नगर-६२, १६०, १६२
 कोटा-१४, १६, १८, ३३
 इन्दरगढ़-१४
 गलिवाकोट-४५
 ग्वालियर-१०, ३०, ३१
 गंग-११
 गुजरात-२, ४, १८, ४२, ४४, ५२,
 ५५, ५६, ७२, ७३, ८०,
 ६५, ६७, ११०
 गिरिनार-११, ५८, ६७, १४१
 गोपुर ग्राम-५५
 गौमुना ग्राम-३०
 घोषा नगर-४२, ४५, ५३, ५८, ६२,
 ६५, ६८, ६६, १०८,
 ११६, १६१, १७३

चन्दबाद-६,
 चाँदनपुर-१४
 चूलगिरि-८६
 जयपुर-११, १२, १४, २४, २५,
 २६, ३१, ११६
 जलसेन नगर-८०
 जालंधर-१५३
 जालणा नगर-४३, १०१
 जालौर-३७
 जैसलमेर-२८, ३४, ४१
 जोधपुर-३८
 जूनागढ़-११
 टोंक-२०
 डूंगरपुर-१७, ३३, ३४, ११०
 डूँडाहड़ प्रदेश-३, ३४
 देहली-२, १६, २०, २६, ३५,
 ११८, ११६
 दीसा-२६
 दाढ़ू नगर-४५
 द्वारिका-१४७
 नरसिंहपुरा-१६
 नेपाल-१५३
 नागौर-१, ३५
 नंदीश्वर-२०७
 पाटन-३२
 पोरबन्दर-४५, ६१
 पोदनपुर-६०, १५२
 फतेहपुर-१५, २४
 कलसाड़ नगर-४६, ६६
 बनारस-८६

बडौत-२२

बारडोली-४७, ४५, ५६, ५७, ५८,
७२, ७५, १०१, १०५,
११०, १११, ११३, ११७,
२०५

बागड़ प्रदेश-१५, २८, २९, ४४,
४५, ५५, ७३, ७८

बासवाड़ा-४५

बिराट नगर-२३

बीकानेर-३०, ३४

भडोच-२५, ११०

भदावर प्रान्त-२८

भृगुकच्छपुर-२५

भीलोड़ा ग्राम-१४

भगध-१५३

महावीरजी-१४

भयुरा-३०

मध्य प्रदेश-२

महुआ नगर-१७

मेवाड़-३

मालपुरा-२०

मोजमाबाद-२३

मोरड़ा-१४

राजगृह-१९

राजसमन्त-२, ३, २०, ३०, ४०,
४४, ५६, ५९, ६३, ११०

राजिनगर-८७

रामपुर नगर-३९

लवाण-१७

लंका-१५४

लाह देश-६६

वाल्हीक नगर-३२

वाराणसी-१११, २१६

शत्रुजय-४०, ९७

शिवपुर-१०९

सांगानेर-३, ६१

सांचोर-३६

सूरत नगर-९, ७७, ७८, ९०, ९२

हरियाणा-२

हस्तिनापुर-१०

हांसोट नगर-५२, ६६, ९८, २०९

श्रीपुर-८१